साहित्य अमृत
मासिक

वर्ष-२३ अंक-७ ❖ पृष्ठ ८८ | फाल्गुन, संवत्-२०७४ | फरवरी २०१८

संस्थापक संपादक
स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र

पूर्व संपादक
स्व. डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

संपादक
त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

प्रबंध संपादक
श्यामसुंदर

संयुक्त संपादक
डॉ. हेमंत कुकरेती

कार्यालय
४/१९, आसफ अली रोड,
नई दिल्ली-११०००२
फोन : २३२८९७७७ • फैक्स : २३२५३२३३
इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

शुल्क
एक अंक —₹ ३०
वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००
वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००
विदेश में
एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)
वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी श्यामसुंदर द्वारा
४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२
से प्रकाशित एवं ग्राफिक वर्ल्ड, १६८६,
कूचा दखनीराय, दरियागंज, नई दिल्ली-२ द्वारा मुद्रित।

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

इस अंक में

संपादकीय
१९८४ : भारत का अपराध-बोध ४

प्रतिस्मृति
अंदमान के बंदीगृह में/ *विनायक दामोदर सावरकर* ९

आलेख
प्रेम की अनन्य पुजारिन मीरा/ *राहुल* १३
हिंदू पेट्रियट और अमृतबाजार पत्रिका/ *ऊषा निगम* २२
उपनयन एक सार्थक संस्कार/ *नताशा अरोड़ा* ३४

कहानी
सियाचीन का पेड़/ *जसबीर चावला* १७
राख के नीचे/ *तुलसी देवी तिवारी* १८
अंधी गुफा/ *राकेश भ्रमर* २५
कलई/ *अशोक गुजराती* ३२
ऊँचे-नीचे रास्ते/ *एम.डी. मिश्रा 'आनंद'* ३७
थैंक्यू पापा/ *दिनेश बैस* ४७
दहेज ऐक्ट/ *राहिला रईस* ५३
बसंती दादी/ *मनमोहन गुप्ता* ५८
पत्थर/ *लवलेश दत्त* ६५

लघुकथा
खनक/ *लता कादंबरी* २४
राम-साम सा!/ *लता कादंबरी* ४९
अमृतपान/ *लता कादंबरी* ७१

कविता
सिहर गए गात/ *अविनाश ब्यौहार 'उमरिया पान'* २९
चक्रधारी हाथ/ *'शैलांचली' सुशील बुड़ाकोटी* ३१
सब बे अर्थ/ *नाथूराम राठौर* ३३
कहीं कुछ नहीं बदला/ *प्रेमशंकर भट्ट* ४१
बर्फ गिरी इस बार/ *दयाकृष्ण विजयवर्गीय 'विजय'* ४२
राही के तीर/ *राजेश जैन 'राही'* ७८

व्यंग्य
हे भगवान्, हर साल नोटबंदी होती रहे/ *हरि जोशी* ३०

राम झरोखे बैठ के
संस्कार स्कूल ऑफ हिंदुस्तान/ *गोपाल चतुर्वेदी* ५०

साहित्य का भारतीय परिपार्श्व
नोमिनी/ *केशुभाई देसाई* ५६

ललित-निबंध
वसंत फिर आ गया/ *हेमराज मीणा दिवाकर* ६४

साहित्य का विश्व परिपार्श्व
प्रेत/ *अंतोन चेखव* ६२

लोक-साहित्य
कन्नड़ देवरगुड्डों के काव्य/ *बी.वाई. ललितांबा* ६८

यात्रा-संस्मरण
उत्तर-पूर्व की यात्रा/ *राजेश जैन* ७२

बाल-संसार
दादी का चश्मा/ *अब्दुल रशीद पठान* ५७
पीले पंखोंवाली तितली/ *मोहम्मद साजिद खान* ७६

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ७९
वर्ग-पहेली ८०
साहित्यिक गतिविधियाँ ८१

संपादकीय

१९८४ : भारत का अपराध-बोध

पूर्व प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी की उनके अपने दो सिख अंगरक्षकों के द्वारा हत्या के उपरांत दिल्ली तथा देश के कुछ अन्य शहरों और कस्बों में सिख समुदाय पर जिस प्रकार के अत्याचार हुए, वह भारत के समकालीन इतिहास का एक काला पन्ना है। उसके विषय में बहुत कुछ लिखा गया है। कुछ समय पहले २०१५ में 'इंडियन एक्सप्रेस' में पत्रकार रहे संजय सूरी की पुस्तक '१९८४ : द एंटी सिख वायलेंस ऐंड आफ्टर' प्रकाशित हुई और इसकी चर्चा इस स्तंभ में भी की गई थी। सूरी ने जो देखा और सुना था, पुस्तक में उसका तथ्यात्मक वर्णन किया। प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में छोटे-छोटे मामलों और पुस्तकों के बारे में बड़ी-बड़ी चर्चाएँ होती हैं, पर वह पुस्तक अनदेखी ही रही। ऐसे मामलों में कह दिया जाता है कि गड़े मुरदों को उखाड़ने से क्या फायदा है। किसी हद तक यह सही भी है, किंतु कुछ घटनाएँ ऐसी होती हैं, जिनका प्रभाव राष्ट्रीय मन-मस्तिष्क पर इतना गहरा और गंभीर होता है कि उसकी प्रतिध्वनि समय-समय पर सुनाई देती है। हाल ही में कनाडा और अमरीका में भारत के प्रतिनिधियों पर कई गुरुद्वारों द्वारा रोक लगा दी गई, जो अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण है। कुछ सिरफिरे सिख अतिवादियों ने समुदाय को गुमराह करने की कोशिश की, उनके दुष्कर्मों के कारण अन्य निर्दोष लोगों को तरह-तरह की यातनाएँ सहनी पड़ीं। उस वातावरण का निर्माण करने की जिम्मेदारी पूरी तरह ऐसे अवांछनीय तत्त्वों की है। दो गुमराह सिख मतावलंबियों के कारण निरीह और निर्दोष लोगों पर अत्याचार हों और उनको हर प्रकार की मुसीबत झेलनी पड़े, यह एक सभ्य समाज को कभी स्वीकार नहीं हो सकता।

हाँ, अपराधियों को दंड मिलना चाहिए, पर उसका खामियाजा निर्दोष महिलाओं, बालकों-बालिकाओं और सिख समुदाय के दूसरे लोगों को भुगतना पड़े, यह कहाँ तक उचित है। ऐसे कुछ भुक्तभोगी और मानव अधिकारों के प्रबल समर्थक कुछ लोग इतना समय बीत जाने पर भी न्याय की गुहार लगा रहे हैं। सर्वोच्च न्यायालय ने १८६ मामलों की जाँच-पड़ताल के लिए नई स्पेशल इन्वेस्टिगेशन टीम (एस.आई.टी.) उच्च न्यायालय के एक सेवानिवृत्त न्यायाधीश की अध्यक्षता में गठित की है। उस दौरान सिखों पर जो अत्याचार हुए, उनको बहुतों ने नरसंहार की संज्ञा दी है। हम इससे सहमत नहीं हैं, क्योंकि जो कुछ हुआ, उसका भारतीय नागरिकों ने विरोध भी किया। वे सिख भाइयों के शौर्य और बलिदान के प्रशंसक हैं। सिख गुरु आदर के पात्र हैं। यह सबकुछ उन लोगों के षड्यंत्र के कारण हुआ, जिन्होंने उस समय के भावनात्मक वातावरण को भड़काया और भ्रमित किया, परिणामस्वरूप यह कलंक का टीका देश के माथे पर लगा।

रूपा पब्लिकेशंस द्वारा '१९८४ इंडिया'ज गिल्टी सीक्रेट' पुस्तक प्रकाशित हुई है, जिसके लेखक एक पत्रकार पव सिंह हैं, जिनके पूर्वज पंजाब से इंग्लैंड चले गए थे। सन् २००४ में उन्होंने एक साल भारत में इस विषय पर शोध किया, बहुत से भुक्तभोगी परिवारों से मिले, उनकी दुःख की दास्तानें-कहानियाँ सुनीं, अपने पैतृक गाँव में गए, जहाँ उन्होंने अपने और परिवार के सदस्यों से भी उनके कटु अनुभवों की जानकारी ली। शोध पर आधारित यह पुस्तक एक आधिकारिक व ऐतिहासिक दस्तावेज है। लेखक पव सिंह ने पंजाब समस्या की पृष्ठभूमि प्रस्तुत की, भिंडरावाला के उदय में कांग्रेस का समर्थन रहा, पर अंत में उसने अपनी स्वतंत्र अस्मिता बना ली। अकालियों से केंद्र सरकार की समझौते की बातचीत हुई, किंतु अंत में असफलता और आपसी अविश्वास का वातावरण उत्पन्न हुआ एवं अकाल तख्त और स्वर्ण मंदिर में सैनिक काररवाई तथा उससे उत्पन्न सिख समुदाय का विवाद आदि-आदि विषयों पर उन्होंने अपनी समझ के अनुसार कलम चलाई है, परंतु श्रीमती गांधी की हत्या के उपरांत कुछ गिरोहों जो ने कत्लेआम किया, पुस्तक में विस्तार से उसकी चर्चा है। इस पुस्तक में रोंगटे खड़े करनेवाली तसवीरें हैं। लेखक के अनुसार यह सब कांग्रेस के नेताओं की साजिश से हुआ। उन्होंने हरकृष्ण लाल भगत को इसका मुखिया बताया और टाइटलर, धर्मदास शास्त्री, ललित माकन, सज्जन कुमार आदि को सक्रिय रूप से सिख मोहल्लों-परिवारों आदि में मारपीट, हत्याएँ, आगजनी आदि के लिए जिम्मेदार ठहराया है तथा उनके खिलाफ सबूत पेश किए हैं। उनका आरोप है कि सिख महिलाओं का एक बड़े स्तर पर उत्पीड़न हुआ। यौन शोषण की शिकायतें हैं।

तत्कालीन गृहमंत्री नरसिंह राव प्रधानमंत्री कार्यालय के आदेश के कारण निष्क्रिय रहे, हालाँकि बहुत से नेताओं ने उन्हें इस विषय में आगाह किया। मार्शल ऑफ द इंडियन फोर्स अर्जन सिंह, जनरल जगजीत सिंह अरोड़ा, आई.के. गुजराल ने अपनी चिंताएँ व्यक्त करने के लिए प्रधानमंत्री राजीव गांधी से समय माँगा, किंतु दो घंटे इंतजार के बाद भी बैठक न हो सकी। बदले की भावना को बढ़ाने के कैसे-कैसे प्रयत्न हुए। दिल्ली पुलिस के सिख जवानों से हथियार रखवा लिये गए। गैर-सरकारी समितियों की रिपोर्टों से स्पष्ट है कि कैसे और क्यों सरकार अकर्मण्य रही। जो जाँच समितियाँ सरकार ने बैठाईं, उनके काम में रोड़े अटकाए गए या उन्हें भंग कर दिया गया। पुस्तक में अधिकारियों की मिलीभगत का जिक्र है। कई जगह कुछ प्रशंसनीय अपवादों को छोड़कर पुलिस की निष्क्रियता भी उजागर होती है। न केवल देश के मीडिया पर सही समाचार न देने के लिए दबाव डाला गया, बल्कि दूसरे देशों के पत्रकारों के समक्ष भी अपने दायित्वों को पूरा करने में तरह-तरह के अवरोध पैदा किए गए। जो आपराधिक मुकदमे दायर हुए, उन्हें गंभीरता से नहीं लिया गया। पूरे कांड पर परदा डालने की बराबर कोशिश की गई। यहाँ तक आरोप है कि राजीव गांधी को इसकी जानकारी थी। विस्तार में जाना संभव नहीं है। इतना कहना पर्याप्त है कि लेखक ने भी

तथ्यों की विवेचना के साथ-साथ सबूत भी पेश किए हैं।

पुस्तक में पुस्तकों और संदर्भ-स्रोतों की एक विशद सूची है, जिनसे लेखक ने जानकारी प्राप्त की है। सच्चाई क्या है, यह जानने के लिए लेखक ने किस प्रकार भुक्तभोगियों को न्याय मिले और कैसे भविष्य के लिए मेल-मिलाप बढ़े, इस हेतु कमीशन बनाने तथा उसके कार्यक्रम के बारे में सुझाव दिए हैं। पव सिंह की पुस्तक में विस्फोटक सामग्री है, जिसके कारण यह आवश्यक है कि इस दुखद प्रकरण का पुनर्निरीक्षण हो, ताकि भविष्य में इस प्रकार की घटनाओं से बचा जा सके और विश्व में भारत के बारे में कोई भ्रांति न बने। इतिहास तो सदैव सच्चाई की माँग करता है। जॉर्ज आरवेल की प्रसिद्ध पुस्तक १९८४ की याद दिलाते हुए प्रतिष्ठित साहित्यकार अमिताभ घोष ने पव सिंह की शोध आधारित पुस्तक के बारे में लिखा है—''No where else in the world did the year 1984 fulfil its opocalyptic portents as it did in India.''

हिमाचल और गुजरात विधानसभाओं के चुनाव

गुजरात और हिमाचल प्रदेश की विधानसभाओं के चुनावों की ओर पूरे देश का ध्यान था, खासतौर पर गुजरात के चुनाव की ओर सभी की आँखें लगी थीं। हिमाचल के चुनाव के नतीजों के बारे में कांग्रेस के दावों के बावजूद टिप्पणीकारों और राजनैतिक पर्यवेक्षकों का कहना था कि भाजपा की जीत निश्चित है। वैसे भी हिमाचल में अभी तक इतिहास रहा है कि हर चुनाव में सत्तापक्ष अपदस्थ होता है और विरोध पक्ष सत्ता में आता है। छोटे राज्यों में इस प्रकार की संभावना अधिक रहती है, जनता राजनैतिक दलों को मौका देकर उनके काम को तौलती है। हिमाचल में भी प्रधानमंत्री मोदी के व्यक्तित्व और रैलियों का ही बोलबाला रहा। फिर भी भाजपा ने पूर्व मुख्यमंत्री धूमल को मुख्यमंत्री घोषित कर दिया था, क्योंकि कांग्रेस ने पुन: वीरभद्र सिंह को ही अपना मुख्यमंत्री घोषित कर दिया था। धूमल का कार्यकाल अच्छा रहा था। भाजपा के घोषित उम्मीदवार धूमल चुनाव हार गए। भाजपा के प्रदेश अध्यक्ष भी चुनाव हार गए। पाँच बार विधानसभा में चुने गए जयराम ठाकुर मुख्यमंत्री नियुक्त हुए। यह सत्ता में पीढ़ी परिवर्तन का भी संकेत है। बदलते समय के साथ जनता नए चेहरे चाहती है। जनता अब मूक और बधिर नहीं रही। चुनावों ने नई राजनैतिक चेतना विकसित की है और वह निरंतर बढ़ रही है। वह नहीं चाहती है कि नए-नए स्वार्थ के गढ़ बन जाएँ। राजनीति में चेहरों की हेर-फेर चाहती है। यह भी लोकतंत्र की परिपक्वता की एक निशानी है। केवल चुनाव के समय ही नहीं, जनता चाहती है कि विधायक अपने क्षेत्र के निरंतर संपर्क में रहें। आज के माहौल में वैयक्तिक तथाकथित बड़प्पन अथवा अहंकार अब जनप्रतिनिधि का आभूषण नहीं बन सकता। जिन राज्यों में अभी भाजपा सत्तारूढ़ है और चुनाव समीप हैं, उनके लिए यह समय रहते सावधानी की घंटी है।

गुजरात के चुनाव में देशवासियों की ही नहीं, वरन् दूसरे देशों के राजनायकों की भी दिलचस्पी थी। दुविधा थी कि क्या भाजपा छठी बार सत्ता में आ सकेगी। क्या जनता ऊब नहीं गई है। एंटी इनकंवेंसी का सवाल सामने था। दूसरे यह कि मोदी के मुख्यमंत्री पद छोड़कर प्रधानमंत्री बनने के बाद यह पहला विधानसभा चुनाव था। दुर्भाग्य से मोदी के बाद दो बार मुख्यमंत्री बदले गए। संगठन में कुछ दरारें दिखाई पड़ने लगीं। जनता भी सशंकित होती मालूम हुई। मोदी ने मुख्यमंत्री के पद से प्रशासन को जो गतिशीलता और ध्येयनिष्ठा प्रदान की थी, वह लोप हो रही थी। इस बीच पाटीदार आंदोलन के रूप में हार्दिक पटेल उभरते दिखे और उन्होंने पाटीदारों के लिए आरक्षण की माँग बुलंद की, जिससे पटेल समुदाय, जो भाजपा का हमेशा से कट्टर समर्थक रहा, आकर्षित होने लगा। हार्दिक पटेल ने भाजपा को हराना ही अपना लक्ष्य बना लिया। उधर उना में दलितों के उत्पीड़न की घटना ने पूरे देश को व्यथित कर दिया। गुजरात की सरकार प्रशासनिक कुशलता और संगठन के चातुर्य के अभाव में इस स्थिति का मुकाबला नहीं कर सकी। मीडिया ने इस दुर्घटना को बहुत बढ़ावा दिया। दलित समुदाय भी भाजपा से दूरी बनाता दिखने लगा। उपेक्षित दलित समुदाय के रोष में उना की घटनाओं ने आग में घी का काम किया।

जिग्नेश मेवानी दलितों के युवा नेता के रूप में सामने आए; उन्होंने भाजपा विरोधी आंदोलन को और आक्रमक बनाने की कोशिश की। वे विधायक भी चुन लिये गए। साथ ही जाति आधारित आम फॉर्मूला को चुनाव में पुनर्जीवित करने के लिए कांग्रेस प्रयत्नशील थी, क्योंकि उसी आधार पर वह पहले बहुत दिन सत्ता पर आरूढ़ रही। अतएव उसने ओबीसी जातियों के गुट के युवा नेता अल्पेश ठाकुर पर डोरे डालने शुरू कर दिए और अंत में अल्पेश कांग्रेस में शामिल हो गए तथा विधानसभा के चुनाव में विजयी रहे। हार्दिक पटेल को कांग्रेस की ओर से सिब्बल ने यह पाठ पढ़ा दिया कि संविधान में परिवर्तन कर पाटीदारों को आरक्षण देना संभव है, और यदि कांग्रेस सत्ता में आई तो तुरंत ऐसा करेगी। हार्दिक इस झाँसे में आ गए। उम्र एक साल कम होने के कारण वे चुनाव नहीं लड़ सके, पर उनके दल और अनुयायियों ने कांग्रेस को पूरा समर्थन देने का ऐलान कर दिया। कांग्रेस ने काफी पहले से राजस्थान के एक पूर्व मुख्यमंत्री गहलोत को गुजरात में कांग्रेस के चुनाव अभियान के लिए उत्तरदायी बना रखा था। उन्होंने बड़ी सक्रियता और चतुरता से भाजपा विरोधी तत्त्वों से सान्निध्य बनाया। कांग्रेस के उपाध्यक्ष एवं शीघ्र की अध्यक्ष होनेवाले राहुल गांधी से हार्दिक पटेल, जिग्नेश मेवानी और अल्पेश ठाकुर की मुलाकात करवाई एवं निकटता बढ़ाने की भरपूर कोशिश की और राहुल गांधी के साथ बहुत सी साझी जनसभाएँ व रेलियाँ आयोजित कीं। अब विरोध पक्ष की एकता ऐसी मजबूत है, इसलिए भाजपा की हार तो पक्की है, ऐसा वातावरण बनाने की कोशिश की गई। गुजरात मुख्यत: उद्योगपतियों और व्यापारियों का प्रदेश है, उनके काम-धंधों को नोटबंदी से धक्का लगा ही था। उसके बाद जी.एस.टी. लागू हुआ, वह एक नया कदम था और उसको समझने में समय लगता ही, उसके कार्यान्वयन में भी कुछ कमियाँ रहीं, इससे भी यह वर्ग रुष्ट था। सूरत तथा कुछ अन्य स्थानों पर कपड़े तथा हीरे-

जवाहारात के व्यापारियों ने लंबे अरसे तक हड़ताल भी की थी। इस असंतोष के वातावरण का फायदा कांग्रेस और विरोध पक्ष को लेना ही था। राहुल गांधी ने हर तरह से केंद्र, खासकर नरेंद्र मोदी और राज्य सरकार को अपनी सभाओं में, ट्विटर या पत्रकारों से साक्षात्कारों में जमकर कोसा। देश और विदेश के पत्रकारों में गुजरात चुनाव को २०१९ में होनेवाले आम चुनाव से जोड़कर देखा जा रहा था, अतएव गुजरात विधानसभा का चुनाव दिलचस्पी का विषय बना। यदि भाजपा गुजरात में सरकार नहीं बना पाती तो उसका मतलब होगा कि प्रधानमंत्री मोदी अपने राज्य में ही अपना वर्चस्व बनाए नहीं रख सके, अतएव २०१९ के आम चुनाव में भी ऐसा संभव हो सकता है।

विरोधी पक्ष इस चुनाव को इसी नजरिए से देख रहा था। गठबंधन की फुसफुसाहट फिर सुनाई पड़ने लगी। फिर भी अधिकतर टिप्पणीकार सहमत थे कि मोदी का कोई विकल्प नहीं है और मोदी की अपनी छवि वैसी ही बनी हुई है। फिर भी गुजरात का चुनाव टक्कर का ही रहा। नतीजे के दिन स्थिति बार-बार बदलती रही। प्रधानमंत्री मोदी ने गुजरात चुनाव के दौरान अभूतपूर्व परिश्रम किया। सिब्बल की कुछ टिप्पणियों और मणिशंकर के प्रधानमंत्री को नीच कहने के कारण आखिरी दौर में चुनाव काफी भावनात्मक हो गया। यह गुजरात के गौरव और अस्मिता का प्रश्न भी बन गया। गुजरात एक धार्मिक प्रदेश भी है, अतएव कांग्रेस ने राहुल गांधी को अनेक धर्म-स्थलों और मंदिरों के चक्कर लगवाए। जनेऊ पहने सिर पर फूलों आदि की टोकरी लेकर राहुल गांधी को दर्शन के लिए सोमनाथ ले गए। उन्होंने अपने को शिवभक्त बताया। इसे राजनीति के पर्यवेक्षक 'हिंदुत्व' कहते हैं। कांग्रेस ने गुजरात के पिछले दंगों का कोई जिक्र नहीं किया, जिससे ऐसा न लगे कि कांग्रेस केवल मुसलमानों की हिमायती है। यह अवश्य है कि चुनाव के दिनों में राजनैतिक चर्चा और भाषा का स्तर बहुत गिर गया, जो स्वीकार्य नहीं होना चाहिए।

चुनाव के दिनों में राहुल गांधी को लोगों ने एक नए रूप में अवश्य देखा। उनकी आत्मविश्वासी और आक्रामक भंगिमा देखने को मिली। नरेंद्र मोदी की कटु-से-कटु आलोचना ही उनका मुख्य लक्ष्य रहा। भाजपा और मोदी की आलोचना के लिए उनके निजी सहायकों ने नई सामग्री लाकर दी। देखना है कि राहुल अपने इस रूप को कब तक बनाए रख सकते हैं। मुख्य विरोधी दल के अध्यक्ष के नाते उनसे परिपक्वता अपेक्षित है। वैसे गुजरात में कांग्रेस खेमों में बँटी और निष्क्रिय थी, किंतु राहुल गांधी के कार्यक्रमों एवं तीन युवा नेताओं के समर्थन ने उसे संजीवनी प्रदान की। कहा नहीं जा सकता है कि चुनाव के नतीजों पर इनका कितना असर हुआ। इन युवा नेताओं में अपने नेतृत्व को स्थायित्व प्रदान करने की कितनी क्षमता है, यह भी भविष्य बताएगा। प्र.म. मोदी और पार्टी अध्यक्ष अमित शाह की कोशिशों से भाजपा गुजरात में सरकार बना सकी। १५० का लक्ष्य तो अमितशाह ने कार्यकर्ताओं का मनोबल बढ़ाने के लिए रखा था, पर आशा थी कि ११५/११६ सीटें भाजपा ले ही लेगी, किंतु वह केवल ९९ सीटों पर ही जीती। हालाँकि उसका वोट शेयर बढ़ा। गुजरात में भाजपा का जमीनी कार्यकर्ताओं का ढाँचा बहुत मजबूत है। कांग्रेस उसके कहीं आस-पास भी नहीं है, किंतु दवाब तो इस समय है ही। कांग्रेस की सफलता के कारण ही बहुत से विरोधी दलों के नेताओं ने कांग्रेस की सफलता को नैतिक विजय कहा है, पर राजनैतिक दृष्टि से उसका कोई महत्त्व नहीं है। फिर भी २०१९ के आम चुनाव के परिप्रेक्ष्य में गुजरात के चुनाव चेताने की घंटी हैं। कुछ दिनों बाद आठ राज्यों में चुनाव होने हैं, खासकर राजस्थान, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, जहाँ भाजपा की सरकारें हैं; अपनी सत्ता बचाए रखने के लिए विशेष ध्यान देना होगा। कर्नाटक, जहाँ भाजपा पुनः सत्ता हासिल करना चाहती है और संभावना भी है, वहाँ एक कल्पनाशील नीति निर्मित करनी होगी।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने बहुत सी ऐसी योजनाएँ बनाई हैं, नए कदम उठाए हैं, उनका जमीनी स्तर पर कितना प्रभाव हुआ है, यह आकलन करना जरूरी है। जो कमियाँ-खामियाँ दिखाई दें, उनका दृढता से निराकरण करना होगा। यह आवश्यक है कि व्यर्थ के विवादों में न पड़कर सांसद और विधानसभा सदस्य अपने क्षेत्रों में अपने दायित्वों का पालन करें। आखिर प्रधानमंत्री ऐसे सांसदों को अपने कंधे पर उठाकर जनता को कैसे आश्वस्त कर सकते हैं, जो महत्त्वपूर्ण सरकारी बिलों के संबंध में भी अपने दायित्व का निर्वाह नहीं कर सकते। गुजरात चुनाव ने दिखा दिया कि शहरी इलाकों में भाजपा का वर्चस्व कायम है, पर गाँवों में उसका प्रभाव घटा है। इसलिए खेतिहर मजदूरों, कृषि-संकट के समाधान को त्वरित गति से समझकर प्रयास करने हैं, ताकि यह आरोप झूठा साबित हो सके कि मोदी सरकार गरीबों और गाँवों की अनदेखी कर रही है, वह केवल उद्योगपतियों के लिए ही है। प्रशासन को देहात की समस्याओं को निपटाने की कोशिश समझबूझकर करनी होगी। गाँव के लोगों को होनेवाले लाभ देखने चाहिए और इसलिए इन कार्यक्रमों की निगरानी जरूरी है। दलितों का उभरनेवाला नेतृत्व अब शिक्षित और जानकार है, अतएव आक्रामक होता जा रहा है। इसलिए दलितों की समस्या का समाधान उनकी राय लेकर संवेदनात्मक ढंग से होना चाहिए। जिस योजना का जैसा लाभ होना चाहिए, यह देखना आवश्यक है कि वह हरेक को प्राप्त हो सके, 'सबका साथ सबका विकास' के धरातल पर सबको आश्वस्त करना चाहिए। विकास की जो रूपरेखा या ढाँचा प्रधानमंत्री ने प्रस्तुत किया है, वह दीर्घकालिक दृष्टि से है, पर उसको साधारण ग्रामीण नागरिक नहीं समझ पाते। इसलिए शॉर्ट टर्म और लॉन्गटर्म, अर्थात् निकट भविष्य और दीर्घकालीन विकास के बीच में एक समन्वय रहना चाहिए।

एक संदेहात्मक निर्णय

२जी स्पेक्ट्रम आवंटन के भ्रष्टाचार के मुकदमे में सी.बी.आई. जज ओ.पी. सैनी ने सभी १७ अभियुक्तों को आरोप से मुक्त कर दिया और कहा कि सी.बी.आई. के अभियोजनकर्ता, प्रॉसीक्यूटर अपने आरोपों को सिद्ध करने में असफल रहे हैं। फैसले ने देश को आश्चर्यचकित कर दिया। इस मामले में उस समय के टेलीकॉम मंत्री ए. राजा, राज्यसभा

सदस्य कानिमोझी, कई अधिकारी और कुछ टेलीकॉम कंपनियों के उच्च अधिकारी भी आरोपी थे। सी.बी.आई. के एडवोकेट ग्रोवर ने जज सैनी के फैसले की खामियों को एक बयान द्वारा स्पष्ट किया है। बहुत से कानूनी जानकारों ने सैनी के फैसले और उनके दिए हुए तर्कों पर प्रश्न उठाए हैं। सी.बी.आई. अपील में जाने की तैयारी कर रही है। सर्वोच्च न्यायालय ने मंत्रालय की काररवाई को मनमानी और अरजी देने की तारीख में बदल करने को गलत बताया, क्योंकि यह कुछ प्रत्याशियों को अनुचित लाभ पहुँचाने के लिए किया गया था, अतएव मंत्रालय के निर्णय को निरस्त कर दिया। सर्वोच्च न्यायालय ने षड्यंत्र क्या है और फैसला करनेवालों का किस प्रकार का आपराधिक मंतव्य था, यह निर्णय सी.बी.आई. स्पेशल कोर्ट पर छोड़ दिया। सी.ए.जी. की रिपोर्ट के बाद यह मामला तूल पकड़ने लगा था। इसका राजनैतिक प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था। सी.ए.जी. की रिपोर्ट ने सरकारी नुकसान का आकलन तीन प्रकार से किया और बताया कि संभावित कितना नुकसान सरकारी खजाने को हुआ है। पब्लिक एकाउंट्स कमेटी में भी सी.ए.जी. ने अपनी गवाही के दौरान समर्थन किया। रिपोर्ट में जो रकम नुकसान की बताई गई, वह कम-ज्यादा हो सकती है, पर यह कहना कि नुकसान हुआ ही नहीं, उचित मालूम नहीं होता है।

एक टिप्पणीकार के अनुसार २जी स्पेक्ट्रम का आवंटन एक उदाहरण है कि किस प्रकार कुछ बड़ी कंपनियाँ सरकारी नीतियों में परिवर्तन कराकर बड़े-बड़े लाभ उठाती हैं। न जनता के खजाने को कोई नुकसान हुआ है और न कोई भ्रष्टाचार ही हुआ, इस प्रकार की भावना पैदा करने का प्रयास केवल आत्मप्रवंचना ही होगी। सत्ताधारियों और बड़ी कंपनियों की साँठ-गाँठ इतनी मजबूत और गहरी होती है कि उसको आसानी से खोलना आसान नहीं होता है। नुकसान जनता के खजाने एवं सार्वजनिक क्षेत्र का होता है। तत्कालीन सी.ए.जी. विनोद राय के विरुद्ध कई कांग्रेसी नेताओं ने तरह-तरह के आरोप लगाए। यह उनकी अपनी खिजलाहट के कारण है। कहा जा रहा है कि सी.बी.आई. की चार्जशीट में जज सैनी ने भ्रष्टाचार का जो मामला भ्रष्टाचार निरोधक कानून के अंतर्गत उठाया था, उसपर ध्यान नहीं दिया। वे अपने फैसले में कहते हैं कि पैसे का लेन-देन हुआ तो, किंतु उससे कोई आपराधिक षड्यंत्र या मंशा साबित नहीं होती। अभी इस विषय पर अधिक विवेचन उचित नहीं है। सी.ए.जी. की रिपोर्ट के पहले ही इस मामले को भ्रष्टाचार के आरोप के साथ सुब्रह्मण्यम स्वामी सर्वोच्च न्यायालय ले गए और उन्होंने सैनी के फैसले की गलतियों की ओर इशारा किया है। सर्वोच्च न्यायालय आगे इस मामले में क्या निर्णय करता है, अभी उसकी प्रतीक्षा करना ही उचित होगा। खबर है कि राजा ने अपनी सफाई में अपने दृष्टिकोण से एक पुस्तक लिखी है और उसमें अपने दो सहयोगी, वित्त मंत्रियों चिदंबरम और प्रणब मुकर्जी तथा तत्कालीन प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह के ऊपर भी उँगली उठाई है। विवाद शायद बढ़ता ही जाएगा, इसलिए सत्य क्या है, उसकी तह में जाना ज्यादा जरूरी है।

सर्वोच्च न्यायालय में विद्रोह

१२ जनवरी को देश स्तब्ध रह गया, जब प्रधान न्यायाधीश के बाद के चार वरिष्ठ न्यायाधीश न्यायमूर्ति जे. चेमलेश्वर, रंजन गोगोई, कुरियन जोसेफ और मदन लोकूर ने जस्टिस चेमलेश्वर के बँगले में एक प्रेस कॉन्फ्रेंस की और दो महीने पहले प्रधान न्यायाधीश दीपक मिश्र को लिखे अपने पत्र को सार्वजनिक कर दिया। उनका कहना था कि सर्वोच्च न्यायालय का प्रशासन ठीक नहीं चल रहा है, अहम मामले वरिष्ठ न्यायाधीशों को न भेजकर जूनियर जजों की बेंचों को दे दिए जाते हैं। यद्यपि प्रधान न्यायाधीश को यह अधिकार रोस्टर के मास्टर के रूप में है किंतु उसका उपयोग चली आ रही परिपाटी के अनुसार होना चाहिए। वरिष्ठता का सम्मान होना चाहिए। कुछ और भी मुद्दे उठाए गए, जैसे उच्च न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय की नियुक्ति के विषय में मेमोरेंडम बनाने में देरी। किंतु वरिष्ठ जज हतप्रभ हैं कि महत्त्व और संवेदनशील मुकदमे जूनियर बेंचों को दिए जा रहे हैं। चीफ जस्टिस के पत्र में यह आरोप केवल उनपर ही नहीं था, बल्कि शब्द 'प्रधान जस्टिसेज' इस्तेमाल किया गया, यानी पहले भी यह हुआ है। उन्होंने प्रेस के सामने कहा कि कोई व्यक्तिगत बात नहीं है, न चीफ जस्टिस पर कोई व्यक्तिगत आक्षेप है।

प्रेस कॉन्फ्रेंस में सिब्बल, चिदंबरम, खुर्शीद आलम आदि कांग्रेसी नेता, जो सर्वोच्च न्यायालय के सीनियर एडवोकेट भी हैं, मौजूद थे। चार वरिष्ठ जजों का कहना था कि उनके पत्र का कोई उत्तर नहीं मिला। वे प्रधान न्यायाधीश से मिले भी, पर अपनी बात नहीं मनवा पाए। अत: उन्होंने प्रेस कॉन्फ्रेंस के माध्यम से देश को स्थिति की सूचना देना उचित समझा। इसी कारण पहली बार, जो कभी नहीं हुआ, ऐसे कदम उठाने पड़े। जस्टिस जे. चेमलेश्वर ने कहा कि यदि सर्वोच्च न्यायालय को संरक्षण न मिला तो लोकतंत्र खतरे में पड़ जाएगा। उन्होंने कहा, हम नहीं चाहते थे कि २० वर्ष के बाद अपनी आत्मा बेच देने का आरोप लगे। जस्टिस रंजन गोगाई, जो अगले चीफ जस्टिस होनेवाले हैं, कहा कि प्रेस कॉन्फ्रेंस के माध्यम से स्थिति स्पष्ट कर हमने राष्ट्र के प्रति अपना ऋण उतारने की कोशिश है। उनके द्वारा सार्वजनिक किए गए पत्र से उनकी शिकायतें साफ हो जाती हैं। उन सबके विस्तार में जाने की जरूरत नहीं है, क्योंकि मामला बिल्कुल ताजा है और समस्या का समाधान होना बाकी है। प्रेस कॉन्फ्रेंस में यह भी बताया गया कि वे चारों लोग उस दिन प्रात: चीफ जस्टिस से मिले थे, किंतु उन्होंने उनका कहना नहीं माना। संवेदनशील मामलों में सी.बी.आई. जज लोया का जिक्र आया, जो मुंबई में सोहराबुद्दीन शेख के एनकाउंटर के समय का मुकदमा सुन रहे थे, नागपुर में एक शादी के दौरान उनकी आकस्मिक मृत्यु के विषय में जो पी.आई.एल. दाखिल हुए, वह एक प्रकार से उनके अप्रत्याशित कदम का प्रस्थान बिंदु था, जिसके कारण यह असाधारण कदम उठाया गया।

'कारवाँ' मैगजीन में इस संबंध में एक लेख आया था, उसमें लगाए गए आरोपों को वहाँ उपस्थित अन्य जजों ने नकार दिया था। समाचार-

पत्रों, विशेषतया 'इंडियन एक्सप्रेस' ने इस मामले में जाँच-पड़ताल की और 'कारवाँ' की कहानी को सही नहीं माना। उनके पुत्र ने भी एक बयान में अपने पिता की मृत्यु को प्राकृतिक बताया। उसने कहा, प्रारंभ में कुछ संदेह था, पर अब नहीं है और इस मामले का राजनीतीकरण नहीं होना चाहिए। उनके परिवार को इस विषय में परेशान न किया जाए। अब निर्णय हो जाए कि यह सर्वोच्च न्यायालय के अधिकार में है या नहीं। चारों वरिष्ठ जज बहुत विद्वान् और अनुभवी हैं और हम सब उनका आदर करते हैं। सर्वोच्च न्यायालय की प्रतिष्ठा को आँच नहीं आनी चाहिए। इसलिए इस अनहोनी और असाधारण घटना ने न केवल विधिवेत्ताओं को वरन् नागरिकों को भी झकझोर दिया। कई निवर्तमान जजों और प्रधान न्यायाधीशों ने भी इसे असाधारण माना है, जिससे सर्वोच्च न्यायालय की साख को बट्टा लगा है। कुछ निवर्तमान जजों ने कहा कि चार वरिष्ठ जजों के सामने कोई और विकल्प नहीं रहा, तभी उन्होंने यह कदम उठाया। बार एसोसिएशन ने तुरंत कार्यकारिणी की बैठक बुलाई और अध्यक्ष विकास सिंह ने कहा कि यह सर्वोच्च न्यायालय का आंतरिक मामला है, वे स्वयं इसका हल निकाल लेंगे। केंद्र सरकार का भी यही रुख रहा। कांग्रेस का एक डेप्युटेशन प्रधान न्यायाधीश से मिला भी। अध्यक्ष राहुल गांधी ने अवश्य कहा कि वरिष्ठ जजों ने जो मुद्दे उठाए हैं, उनका निराकरण होना चाहिए। यह वास्तव में सर्वोच्च न्यायालय के विवाद को राजनैतिक रूप दे सकता है। वैसे वरिष्ठ जजों ने कहा कि सर्वोच्च न्यायालय के सामने कोई संकट नहीं है और सब ठीक हो जाएगा। साधारण नागरिक फिर भी समझ नहीं पाता है कि ऐसा क्यों हुआ? यदि कोई संकट नहीं है तो फिर प्रेस को बुलाने का यह नाटकीय कदम क्यों उठाया गया? क्यों नहीं इस पूरे विवाद को जजों की संपूर्ण बैठक में रखा गया, इस पर सवाल उठ रहे हैं। आगे भी अगर कुछ इस प्रकार का मामला आया तो क्या करना होगा।

यह भी थोड़ा समझ के बाहर है कि जो जज पहले सर्वोच्च न्यायालय में नियुक्त हुए, केवल वही लोकतंत्र की रक्षा कर सकते हैं। वे कुछ महीनों में सेवानिवृत्त होंगे तो सर्वोच्च न्यायालय की व्यवस्था और संरक्षण तो उन्हीं न्यायधीशों के द्वारा होगा, जिन्हें जूनियर की संज्ञा दी जा रही है। जनता मानकर चलती है कि जो जज सर्वोच्च न्यायालय के योग्य समझा गया है, वह हर प्रकार से न्याय देने में सक्षम होगा तथा संस्था के मान और विश्वसनीयता की रक्षा कर सकेगा। अतएव वरिष्ठ और कनिष्ठ का भेद इस दृष्टि से व्यर्थ है। संस्था का दायित्व संविधान का संरक्षण है। इस तरह की बात करना एक प्रकार से अपने सहयोगियों के प्रति अविश्वास प्रकट करना है। सर्वोच्च न्यायालय सबके फैसले करता है और वे सर्वमान्य होते हैं। यह संवैधानिक सिद्धांत है। फिर यहाँ जनता की अदालत का प्रश्न क्यों उठा? कोई रेफरेंडम का प्रावधान संविधान में नहीं। हमारे संविधान निर्माताओं ने भी कभी नहीं सोचा होगा कि ऐसी स्थिति पैदा हो सकती है। इस प्रकार का कदम कहीं न्यायिक अनुशासन की सीमा का तो अतिक्रमण नहीं करता। १९९८ या १९९९ में जजों ने अपने लिए स्वयं एक कोड ऑफ कंडक्ट यानी आचार संहिता बनाई थी, कहीं यह उसकी अवहेलना तो नहीं। कुछ विधिवेत्ताओं का यह भी कहना है कि नेशनल ज्यूडिशियल कमीशन का जो कानून संसद् ने एकमत से पारित किया था, यदि वह असंवैधानिक घोषित न किया जाता तो सर्वोच्च न्यायालय के कामों में भी पारदर्शिता आती और इस प्रकार की नौबत भी शायद न आती। पारदर्शिता की दृष्टि से कुछ टिप्पणीकार वरिष्ठ न्यायाधीशों के कदम को उचित बताते हैं। लेकिन प्रशांत भूषण और उनके पिता शांतिभूषण ने सर्वोच्च न्यायालय में काफी समय हुआ, एक सूची पेश की थी और सर्वोच्च न्यायालय के आठ प्रधान न्यायाधीशों की शुचिता के विषय में कुछ प्रश्न उठाए थे, उसका आगे क्या हुआ, कुछ पता नहीं है। पंजाब उच्च न्यायालय के जब जजों ने अपने चीफ जस्टिस द्वारा अपने गोल्फ क्लब की मेंबरशिप के बारे में पूछे जाने पर बॉयकाट किया, तो उस मामले की तह में न जाकर उसको भी रफा-दफा कर दिया गया। सर्वोच्च न्यायालय के प्रशासनिक मामलों में पारदर्शिता का अभाव बराबर रहा है, जो जनता को खलता है। सुचारू न्याय व्यवस्था चलाने के लिए पारदर्शिता और संस्थागत अनुशासन, दोनों का सामंजस्य आवश्यक है।

एक विचित्र बात यह भी हुई कि इस विषय में शुक्रवार के 'इंडियन एक्सप्रेस' में सर्वोच्च न्यायालय के एक वरिष्ठ एडवोकेट दुष्यंत दवे का लेख प्रकाशित हुआ और उसके बाद देश ने प्रेस कॉन्फ्रेंस का परिदृश्य देखा। इसके अतिरिक्त पिछले कुछ समय में सर्वोच्च न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश और वरिष्ठ अधिवक्ताओं के बीच कई मामलों में नोकझोंक हुई। उससे भी लोग चिंतित थे। वरिष्ठ अधिवक्ताओं में सिब्बल, धवन, प्रशांत भूषण आदि रहे हैं। वरिष्ठ अधिवक्ताओं से भी शालीनता और आत्मनियंत्रण की अपेक्षा रहती है, तभी न्याय-प्रक्रिया ठीक से चल सकती है, क्योंकि वे इसके अभिन्न अंग हैं।

देश के प्रबुद्ध नागरिक तो यही मानते हैं कि जो कुछ हुआ, अच्छा नहीं हुआ और आशा करते हैं कि भविष्य में ऐसा नहीं होगा। एटार्नी जनरल श्री वेणु गोपाल और बार एसोसिएशन के अध्यक्ष ने इस विवाद के बारे में कहा था कि यह मामला शीघ्र ही सुलझ जाएगा और सर्वोच्च न्यायालय सौहार्द, निष्पक्षता और न्यायप्रियता के वातावरण में कार्य करेगा। यही सबकी अपेक्षा और आशा है। किसी भी संस्था की छवि उसके शांतिपूर्ण चलन एवं उसके सदस्यों के आचरण पर निर्भर करती है। उससे संबंधित सब अंगों के आत्मनियंत्रण और सहयोग की आवश्यकता होती है। सर्वोच्च न्यायलय की गरिमा का संरक्षण करना सभी का दायित्व है, उसी में संविधान की रक्षा, लोकतंत्र की सार्थकता और गरिमा निहित है। हम सभी हाड़-मांस के पुतले हैं। किंतु सर्वोच्च न्यायालय के प्रति संस्थागत आस्था एवं विश्वसनीयता पर किसी भाँति आँच नहीं आनी चाहिए। संस्थाएँ बनी रहती हैं, व्यक्ति आते-जाते रहते हैं। इसलिए सर्वोच्च न्यायालय को राजनैतिक विवाद से दूर रखना ही दूरदर्शिता का सूचक है।

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

(त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी)

(पुण्यतिथि (२६ फरवरी) पर विशेष)

अंदमान के बंदीगृह में

• विनायक दामोदर सावरकर

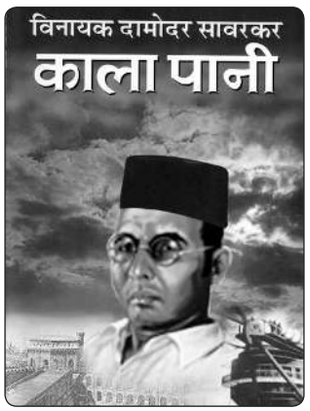

काला पानी पहुँचते ही कैदियों को धुआँकश से उतारा जाता है और उन्हें सीधे उस द्वीप पर, सागर की ढलान पर बनाए हुए भव्य, मजबूत, विशाल तथा प्रमुख कारागृह में सशस्त्र पुलिस-पहरे में पहुँचाया जाता है।

इस प्रकार के कारागृह को 'कक्ष-कारागार' (Cellular Jail) कहा जाता है। बंदियों की बोली में इसी 'सेल्युलर जेल' का 'सिलबर जेल' (रुपहली बंदीशाला) जैसा मनमोहक रूपांतर हो गया है। जो अर्धशिक्षित बंदी थे—वे पुलिस के यह कहने पर कि 'इन्हें सिलबर जेल में ले जाओ' हक्के-बक्के-से देखते रहे। भई, रुपहली बंदीशाला में जाना है! क्या बात है! कुछ मंदिरों के खंभों अथवा कंगूरों पर जिस प्रकार चाँदी की चादरें जड़ाई जाती हैं, उसी प्रकार उनकी नजरों के सामने 'सिलबर जेल' नाम सुनते ही किसी विलक्षण तथा भव्य कारागृह, जिसका कम-से-कम दर्शनीय हिस्सा रुपहला हो, दृश्य आ जाता। भई, काले पानी की सारी बातें ही न्यारी हैं। क्या कहा जाए, जिस तरह काला पानी उसी तरह बंदीशाला रुपहली क्यों नहीं हो सकती?

कम-से-कम कैदियों तथा पुलिसवालों के मुँह से बार-बार 'सिलबर जेल' नाम सुनकर कंटक को बड़ा आकर्षक प्रतीत हुआ। वास्तव में भयानक पापियों को उनके भीषण पापों का कठोर दंड देने के लिए जिस द्वीप में ले जाना है, उसका नाम जिस तरह 'काला पानी' प्रचलित हो गया जिससे रोंगटे खड़े होना स्वाभाविक है, उसी तरह उस कारागृह का नाम भी 'नारकीय विवर' अथवा 'छलघर' प्रचलित होना चाहिए था, जिससे अच्छा-खासा दबदबा निर्मित होता। परंतु यह नाम कम-से-कम लुभावना तो है—वाह! 'सिलबर जेल'—रुपहली बंदीशाला!

भई, केवल नाम ही प्यारा नहीं है—वह देखिए, वह भव्य बंदीगृह दिखाई दे रहा है—वही है सिलबर जेल। आँ वह! बिलकुल सिलबर—रुपहला न सही, पर कितना आकर्षक है वह भवन। रेखांकन करके ठीक-ठाक, साफ-सुथरा, टीप-टाप, बिलकुल कोरा, प्रदीर्घ, प्रशस्त, समानांतर, बढ़िया खिड़कियाँ-ही-खिड़कियाँ—एक मंजिल पर खड़ी तीन सुघड़, सुडौल मंजिलें, बीचोबीच पक्का सुगठित टावर। पल भर के लिए कंटक को अहसास हुआ, कहीं यह पुलिस मेरा मजाक तो नहीं उड़ा रही! काले पानी के प्रमुख बंदीभवन के बहाने कहीं कोई आरोग्य भवन तो नहीं दिखा रहा, जो रईस धनवान् अफसरों के लिए बनाया गया है! भई, यह सिलबर जेल है या सैनिटोरियम!

भीतर कदम रखते ही बंदीगृह नाम से जो एक उदास, दारुण, वीरान अँधेरे दबदबे का अनुभव आम भारतीय बंदीगृह में भी होता है, उसका यहाँ नामोनिशान तक नहीं है। रोशनी, हवा की विपुलता। तीन मंजिलों के पाँच-छह 'विंग्ज'—जिनमें एक जैसी कोठरी से कोठरी सटाकर बनाई गई हैं—सुडौल, सुगठित मध्यस्थित उस टावर के चारों ओर दूर-दूर तक कायदे से फैले हुए। बीच में बड़े-बड़े आँगन रखे हुए—गोलाकार—चारों ओर नारियल—केले का घना वन। अंदमान के घने जंगल में कभी-कभी नरम-नरम मुलायम, सुस्त, तीस-तीस फीट लंबे, सुंदर प्रचंड अजगर कुंडली मारकर लेटे हुए पाए जाते हैं, उसी तरह यह वन भी जैसे एक अजगर ही है। अजगर जैसा ही मनमोहक!

उसपर हर बंदी के लिए अलग-अलग कालकोठरी, जिसमें लोहे की सीखचों का बंद दरवाजा। इस प्रकार उसमें सात-साढ़े सात सौ काल कोठरियाँ हैं। इसीलिए उसका सेल्युलर जेल जैसा सार्थक नाम रखा गया था।

उसे हर कोठरी में भरपूर रोशनी दिखाई देती। परंतु उस रोशनी की विशेषता यह थी कि उस कोठरी में कदम रखने और द्वार को एक बार बाहर से ताला लगने के बाद चर्मचक्षुओं को भले ही साफ-साफ दिखाई दे, परंतु दिल में घुप अँधेरा छा जाता, एकदम घुटन-सी महसूस होती; वह प्रशस्त, विशाल कमरा कालकोठरी बन जाता।

उसी प्रकार की एक-एक कालकोठरी में बंदियों के उस चालान के भी एक-एक कैदी को अलग-अलग बंद किया गया। तीन-चार दिन तक उन कालकोठरियों में अकेले-अकेले कैदी को गाड़ने के बाद उनके दंड-पत्रक की जानकारी का निरीक्षण करके उनके अपराध तथा पूर्ववृत्त के अनुसार विभिन्न श्रेणी विभाजन किया गया। जो तात्कालिक उत्क्षोभ में अपराध कर गए और प्रथम बार दंडित हुए थे, उनकी गणना सुधारणीय श्रेणी में की गई। जो घुटे हुए अपराधी थे, उनकी भयंकर दु:सुधारणीय के रूप में दूसरी श्रेणी—इस प्रकार अपराधी विज्ञान (Criminology) के अनुसार दो वर्ग किए गए। कंटक प्रथम श्रेणी में था और अंग्रेजी, हिंदी शिक्षित होने के कारण महीने-दो-महीने में ही उसे लेखालय में, जो बंदी लेखक-वर्ग होता है उसमें, थोड़ा-बहुत लिखा-पढ़ी का काम

मिल गया और यह स्पष्ट हो गया कि चंद दिनों में बंदियों में 'बाबू' के रूप में उसका बोलबाला होगा। परंतु रफीउद्दीन के दंड-वृत्तांत की 'भयंकर' श्रेणी में गणना हुई, अर्थात् पाँच वर्षों तक उसे उसी कारागार में बंद रखने तथा तब तक कड़े पहरे में सख्त काम करने का दंड दिया गया जब तक उसका आचरण चोखा नहीं दिखाई देता।

आजकल अंदमान में भयंकर तथा निघरघट बंदी नहीं भेजे जाते, अत: वहाँ के कैदियों को काफी सहूलियतें मिलती हैं। परंतु तीस-पैंतीस वर्ष पूर्व भयंकर, निघरे, छँटे हुए दंडितों को प्राय: उधर भेजे जाने के कारण उनसे कड़ी मेहनत लेने के लिए वैसे ही कठोर नियम तथा उनकी दुष्ट मस्ती झाड़ने के लिए उतना ही कठोर काम आयोजित करना पड़ता था। इसके अतिरिक्त अन्य किसी भी ढुलमुल, कमजोर व्यवस्था से इस प्रकार के राक्षसी दंडितों को सही रास्ते पर लाना, उनसे वह कार्य करवाना जो समाज के लिए हितकर था, कम-से-कम समाज को उनके स्वैर अस्तित्व से जो उपद्रव भोगना पड़ता था, उसे टालना लगभग असाध्य ही होता था।

रफीउद्दीन जैसे निर्दयी कैदी उस प्रकार की कठोर, कड़ी व्यवस्था के भी दाँत खट्टे करके काले पानी से भाग जाते, स्वदेश वापस जाते और पुन: समाज पर घोर अत्याचार करते। इस बात पर गौर करते हुए रफीउद्दीन के कारागार से भाग निकलने पर बीच के कालखंड में यह व्यवस्था और भी अधिक सख्त की गई थी। इस बीच उस कक्ष-कारागृह पर ऐसे अधिकारियों की नियुक्ति की गई थी, जो उसके लिए नहले पर दहला हों, आवश्यकता पड़ने पर उससे भी कठोर व्यवहार करें, चालाक हों। रफीउद्दीन को अब जब पुन: काला पानी भेजा गया, तो उसकी मुठभेड़ ऐसे ही एक सवाई दंडम बंदीपाल के साथ होनेवाली थी।

रफीउद्दीन ने आते ही इस बात पर गौर किया तथा अपनी पूर्वपरिचित व्यवस्था तथा अधिकारियों की आँखों में धूल झोंकने के लिए जहाँ जो-जो इलाज लागू हो, वहाँ क्रमश: चुगलियाँ, मनुहार करना, पाँव पकड़ना, वाहियात अंटशंट बकबक, गाली-गलौज, पागलपन का स्वाँग, धींगामुश्ती, हँसते-खेलते मुख प्रशंसा, शोख निर्लज्जता आदि विविध प्रकार के व्यवहारों का प्रयोग करना प्रारंभ किया।

उस नए बंदीपाल ने, जो भयंकर तथा अधम बंदी था, आते ही उनके पूर्ववृत्त की सरकारी टिप्पणियों के अनुसार, मन में निश्चित किया था कि उनके संबंध में कौन सी नीति अपनानी चाहिए। और फिर उनकी प्रस्तुत मनोवृत्तियों को टटोलने के लिए वह एक-दो बार उनसे प्रत्यक्ष साक्षात्कार करता। जहाँ आवश्यकता पड़ती वहाँ खुल्लम-खुल्ला बातचीत करने का दिखावा करता। नरमी से पेश आता और फिर उनका पुरजा उतना ही कसता जितना वह चाहता था। अपनी पद्धति के अनुसार उसने उस नए चालान के बंदियों को भी धीरे-धीरे टटोलना आरंभ किया। पाँच-छह दिनों तक उन्हें कालकोठरी में सड़ने देने के बाद एक दिन वह मुखिया जमादार के साथ रफीउद्दीन की कोठरी के सामने अचानक आ धमका।

बंदीपाल साहब स्वयं जिसकी कालकोठरी (Solitary Cell) में बिन बुलाए जाते हैं, अन्य उपेक्षित कैदियों में उस बंदी का तुर्रा एकदम सातवें आसमान पर चढ़ जाता है। वह यह समझकर अभिमान करने लगता है कि इन नगण्य साधारण लोगों में वह भी एक गण्य हस्ती है। रफीउद्दीन मियाँ भी घमंड से छाती फुलाने लगे। वह इतने कड़े पहरे में, 'कैदे-तनहाई' में सड़ रहा था कि जहाँ परिंदा भी पर नहीं मार सकता था। ऐसे में किसी का भी वहाँ आना वह अपना अहोभाग्य समझता। अब दस्तुरखुद 'जेलर साब' उसके पास अपनी मरजी से आए और आते ही पूछने लगे, ''क्यों रफीउद्दीन! ठीक-ठाक हो न? कुछ शिकवे-शिकायत?''

''सरकार, आप हमारे माँ-बाप! मैं तो आपके गुलाम का तिलाम हूँ जी!'' रफीउद्दीन विनम्रता का चोला पहनकर घिघियाने लगा। फिर बोला, ''हुजूर, चाहे मुझे फाँसी पर लटकाओ। लेकिन इस कालकोठरी में अकेले मत ठूँसो। अरे हुजूर, तनिक चीं-चपड़ करना भी दुश्वार हो गया है जी! यदि इस प्रकार मैं अकेले इस भयानक सन्नाटे में कुछ दिन और रहा तो पागल हो जाऊँगा, पागल!''

''अकेले रहने से उकता गए हो!'' बंदीपाल मुसकराया, ''बस इतनी ही है न तुम्हारी छटपटाहट, परेशानी की वजह! अच्छा, जमादार सुनो, भई मियाँ को एक जोरू ला दो सोहबत के लिए। हमारे जनाना कैदखाने में तो बीवियाँ-ही-बीवियाँ हैं।''

यह सूँघकर कि बंदीपाल बड़ा हँसोड़ तथा खुशमिजाज है, रफीउद्दीन भी खुल गया—उसपर बात छेड़ी गई बीवी की। उसकी मुद्रा एकदम रंगीन हो उठी। कहने लगा, ''सरकार, उसे आप जनाना बंदीखाना कहते हैं? लगभग सभी कैदी उसे बीवीघर कहते हैं, हुजूर! लेकिन हम लोगों में जो असली शौकीन, रंगीन तबियत के हैं वे उसे चिड़ियाखाना कहते हैं—'पाँखीवन'। लेकिन सरकार, उस पाँखीवन का पाँखी, पँखेरू आप हमारे भाग में थोड़े ही आने देंगे? वह सामने बैठकर नारियल की जटाएँ जो कूट रहा है—अजी वही काला-कलूटा, भद्दा कोयला, ऐसे भद्दे डोमकौओं को ही तो आप हसीन बुलबुल देंगे। हुजूर, वाकई सरकार, आप उनके इतने हिमायती क्यों हैं जी? वह डोमकौआ—अजी वही कंटक—मेरा चालानी है—वह भी धोखेबाज, दंडित, आजन्म कारावासी, काला पानी पानेवाला अपराधी। मैं भी बिलकुल उसीकी तरह हूँ। लेकिन मुझे पूरे पाँच साल तक इस बंदीशाला में, इस एकांतवास में, कैदे-तनहाई में सड़ने का दंड और उस साले बदमाश को फौरन कालकोठरी से निकालकर नारियल की जटाएँ कूटने का हलका-फुलका काम दिया गया और कहा गया कि जल्दी ही उसे बंदी लेखकों में नियुक्त किया जाएगा। भई, उस बाबू को लिखना-पढ़ना आता है तो हुजूर, हमें लड़ना आता है—फौज में था सरकार। मर्द का बच्चा हूँ, साब! लेकिन यह कैसा अन्याय है, मेरे मालिक! ककड़ी के चोर को कटारी से मारा जाता है यहाँ। हमपर 'खतरनाक' का ठप्पा मारकर इस काले पानी पर कालकोठरी में सड़ने के लिए डाल देते हैं और बाबू लोगों को, उन ससुरे डोमकौओं को, उन पुरुषों को 'सुधारणीय' के रूप में चुनकर उन्हें शादी करने की अनुमति दे देते

हैं, और उन चिड़ियों में से कोई भी चिड़िया पालने की उन्हें अनुमति दे देते हैं। क्या यह सरासर अन्याय, नाइनसाफी का नियम नहीं है जी! हम ठहरे सिपहसालार, दर के शिकारी कुत्ते। जान पर बीतने से उसके लिए अपनी जान की बाजी लगाने में पीछे नहीं हटेंगे जो हमें पालेगा। ऐसे मर्द के बच्चों को कोठरी में सड़ने के लिए छोड़ने की बजाय सरकार हमें किसी भी जंग पर भेजे, दुश्मनों की तोपों के मुँह में दे दे। सरकार के लिए अपने सिर पर कफन बाँधने के लिए भी पीछे नहीं हटूँगा, हुजूर!''

''वा भई, वाह! बिलकुल उचित समय पर अपना इरादा प्रकट किया तुमने। सरकार को वैसे एक शेर की आवश्यकता आ ही पड़ी है। वे जर्रेवाले हैं न! अरे वही इस काले पानी के घने जंगल के राक्षस। सुना है, मनुष्य की खोपड़ी उतारकर उसे तराशते हैं—अच्छी तरह से घिस-घासकर उसमें रंग-बिरंगी सीपियाँ खोंसते हैं और उसका एक ऐसा खूबसूरत मदिरा-चषक बनाते हैं कि बस देखते ही बनता है। उसी तरह का एक प्याला सरकार लंदन की एक प्रदर्शनी में रखना चाहती है। उस जर्रेवालों के यहाँ अभी रवाना करता हूँ तुझे। ऐसी खोखली खोपड़ी की पूर्ति करने में जैसी वे लोग चाहते हैं, तुम्हारा सिर सोलह आने फिट और बढ़िया है।''

''मेरा सिर! बिलकुल नहीं। अजी, सामने बैठे उस डोमकौए की—उस कंटक की खोपड़ी ही इस काम के लिए अधिक उचित है, हुजूर! जनाब, दिमागी काम के लिए बाबू लोग ही अधिक अक्लमंद होते हैं। बड़ी ही लचीली खोपड़ी होती है उनकी, और इस प्रकार के जड़ाऊ काम के लिए तराशने-घिसने में आसान होती है।''

''लेकिन, भई उस कंटक का सिर तो ब्राह्मण का है। क्यों ठीक है न जमादार? ब्राह्मण की खोपड़ी तो भरी-भरी सी होती है—उसमें भेजा होता है। हमें तेरी जैसी खोखली—थोथी खोपड़ी की आवश्यकता है। थोथा चना बाजे घना। पुलिस ने हमें सूचित किया है कि उस कंटक का खानदान ऊँचा, कुलीन तथा बुद्धिमान समझा जाता है और सुना है, उसका पिता प्रकांड पंडित, शास्त्री था।''

''हाँ जी, हाँ। न केवल शास्त्री, भई उस कंटक का बाप बड़ा ज्ञानी तथा परोपकारी ब्राह्मण था, हुजूर! उसके बाप ने अपनी अपार धन-दौलत अंत में एक अनाथालय को धर्मार्थ दान की!''

''अच्छा! भला कितना धन था उसके पास!'' फटी-फटी आँखों से जमादार ने बीच में ही पूछा।

''तीन मरियल, अस्थि-पंजर बने बेटे और एक बेटी।'' खी-खी करके रफीउद्दीन ने अपनी बत्तीसी दिखाई। बेचारा भोला-भाला जमादार खिसिया-सा गया। रफीउद्दीन आगे कहने लगा, ''उन सभी बच्चों को उसने अनाथालय में भेज दिया। उन कँगले, खंगर लगे, घटिया बच्चों में यह कंटक सबसे बड़ा भाई था जो यहाँ बाबू बनना चाहता है, और वह बहन कलकत्ता में पूरे मछली-बाजार की दुलहनिया बनकर पनवाड़ी की दुकान में बैठती है, हुजूर! मैंने खुद अपनी आँखों से उसे देखा है, पान भी चबाया है उसकी दुकान का। कैसा खानदान और काहे का चरित्र जी! पुलिस को इसीने छू-छू बनाकर सफेद झूठ बोला जिसे उन्होंने भी अपनी रिपोर्ट में दर्ज किया। और क्या! ऐसे घटिया किस्म के, दो टके के आदमी को आप बाबू बनाते हैं, उसे सिर-आँखों पर बैठाते हैं और हमारे जैसे सरकार के वफादार जाँबाज, दिलेर फौजियों को कुत्ते की मौत मरवाते हैं इन कोठरियों में। यह कैसी अंधेर नगरी है!''

''अच्छा, जमादार, कल से इसे कोल्हू में लगा देना। यदि तुम यह काम ठीक-ठीक पूरा करते रहोगे तो तुम्हें छह महीनों के बाद कुछ हलका-फुलका काम दूँगा। हाँ, पर देखो, तुम्हें यह वाहियात, ऊलजलूल बकबक, बेकार मगज के कीड़े दौड़ाकर दूसरों का दिमाग चाटने की बुरी आदत छोड़नी होगी। किसी से भी अवज्ञाकारी, चीं-चपड़ नहीं करनी होगी और याद रखो, यदि आइंदा फिर कभी इस बंदीगृह के रास्ते को भंग किया, धींगामुश्ती या कोई हंगामा खड़ा किया तो तुम्हारी हड्डी-पसली एक कर दूँगा। भगोड़े दंडित को एकदम गोली से उड़ाने का नया अधिकार अब हम लोगों को दिया गया है।

''लेकिन तुम यह मत भूलना कि तुम पहले काले पानी से भागे हुए कैदी हो।''

''सरकार, वह मेरा अक्षम्य अपराध है। लेकिन पहले से ही पश्चात्ताप से मेरा मन बिलकुल राख हो चुका है। उस दुष्कर्म से क्या पाया मैंने? पहले से सौ गुना अधिक यातनाओं में फँस गया, फिर से उसी कोठरी में आकर बेड़ियों से हाथ-पाँव जकड़े बंदियों में सड़ने लगा हूँ। अब आपके निकाल देने पर भी मैं इस काले पानी से जाने का नाम भी नहीं लूँगा जी! कुछ भी काम करूँगा, जो आप देंगे, जब आप कहेंगे तब यहीं घरबार बसाऊँगा! हाँ, पर मेरी शादी सरकार रचाएँ तो बड़ी कृपा होगी। अब मेरी माटी इसी धरती पर गिरेगी। आपके चरणों में यही प्रार्थना है कि इस कालकोठरी से मुझे निकाला जाए।''

''अच्छा, जमादार, कल से इसे कोल्हू में लगा देना। यदि तुम यह काम ठीक-ठीक पूरा करते रहोगे तो तुम्हें छह महीनों के बाद कुछ हलका-फुलका काम दूँगा। हाँ, पर देखो, तुम्हें यह वाहियात, ऊलजलूल बकबक, बेकार मगज के कीड़े दौड़ाकर दूसरों का दिमाग चाटने की बुरी आदत छोड़नी होगी। किसी से भी अवज्ञाकारी, चीं-चपड़ नहीं करनी होगी और याद रखो, यदि आइंदा फिर कभी इस बंदीगृह के रास्ते को भंग किया, धींगामुश्ती या कोई हंगामा खड़ा किया तो तुम्हारी हड्डी-पसली एक कर दूँगा। भगोड़े दंडित को एकदम गोली से उड़ाने का नया अधिकार अब हम लोगों को दिया गया है। पिछली सरकारी ढील के भरोसे पर पहले जैसा चक्कर मत चलाना। बच्चू, अब मुझसे तुम्हारा पाला पड़ा है। तुम्हारे पिछले गुनाहों को चलो मैं भूल जाता हूँ। हाँ, आइंदा समाज को किसी भी प्रकार का उपद्रव न देते हुए मेहनत की रोटी कमाओगे, तभी। जमादार, इसे इस कालकोठरी से निकालो और

कोल्हू पर भेज दो। दिन भर वहीं पर वहाँ के बंदियों में घुल-मिलकर रहने दो। रात में इसे यहीं पर बंद किया करो।''

उस कक्ष-कारागृह में हर इमारत के आँगन में एक छपरी बनाई गई थी। उसी में कोल्हू का—जो पाँव से चलाया जाता था—काम चलता था। लकड़ी के एक बड़े से कोल्हू में एक जुए जैसा बड़ा सा डंडा जोड़कर उसके हर तरफ दो आदमी लगाए जाते। कोल्हू में सरसों डाल हर एक व्यक्ति को तीस पौंड तेल शाम तक निकालना अनिवार्य था। बैलों के स्थान पर लगाए गए ये आदमी दिन भर उस कोल्हू के चारों ओर गिरगिराते रहते। इसमें किसी ने काम से जी चुराकर जरा सी भी ढिलाई की तो ऐसे वार्डरों की वहाँ नियुक्ति की गई थी जो उन्हें बैलों जैसे ही हाँकते थे। उस छपरी में इस प्रकार के कोल्हुओं की लंबी कतारें थीं और उन सभी लोगों की निगरानी के लिए एक मेट या मुखिया नियुक्त किया जाता। यह मेट उन दंडितों में से ही चुना गया एक दूसरी श्रेणी का जमादार होता। उस काम की मेहनत इतनी कठिन तथा पीड़ादायी होती कि परले दरजे का घुटा हुआ कैदी भी इस छपरी में कदम रखते ही रुआँसा होकर निढाल हो जाता और उसे नानी याद आ जाती। उनमें से जो पहुँचे हुए शोहदे होते वे जब टालमटोल करने लग जाते तो शाम को उन्हें तब तक उसी तरह जोता जाता, जब तक तेल का निश्चित कोटा पूरा नहीं हो जाता। आवश्यकता पड़ने पर रात सात-आठ बजे तक भी। शाम का भोजन भी उन्हें तब तक नहीं दिया जाता जब तक तेल का कोटा पूरा नहीं होता। इस प्रकार सख्ती बरती जाती, इसीलिए तो बड़े-बड़े पहुँचे हुए डाकू-लुटेरे, हत्यारे, ग्रामकंटक आदि छँटे हुए कैदियों पर भी कुछ अंकुश रहता, उनसे थोड़ा-बहुत काम लेना संभव होता। जो दुर्बल अथवा उस बंदीशाला में रहते हुए भी सदाचारी रहते हैं, उन्हें इस कठोर परिश्रम के काम पर सहसा नहीं लगाया जाता, कम-से-कम यही रिवाज था कि उन्हें इस तरह के काम पर नहीं लगाया जाना चाहिए।

इस कोल्हू के काम से रफीउद्दीन पूर्वपरिचित था ही, इसलिए वह उन अंतस्थ खूबियों से भी परिचित था कि यह काम न करते हुए किस प्रकार किया जा सकता है। उसपर वह कोल्हू ही नहीं, वह मेट जो कैदियों में से ही दूसरे दरजे का अधिकारी था और जिसे उसपर निगरानी के लिए नियुक्त किया गया था, वह रफीउद्दीन से उस जमाने से परिचित था जब उसका काले पानी पर पहले वास्तव्य था। अत: वही कोल्हू, जो बंदीपाल ने कठिन से भी कठिन काम के रूप में उसे दिया था, उसे बाएँ हाथ का खेल लगने लगा। पहले ही दिन उस मेट के हाथ में रफीउद्दीन के हाथ चलाते-चलाते 'हलदी की एक गाँठ' चुपचाप देते ही उनकी पुरानी यारी नई, तरोताजा बन गई और रफीउद्दीन कुंडली मारकर बैठा इतमीनान से गप्पें हाँकते रहने लगा। उसके स्थान पर वह मेट किसी अन्य कैदी को झाँसा-पट्टी देकर चोरी-छिपे लगाता। शाम ढलने से पहले रफीउद्दीन के हिस्से का तेल पूरा-पूरा रफीउद्दीन के नाम पर नाप-तोलकर दे दिया जाता। यह कार्यक्रम तीन-चार दिन तक चलता रहा।

इस दंडित मेट के अधिकार में जो दंडित वार्डर थे, उनमें जोसेफ उसका बड़ा मुँह-लगा बन गया था, क्योंकि वह उसे चोरी-छिपे बड़े-बड़े लोटे भर-भरके दही ला देता। बंदियों को हफ्ते में दो बार दही मिलता। उसका बँटवारा होते ही इस इमारत के कैदियों के हिस्से का सारा-का-सारा दही जोसेफ डाँट-डपटकर, डरा-धमकाकर छीन लेता और वह उस मेट को दे देता। वह छपरी की ओट में बैठकर गुपचुप उसे गटक लेता। इस जोसेफ को जेवर और पैसे हड़प लेने के लालच से अपने दोनों नन्हे-नन्हे सालों को बहला-फुसलाकर भोजन के लिए घर बुलाकर भोजन में विष मिलाकर उन्हें जान से मारने के घोर अपराध के लिए आजन्म कारावास हो गया था। और यह मेट जलनवश कुल्हाड़ी से अपनी बीवी की बोटी उड़ाने के अपराध के लिए पिछले दस वर्षों से काला पानी, आजन्म कारावास का दंड भुगत रहा था। इस प्रकार मेट तथा जोसेफ वार्डर की अनूठी जोड़ी थी। इस इमारत में कोल्हू के बैल बनाए गए चालीस-पचास बंदियों को धता देकर निकालने का काम और साम-दाम-दंड-भेद किसी भी उपाय से उनसे तेल पिसवाने का दायित्व इस जोड़ी पर होता। जो पैसे खिलाते अथवा अत्यंत धृष्ट इस मेट के दास होते उन्हें आराम से बैठाया जाता और उनके काम की कसर उनकी तुलना में सुशील, कायर, सहिष्णु कैदियों से कलेजा तोड़-तोड़कर मेहनत करवाकर पूरी की जाती। सा.अ.

प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित वीर सावरकर साहित्य

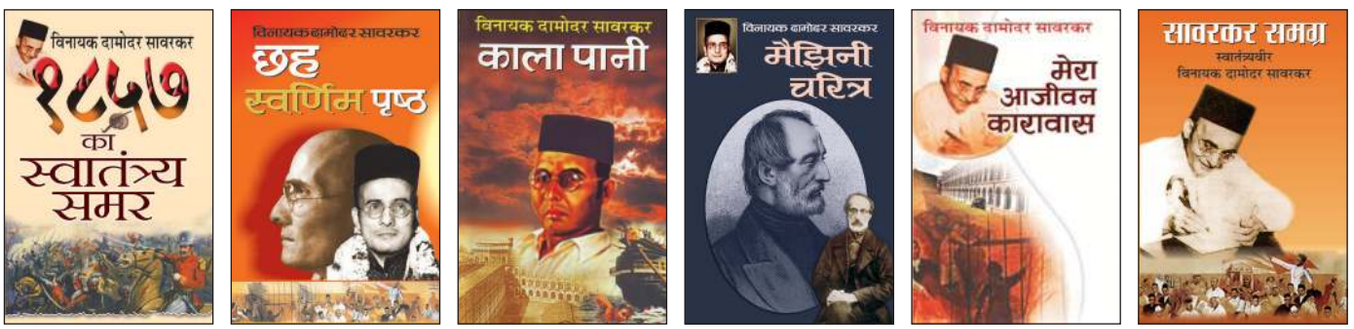

(दस खंडों में)

प्रेम की अनन्य पुजारिन मीरा

• राहुल

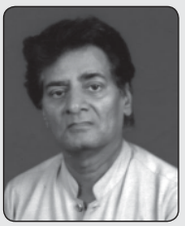

जाने-माने आलोचक-कवि। 'प्रजातंत्र, कहीं अंत नहीं', 'जंगल होता शहर', 'महानायक सुभाष', (कविता-संग्रह), 'युगांत' (प्रबंध काव्य) चर्चित; संपादित कृतियों के साथ-साथ दर्जन भर बाल-साहित्य और राजभाषा हिंदी से संबंधित पुस्तकें भी। हिंदी अकादेमी, साहित्य मंडल, नाथद्वारा एवं अन्य साहित्यिक-सांस्कृतिक संस्थाओं से कई सम्मान प्राप्त।

मध्यकालीन संत-भक्तों में मीराबाई संभवत: एकमात्र महिला थीं और फिर राज-परिवार से संबंध रखती थीं, इसलिए वे और उत्सुकता का कारण बनीं। उनकी रचनाओं में उनके व्यक्तिगत जीवन की विशेषताएँ बिंबित-प्रतिबिंबित होती हैं। राज-परिवार में पैदा होने और विवाह होने के पश्चात् उनका जीवन अति संघर्षपूर्ण, घटना-प्रधान, राजकीय मर्यादा, कुल मर्यादा, पारिवारिक बंधन, चारों ओर व्याप्त धार्मिक वातावरण, कट्टरतापूर्ण विषम परिस्थितियों, विविध संप्रदाय, पूजा-ज्ञान, वैराग्य, उपासना, सत्संग, भक्तियोग, लोक-व्यवहार और दर्शन आदि के दुर्गम मार्ग से होकर गुजरा था। इन समस्त स्थितियों-परिस्थितियों के बीच जीवन की सारी शक्ति लगाकर चलना पड़ा था उन्हें, इसलिए उनके पदों में सगुण ब्रह्म के साथ निर्गुण ब्रह्म के प्रति गहरी आस्था और भक्ति-भावना की विश्वसनीयता मिलती है।

प्रेम की अनन्य पुजारिन मीरा के भक्तियोग-दर्शन पर बात करने से पूर्व उनकी जन्मतिथि, स्थान, गुरु-पक्ष पर विचार करना निहायत जरूरी है। मीराबाई का जन्म संवत् १५६० के आस-पास हुआ था। वे जोधपुर नगर (सं. १५१५ वि.) बसानेवाले राव जोधाजी (सं. १४७३-१५४५ वि.) के चतुर्थ पुत्र राव दूदाजी की पौत्री और उनके सबसे छोटे पाँचवें पुत्र रत्नसिंह (मृत्यु संवत् १५८४) की इकलौती पुत्री थीं। राव दूदाजी को अपने पिता की ओर से मेड़ता जागीर के रूप में मिला था। इसीलिए उन्होंने संवत् १५१८ (सन् १४६१ ई.) में मेड़ता को अपनी राजधानी बनाया। कालांतर में उनके वंशज मेड़ता में रहने के कारण 'मेड़तिया राठौर' कहलाने लगे। रतनसिंह को अपने पिता से जीवन-निर्वाह के लिए बारह गाँव मिले थे। मेड़ता के निकट 'पांडलू' उन्हीं में से एक गाँव था। इसी गाँव में भक्ति की उस महादेवी 'मीरा' का जन्म हुआ था। ऐतिहासिक तथ्यों से भी इसकी पुष्टि होती है।

डॉ. ब्रिजेंद्र कुमार सिंघल ने अपने ग्रंथ 'मीराबाई' में उनकी प्रामाणिक जीवनी एवं मूल पदावली का गंभीरता से अध्ययन करते हुए उक्त तथ्यों को प्रस्तुत किया है और माना है कि मीरा का जन्म मेड़ता में हुआ था।

मीराबाई की जन्मतिथि के बारे में विद्वानों में मतैक्य नहीं है, जिसका अंतराल वि.सं. १४६० (सन् १४०३) से सं १५६३ (सन् १५१६ ई.) तक फैला हुआ है। किंतु नवीन अनुसंधानों और विलंब से प्राप्त कुछ अकाट्य प्राचीन प्रमाणों के आधार पर अब यह निश्चित हो चुका है कि उनका जन्म सं. १५६१ (सन् १५०४ ई.) में और मृत्यु सं. १६१५ (सन् १५५८ ई.) से सं. १६२० (सन् १५६३ ई.) के मध्य हुई। डॉ. ब्रजेंद्र सिंघल ने मीराबाई का जन्म श्रावण शुक्ल एकम वि.सं. १५६१ में मेड़ता में तथा द्वारकाधीश के विग्रह में विलय वि.सं. १६०३ (सन् १५४६ ई.) में माना है। इसके अनुसार ४२ वर्ष में उनका देहावसान द्वारका में हुआ।

मीराबाई के जीवन संबंधी ऐतिहासिक तथ्यों से विदित होता है, उनको जन्म से कुशाग्र बुद्धि, चेतना और ज्ञान प्राप्त था। उनके पदों में उनकी अंतर्वेदना, विरह-भावना, भक्ति-भावना, अदम्य शक्ति-साहस को देखकर उनके महान् व्यक्तित्व का अनुमान लगाया जा सकता है।

इतिहास गवाह है, बाल्यावस्था में ही उनकी माता वीर कुँवर (झाला राजपूत सुरतान सिंह की पुत्री) का देहांत हो गया था, इसलिए उनका लालन-पालन मेड़ता में उनके पितामह राव दूदाजी ने किया। सब दूदाजी परम वैष्णवी और भगवान् विष्णु के उपासक थे। उनके संपर्क में रहने के कारण मीरा के बाल-हृदय पर उनकी भक्ति-भावना का गहरा प्रभाव पड़ा। इस बाल स्नेही और बालपने की प्रीति का मीरा ने अपने पदों में उल्लेख किया है।

विक्रमी संवत् १५७२ में मीरा के पितामह राव दूदाजी का देहांत हो गया और उनके स्थान पर रतनसिंह के सबसे बड़े भाई वीरमदेव (सं. १५३४-१६०० वि.) गद्दी पर बैठे। उन्होंने सं. १५७३ (सन् १५१६ ई.) की अक्षय तृतीया के दिन मीरा का विवाह (बारह वर्ष में) चित्तौड़ के सिसोदिया वंशीय राणा साँगा सं. १५३९-८५ वि.) के ज्येष्ठ पुत्र कुँवर भोजराज के साथ कर दिया। राणा साँगा की मृत्यु के पश्चात् भोजराज के छोटे भाई रतनसिंह सं. १५८४ में चित्तौड़गढ़ के राणा हुए। रानी हांडी से उत्पन्न उनके सौतेले भाई विक्रमादित्य के मामा राव सूरजमल ने बूँदी की सरहद पर रतनसिंह को मौत के घाट उतार दिया।

इस प्रकार सं. १५८८ में मीरा के सिर से रतनसिंह का साया भी उठ गया।

राणा विक्रमादित्य (सं. १५८८-९३ वि.) बहुत कठोर और अत्याचारी शासक थे। उन्होंने मीरा को कभी चैन से रहने नहीं दिया। चूँकि मीरा, जो बचपन से ही गिरधर गोपाल को अपना इष्ट मानती थीं, पति के जीवनकाल में भी वे अपने गिरधर गोपाल (श्रीकृष्ण) को नहीं भूली थीं। पति की मृत्यु के पश्चात् तो पूर्णत: गिरधर गोपाल की ही हो गईं। लोक-लज्जा त्यागकर वे उन्हीं के प्रेम में लीन हो गईं। खुलेआम

साधु-संतों का सत्संग करने लगीं और अपने गिरधर गोपाल के सामने करताल बजा-बजाकर नाचने लगीं। यह देखकर विक्रमादित्य ने उनपर अनेक प्रकार के प्रतिबंध लगाए, किंतु अपनी धुन की पक्की मीरा ने उनके प्रतिबंधों की परवाह नहीं की, बल्कि दूने उत्साह से भक्ति में लीन हो गईं। अपनी विधवा बहू का शृंगार धारण करना, योगिनी वेश बना लेना, नाचना, गाना, साधु-संतों से मिलना उन्हें अमर्यादित लगता था।

कुपित होकर राजा विक्रमादित्य ने मीरा को अनेक शारीरिक-मानसिक कष्ट दिए, यहाँ तक कि विष का प्याला भेजा और मीरा चरणामृत समझकर पी गईं, फिर उन्हें काल कोठरी में बंद तक कर दिया। जब उनकी सारी युक्तियाँ असफल हो गईं तो मीरा के गिरधर गोपाल की मूर्ति को जमीन में गड़वा दिया। कहते हैं, दूसरे दिन प्रात:काल वह मूर्ति सिंहासन पर स्वयं प्रकट हो गई। फिर राणा ने एक विषैला साँप पिटारे में बंद करके भेजा। मीरा ने उस सर्प को अपने गले में डाल लिया, वह सर्प उनके गले में पड़ते ही माला बन गया। इस चमत्कार के बारे में सुनकर वह अचंभित रह गए। ऐसी अनेक यातनाओं को सहते-भोगते हुए भी मीरा अपनी अटूट भक्ति में लीन रहीं। उन्होंने अपने अनेक पदों में इन सबका जिक्र किया है।

मीरा के कष्टों की कथा सुनकर उनके पितृत्व वीरमदेव (सं. १५८८-८९ वि.) ने उन्हें मेड़ता बुला लिया। वे और उनके पुत्र जयमलजी उनका बहुत आदर-सत्कार करते थे। वहाँ पहुँचकर मीरा भी निर्विघ्न रूप से भजन-कीर्तन और पूजन में मग्न रहती थीं। किंतु अधिक समय तक वहाँ भी न रह सकीं। तीर्थाटन और सत्संग के मनोभाव से वे वृंदावन गईं, जहाँ चैतन्य-संप्रदाय के श्रीजीव गोस्वामी से उनकी भेंट हुई। इसके बाद वे द्वारका (सं. १६०० वि.) चली गईं। वहाँ उन्हें मेवाड़ के राणा का निमंत्रण-पत्र मिला, जिसमें वापस लौट आने का आग्रह था। लौटने के लिए जब वे रणछोड़जी से आज्ञा लेने मंदिर में गईं तो वहीं उनकी मूर्ति में समा गईं। यह घटना सं १६०३ विक्रमी की है। कहीं-कहीं उनकी मृत्यु सं. १६१५ और १६२० वि. (हिंदी साहित्य का इतिहास, संपा. डॉ. नगेंद्र, पृ. २५०) लिखी हुई है। इसके अनुसार मीरा की मृत्यु ५४ वर्ष की उम्र में हुई थी, मेरे मतानुसार भी सं. १६१५ वि. (सन् १५५८ ई.) प्रामाणिक सिद्ध होता है। जबकि डॉ. सिंघल और कुछेक अन्य के शोध के अनुसार उनकी उम्र ४२ वर्ष ही ठहरती है।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर अब मीरा के जन्मस्थान और वंश के विषय में कोई मतभेद की गुंजाइश नहीं बचती, फिर भी 'जने-जने मतिर्भिन्ना', क्योंकि कोई भी कथन या तथ्य-तर्क-प्रमाण अंतिम नहीं कहा जा सकता। सदियों की बारीकियों और विश्लेषण क्षमता से ऐसे किसी भी संत—कबीर, सूर, तुलसी, रैदास, नंददास, संत सींगा आदि के जन्म तर्कातीत नहीं कहे जा सकते।

मीरा की भक्ति कांता-भाव की भक्ति थी। कुछ समालोचक उनपर चैतन्य संप्रदाय का प्रभाव ले कुछ निंबार्कीय परंपरा का प्रभाव देखते हैं। लौकिक दृष्टि से भोजराज उनके पति हैं, किंतु आध्यात्मिक दृष्टि से गिरधर गोपाल उनके 'परमपति' हैं। अपने भक्ति क्षेत्र में उन्होंने अपने परमपति को कहीं सगुण, कहीं निर्गुण रूप से चित्रित किया है। किंतु उनके राम तुलसीदास के 'दशरथ सुत' राम नहीं, कबीर आदि संत कवियों के आराध्य निर्गुण-निराकार राम हैं। जहाँ उन्होंने अपने 'परमपति' को निर्गुण-निराकार रूप में याद किया है, वहीं कबीर आदि ज्ञानी भक्तों के प्रभाव से उनकी भक्ति भावना रहस्यात्मक हो गई है—

मेरो को नहिं रोकणहार, मगन होइ मीरा चली।
लाज-सरम, कुल की मरजादा, सिर सैं दूरि करी।
मान-अपमान छोड़ घर पटके, निकसी हूँ ज्ञान-गली।
ऊँची अटरिया, लाल किवड़िया, निर्गुन सेज बिछी।

संत सच्चे ज्ञानी थे। संतों ने अपनी साधना पद्धति में नाथ संप्रदाय के निर्गुण बहन, हठयोग, ज्ञान की अंतर्मुखी साधना को अपना लिया था। उनके समय समाज के अंधविश्वास-कर्मकांडों में बलि-प्रथा, धर्म के नाम पर हिंसा, छुआछूत, ऊँच-नीच, जात-पाँत का बड़ा भेदभाव था। हिंदू-मुसलमानों का सांप्रदायिक विरोध भी चारों ओर फैला हुआ था। परंतु संत कवि समदर्शी थे, मानवतावादी थे, अहिंसावादी, सदाचारी और पाखंडों के विरोधी थे। उनकी तरह मीरा ने भी समाज में व्याप्त तमाम बुराइयों, अंधविश्वासों का पुरजोर विरोध किया। एक योगी की सीधी-सच्ची भक्ति-भावना मीरा में भी मिलती है। वे सहिष्णु हैं, क्षमाशील हैं, अहिंसक, करुणा-दयाशील हैं, सत्यवादी हैं, प्रेम की पवित्रता उनमें थी। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने भी लिखा है कि 'मीराबाई अत्यंत उदार मनोभाव संपन्न भक्त थीं। उनके काव्य में हठयोग साधना के संकेत भी मिलते हैं, भले ही वे प्रतीकात्मक हैं। श्रीकृष्ण के प्रति उनकी अनन्यता ध्यान की एकाग्रता, संसार से विमुखता, माया-मोह से त्याग, आत्मचिंतन दर्शन की उत्कट लालसा पाई जाती है। उन्होंने अपने समकालीन अनेक संत-साधकों से सत्संग किया और उनके प्रभाव को ग्रहण कर अपने जीवन में उतारा, अपनी साधना में डाला। मीरा के विरह-वर्णन में गोस्वामी की सभी अंतर्दशाएँ मिलती हैं। उनके अतिरिक्त बल्लभ संप्रदाय का भी प्रकारांतर से प्रभाव परिलक्षित होता है। उनकी भक्ति का आधार पुष्टिमार्गी है। इस संप्रदाय ने साधना और व्यवहार-क्षेत्र में शुद्धाद्वैत दर्शन के साथ भक्ति को स्थान दिया है। मीरा ने भी अपने एक पदांश में इसकी पुष्टि की है—

गौर कृष्ण की दासी मीर, रसना कृष्ण बसै।

वृंदावन श्रीकृष्ण का परम धाम माना गया है, जो कि नित्य और परम आनंदमय है। वृंदावन की सजीव और निर्जीव प्रकृति श्रीकृष्ण से अभिन्न है। पुष्टिमार्गी कवियों ने उसकी खूब प्रशंसा की है। मीराबाई ने

वृंदावन की छवि को इन पंक्तियों में व्यक्त किया है—

आली, म्हारे लागा वृन्दावन नीका।
घर-घर तुलसी, अंकुर पूजा, दरसन गोविंदजी की।
निरमल नीर बहत जमणा माँ, भोगन दूध-दही का।
रतन सिंहासण आप विराज्यै, मुकुट धरेवा तुलसी का।
कुंजन-कुंजन फिरत साँवरा, संवाद सुण्या मुखी का।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, भजन बिना नर फीका।

इस प्रकार श्रवण, कीर्तन, स्मरण, चरण सेवन, अर्चन, वंदन, दास्य, साख्य, आत्मनिवेदन नवधा भक्ति के नौ भेद हैं। पुष्टिमार्गी भक्ति में नवधा-भक्ति की बड़ी मान्यता है। मीरा की भक्ति दांपत्य भाव की है, यथा भज मन चरण कमल अविनासी। डॉ. सिंघल ने लिखा है, मीराबाई का गिरधर गोपाल से संबंध स्वकीया भाव का था, परकीया भाव का नहीं। मीरा ने होली के पद निर्मित किए हैं। विरह पद लिखे हैं, किंतु कहीं भी उन्होंने अपने पदों में दांपत्यभाव को व्यक्त नहीं किया है। श्रीकृष्ण अन्य स्त्रियों के प्रति अनुरक्त हैं, इसलिए मेरे से मिलते नहीं, बोलते नहीं, सेज सुख देते नहीं। इतना ही नहीं, उनको न मुरली से शिकायत है, न गोपियों से शिकायत है और न सखाओं से। यदि शिकायत है तो मात्र श्रीकृष्ण से है कि वह आकर विरहिणी मीरा में मिलते क्यों नहीं? दर्शन देते क्यों नहीं?

यहाँ यह विशेष ध्यातव्य है कि मीरा ने अपने समय के सभी संतों जैसे रामानुज, मधवाचार्य, रैदास, चैतन्य, विट्ठलनाथ तथा गोस्वामी भक्तों को अपना 'गुरु' माना है। वास्तविक रूप में गुरु वह होता है, जो अपने शिष्य को 'गुरु मंत्र' दीक्षा देता है और शिष्य उसका जीवन भर पालन करता है। कबीर ने कहा—

यह तन विष की बेलरी गुरु अमृत की खान।
सीस दिए जो गुरु मिलै तो भी सस्ता जान॥

इसी संदर्भ में गुरु माहात्म्य को प्रतिपादित करते हुए तुलसीदास लिखते हैं, 'बिन गुरु होई न ज्ञान।'

तत्त्वत: गुरु वही है, जो आत्मज्ञान द्वारा मोक्ष-साधन का पाठ पढ़ाता है और आचरण कराता है। मनुष्य (भक्त) में जो बीड़ा रूप में रहता है, गुरु उसी को विकसित करता है, मंद सुगंध को बाहर निकालता है। मीरा के गुरु के बारे में कुछ विद्वानों का मत है कि रैदास उनके गुरु थे और उन्होंने काशी में जाकर उनके दर्शन किए थे। लेकिन यह भी सच है कि मीराबाई कभी काशी गई ही नहीं थीं। रैदास उनके भावनात्मक गुरु थे। इसी तरह उन्होंने सत्संग के दौरान जिन आचार्यों-महात्माओं, संतों के दर्शन किए, ज्ञान लिया, उन्हें अपने गुरु के रूप में मान लिया। यहाँ यह भी तथ्य विचारणीय है कि वे विभिन्न संप्रदायों से प्रभावित थीं।

प्रेम-योगिनी मीरा की भक्ति के संबंध में कई भ्रांतियाँ हैं। वे पगली-दिवानी, भक्ति में डूबी स्त्री नहीं थीं, बल्कि उनका लालन-पालन एक स्वाभिमानी, आत्मनिर्भर और जीवन की उठापटक से अवगत विवेकशील युवती के रूप में हुआ था। वे श्रीकृष्ण की अनन्य उपासिका थीं। वे प्रारंभ से ही श्रीकृष्ण को पति रूप में मानती थीं, अत: उनके आराध्य श्रीकृष्ण ही उनके सर्वस्व हैं—

मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरों न कोई।
जाके सिर मोर मुकुट मेरो पति सोई॥

वह कहती हैं, मैं तो कृष्ण के रंग में रँग गई हूँ। वे मेरे पति हैं। अत: मैं विधवा नहीं, सौभाग्यशालिनी हूँ। इसलिए सभी शृंगार सजाकर, पैरों में घुँघरू बाँधकर और लोकलाज को छोड़कर मैं नाचती हूँ। साधुओं की संगति से मेरी बुद्धि शुद्ध हो गई है और मैं सच्ची भक्तन बन गई हूँ। उन्होंने गिरधर लाल से रसीली (रागानुज) मधुर-भक्ति माँग ली है। क्योंकि—

मैं तो साँवरे के संग राची।
साजि सिंगार बाधि पग घुंघरू लोकलाज तज नाची।
गई कुमति, लई साधु की संगति, भगत रूप भई साँची।
गाय, गाय हरि के गुण निसदिन, काल व्याल मू बाँची।
उठा बिन सब जग खाटी लागत और बात सब काँची।
मीरा श्री गिरधर लाल सूं भगति रखीली जाँची।

वे श्रीकृष्ण को केवल पति रूप में ही नहीं मानतीं, उनकी इसी रूप में उपासना भी करती हैं। वे अपने पति के गुणों का गान करती हैं, उनकी मूर्ति के सामने नाचती हैं, गाती हैं और मुग्ध होती हैं। उनसे मिलने की उत्कट अभिलाषा अभिव्यक्त करती हैं। उन्होंने श्रीकृष्ण पर अपना सर्वस्व निछावर कर दिया है। वे श्रीकृष्ण के युवारूप की उपासिका हैं। उन्हें अपने नैनों में बसा लेना चाहती हैं, ताकि वे हर समय उनके ध्यान में प्रतिबिंबित होते रहे—

बसो मेरे नैनन में नंदलाल।
मोहनी सूरत, साँवरी सूरत, नैना बने बिसाल।
अधर सुधारस मुरली राजत, उर वैजयंती माल।
छुद्र घंटिका कटि तट सोभित नूपुर सबद रसाल।
मीरा प्रभु संतन सुखदाई, भक्त बछ्ल गोपाल।

ऐसे अनेक उदाहरण पेश किए जा सकते हैं, पर यहाँ मेरा उद्देश्य दृष्टांत देना नहीं, बल्कि उनकी भक्ति और उनके व्यक्तित्व के उन अछूते प्रसंगों पर प्रकाश डालना है, जो अब तक उजागर नहीं हुए। मीरा की भक्ति में निम्नांकित तत्त्वों का सुंदर समन्वय था, जिससे वे सिद्धि की ओर बढ़ी थीं। डॉ. मदनलाल शर्मा ने इन्हें तीन रूपों में माना है—

१. शांता भक्ति : जिसमें ज्ञान, सदाचार, सत्संग, तप, वैराग्य और सहिष्णुता होती है।

२. कांता भक्ति : जिसमें प्रेम, श्रद्धा, विरह ताप आदि का समावेश होता है। इसे माधुर्य भक्ति भी कहते हैं।

३. दास्या भक्ति : जिसमें भागवत की नवधा भक्ति और दास्य भावना की प्रधानता रहती है।

मीरा यद्यपि श्रीकृष्ण के माधुर्य भाव की संपोषिता थीं, परंतु उन्होंने ज्ञान, वैराग्य, सदाचार और सत्संग का पूर्ण परिपालन किया था।

मीरा की भक्ति के मुख्यत: दो प्रकार हैं—साधन रूपा और साध्य रूपा। साधन रूपा भक्ति को नवधा भक्ति भी कहते हैं। इसके अंतर्गत

श्रवण-कीर्तन, पूजन, पाठ-सेवन आदि का विधान होता है। साध्य रूपा भक्ति प्रेममयी होती है। इसके अंतर्गत भक्त भक्ति की भी चिंता नहीं करता। मीरा की भक्ति साधन रूपा है और साध्य रूपा भी। उनकी साधन रूपा भक्ति पर एक ओर बल्लभ संप्रदाय का प्रभाव है तो दूसरी ओर वे चैतन्य संप्रदाय से भी प्रेरित-प्रभावित थीं।

यहाँ यह कहना अप्रासंगिक न होगा कि भक्ति-भावना को लेकर उत्तरी भारत में मध्ययुग (भक्तिकाल) में भक्ति की जो धारा प्रवाहित हुई, वह दक्षिण से आई थी। निंबकाचार्य हों या श्री वल्लभाचार्य, दोनों दक्षिण के ब्राह्मण थे। कुछ विद्वान् निंबार्कीय संप्रदाय को वैष्णव भक्ति का प्राचीनतम संप्रदाय मानते हैं। यह संप्रदाय सनकादि संप्रदाय के अंतर्गत आता है। इस संप्रदाय का दार्शनिक सिद्धांत भेदाभेदवाद या द्वैतवाद है। जीव अवस्था भेद से ब्रह्म के साथ भिन्न भी है तथा अभिन्न भी है। जीव ब्रह्म का अंश है, ब्रह्म अंशी है। जीव अणु है, अल्पज्ञ है। भक्ति ही मुक्ति का साधन है। विष्णु के अवतार रूप में कृष्ण ही उपास्य हैं। राधा-कृष्ण (यानी गोलोक बिहारी कृष्ण) का विधान इस संप्रदाय में है। इसे चैतन्य संप्रदाय भी कहते हैं। मीरा में स्वकीया मधुरा भाव के साथ परकीयामूलक सख्य भाव भी मिलता है। वह राधा और गोपी दोनों रूपों में श्रीकृष्ण को अपना पति और सखा मानती हैं—'मीरा के प्रभु श्याम मनोहर प्रेम पियारा मीत।'

बल्लभाचार्य का राधा-कृष्ण संप्रदाय आज संपूर्ण उत्तरी भारत में विख्यात है। सम्राट अकबर भी उनकी विद्वत्ता से प्रभावित थे। मीरा उक्त दोनों संप्रदायों के अतिरिक्त अपने आध्यात्मिक जीवन में तत्कालीन अन्य संप्रदायों, भक्तिधाराओं से प्रभावित थीं। उनके भक्ति-भावों को आत्मसात् कर उन्होंने अपनी भक्तिधारा को प्रवाहित किया। मीरा में कबीर और तुलसी की तरह आत्मनिवेदन भक्ति-भाव है। आत्मनिवेदन भक्ति का मूलाधार है। वे असहाय अबला नारी थीं, फिर विधवा होने के कारण समाज से तिरस्कृत भी थीं। अत: उन्होंने अपना हृदय अपने सच्चे प्रियतम श्रीकृष्ण के सामने खोलकर रख दिया—'हरि मेरे जीवन प्राण आधार।'

उक्त दोनों आचार्य भक्तिधारा के दो मजबूत कगार थे, जिनके बीच पूरी कृष्णभक्ति-सरिता प्रवाहित रही। मीरा इन दोनों कगारों की सेतु सी थीं। दोनों के ज्ञान-गुण-वैशिष्ट्य उनकी भक्ति में सम्मिलित थे। कर्नल टोंड ने अपनी चर्चित पुस्तक 'एनल्स एंड एक्टिंटीज ऑफ राजस्थान' में लिखा है कि असाधारण सौंदर्य और रूहानी भक्ति के कारण वे अपने समय की सर्वाधिक यशस्वी राजकुमारी थीं। उनका इतिहास एक प्रेमाख्यान है। वे उत्कृष्ट कोटि की कवयित्री थीं और उनकी कविता जनसाधारण में लोकप्रिय थी।

मीराबाई के समस्त पदों में न तो श्रीकृष्ण के रूप-वर्णन की विशेषता है और न लीला-वर्णन की। उसमें भक्ति की गहरी भावना और समर्पण, सदाचार, वैराग्य, विनय, त्याग, तप-सहिष्णुता और संतोष के साथ अप्रतिम प्रेम, विरह, मिलन का भाव व्यंजित हुआ है। कहीं-कहीं उनके पदों में उन्माद—'आयो सजना, फिरी गए अंगना में अभागन रही सोय री' और मूर्च्छा भाव की अभिव्यक्ति देखिए—

पग घुंघरू बाँधि मीरा नाची रे!
मैं तो मेरे नारायण की आप ही हो गई दासी रे!
लोग कहें मीरा भई बावरी न्यात कहै कुलनासी रे!
विष का प्याला राणा भेज्या पीवत मीरा हँसी रे!
मीरा के प्रभु गिरधर नागर सहज मिले अविनासी रे!

मीराबाई जहाँ सगुण ब्रह्म की उपासिका थीं, वहीं निर्गुण ब्रह्म के प्रति भी उनमें गहरा आस्था-भाव निहित था। यानी वह सगुण-निर्गुण दोनों भक्तिधाराओं से प्रभावित थीं। बचपन में ही श्रीकृष्ण की मूर्ति प्राप्त होने से उनके मन में कृष्ण के प्रति असीम श्रद्धा और भक्ति ने जन्म ले लिया था, जो आगे चलकर और प्रगाढ़ होती गई और वे पूर्णत: कृष्ण को समर्पित हो गईं—'मीरा मगन भई हरि के गुण गाय। मस्त भजन भाव में भरत डोलती गिरधर पैदल जाय।'

भले ही मीरा की सगुण भक्ति में निर्गुण उपासना का कोई स्थान नहीं है, लेकिन यह तय है कि वे 'नाथपंथ' से प्रभावित थीं। यही कारण है कि नाथपंथियों की निर्गुण भक्तिधारा की कुछ लहरें इनके काव्य में दिखाई देती हैं। साधना शौर्य में मीरा को सगुण-निर्गुण भक्ति के बीच की कड़ी कह सकते हैं। उनके पद (काव्य) अनुभूतिजन्य हैं, इन्हें आध्यात्मिक अनुभूतियों का संघट्ट कह सकते हैं। अपने युग की सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतियों प्रवृत्तियों और परंपराओं का भी प्रकारांतर से उन्होंने अपने पदों में उल्लेख किया है। ये उनके काव्य के सहज स्वाभाविक चित्रण हैं। उनके द्वारा रचित पूर्ण और अपूर्ण जो रचनाएँ प्राप्त हैं अथवा जिनका उल्लेख मिलता है, कुल ग्यारह हैं। डॉ. ब्रजेंद्र कुमार सिंघल ने भी अपने शोधात्मक लेखों में उनकी कई प्रामाणिक रचनाओं का जिक्र किया है।

मीराबाई के काव्य उनके हृदय से निकले सहज प्रेम-भावों, उच्छ्वासों का शब्दांकन हैं। उनमें उनकी वृत्ति सर्वथा प्रेम-माधुरी से सिक्त है। अपने आराध्य 'गोपाल' की विराट् छवि-छटा का वर्णन वे अनेकश: रूपायामों में करती हैं—

विरहनी बाबरी सी भई।
ऊँची चढ़ि अपने भवन में टेरत हाय दई।
ले आंधरा मुख अंसुवन पोछत उघरे गात सही
मीरा के प्रभु गिरधर नागर बिछुरत कछुन कही॥

× × ×

जब से मोहि नंदनंदन दृष्टि पड्यो भाई।
तब से परलोक लोक कछुना सुहाई।

× × ×

मेरी उनकी प्रीति पुराणी उन बिन पल न रहाऊँ।
जहाँ बैठाए तितही बैठूँ बेचे तो बिक जाऊँ।

इस प्रकार मीरा का संपूर्ण काव्य आत्म-व्यंजक काव्य है। उनके भक्ति-भावों का उनके जीवन से सीधा संबंध है। उनके पदों में उनके

जीवन के तमाम उतार-चढ़ाव, सुख-दु:ख, बरताव, व्यवहार क्रमश: निर्धारित हुए हैं। उनके काव्यों में प्रेम, प्रकृति, सहस्य, दर्शन, अध्यात्म से योग-वियोग आदि मनोवृत्तियों के चित्र मिलते हैं—

१. फागुन के दिन चार रे, होरी खेल मना रे!

२. भज मन चरण कमल अविनासी

३. रमिया बिन नींद न आवै

४. ऊची चढ़-चढ़ पंथ निहारूँ रोय-रोय अँखिया राती।

अस्तु, संक्षेप में कह सकते हैं कि मीरा का काव्य उच्च कोटि का साधना-काव्य है। वे प्रतीकात्मक और लाक्षणिक शब्दावली का प्रयोग करती थीं। लाक्षणिकता के कारण उनके कथन में चमत्कार, सजीवता और साहित्यिकता का अंश बढ़ गया है। कविता करना उनका उद्देश्य नहीं था, बल्कि उनकी भावनाएँ अनायास ही काव्यधारा में बहने लगती हैं—गीत की गुणात्मक ऊँचाई और गेयता की लयात्मकता उसका वैशिष्ट्य है। गेयता के तीनों तत्त्व—स्वर, ताल और लय का सुंदर समन्वय है। नाद-सौंदर्य पूर्ण रूप से संयत्र और व्यवस्थित है। अत: यह कहना अत्युक्तिपरक न होगा कि गेयता की दृष्टि से मीरा के पद सर्वोत्कृष्ट हैं।

साहित्य कुटीर, साइट २/४४
विकासपुरी, नई दिल्ली-११००१८
दूरभाष : ०९२८९४४०६४२

सियाचिन का पेड़

कहानी

● **जसबीर चावला**

ऐसा लग रहा था, वह पहली बार कोई पेड़ देख रहा है। पेड़ तो वैसा ही था, जैसे और थे। हरे-हरे पत्तों से भरे-पूरे, छायादार। पर मानो वह हरियाली को टकटकी लगा पी लेने का यत्न कर रहा हो!

पागल है क्या? जाँचने के लिए पीछे से मैंने कंधे पर अहिस्ता से हाथ धर कहा, ''पेड़ है!''

न वह चौंका, न अचकचाया। उसी तरह आँखें गड़ाए रहा, ''तीन साल नई देका!''

''जानता पेड़ ऐ! सात में खेल के, खेल के बड़ा हुआ!''

मद्रासी है, उसकी हिंदी ने बता दिया था; इसलिए मेरी जिज्ञासा और बढ़ गई। ''तीन साल··· ?'' मैंने हैरानी ओढ़ ली।

सीयाचीन में बाई साप काली वेट है···।

''ह्वेट छोड़कर कुछ बी नई ए।'' मेरी तरफ मुड़कर बोला, ''एक बार बी चूटी नई मिला।''

''तीन साल ओर कुचबी न···'' मैंने बीच में टोका, ''वहाँ तो काजू के पैकेट, टीन के डिब्बे हवाई जहाज से गिराए जाते हैं। खाने-पीने के बहुत मजे हैं! अखबार में सब छपता है। एक-एक जवान पर सरकार करोड़ों रुपए खर्च करती है। स्पेशल सूट है।'' मैंने उसकी वरदी को ताड़ा, यह तो वही सूती चालू जवान की वरदी है!

उसने दाँत दिखाए, ''टूट जाता! काजू नहीं टूटता! माइनस टेंप्रेचर है! रम है तो बंदा जिंदा है। सरदार है तो चौकी जिंदा है! सब बरप में दब जाता सर!'' मुझे गौर से देखकर उसने सँभाला खुद को। लगभग सावधान सा। उसकी आँखों में भी पेड़ का हरा रंग कहीं गहरा उतर गया, ''कागज देना बीर सिंह की माँ को! पिंड जाना ए। ओ नीचे से, नीचे से रोला पाया—माँ को देना···माँ को देना, ट्रंक में रखा है पॉलसी का कागज···''

''क्या आल-बाल बक रहा है। कभी कुछ बोलता है, कभी किधर की हाँकता है।'' मेरे कुछ पल्ले नहीं पड़ रहा था।

''एक पगड़ी से दूसरा पगड़ी बाँध के···बाँध के उतरा, बोला, मैं खड्ड सैड से फ्री होकर आता है नायडू, वाज मारूँ तो खींच लेना। मे कीचा···कीचा वो तो आया, आया आधा आया पिर गीटा कुल गिया··· बीर सिंह ऊधर पत्तर पकड़ के, पकड के चीका, बौत चीका। सब बरप में दब गया सर।'' उसकी आँखों में बर्फ की सफेद दहशत उभर आई थी, लगता दोनों पत्थर की हैं, वह जारी था ''नायडू···नायडू, माँ को देना ट्रंक में है कागज!''

सुनसान सियाचिन का बर्फीला विस्तार रोज दिन, सालोसाल लगातार बंदा, पागल हो जाए, उसकी मन:स्थिति अब खुलने लगी थी, क्यों वह स्टेशन के बाहर लगे झाड़ को पागलों-सा ताक रहा था। बीर सिंह के पिंड, छुट्टी मिलते ही पहला काम, मरनेवाले की अंतिम इच्छा, कागज पहुँचाकर करना चाहता था। तब वह अपने गाँव जा सकेगा, आत्मा का भार उतारकर। पर कैसे वह पेड़ से शायद यही पूछ रहा था! मसले पर गंभीरता की जकड़ हटाने के लिए मैंने कहा, ''इतनी बर्फ में आप लोग नहाते थे?''

''मिट्टी तेल का स्टोव होना। आग जलाके नई रक सकते! दुआँ से मर जाते। ऑक्सीजन कम है।'' टूटी-फूटी हिंदी में सही, उसने सब समझा दिया था, ''ऑक्सीजन है नहीं तो ईंधन जलेगा कैसे? धुएँ से भर जाएगा।'' कितने दिनों बाद उसे कोई बात करनेवाला मिला है, मैं सुनते-सुनते सोच रहा था। वह सोचते-सोचते बोल रहा था, ''रम पी के नहीं नहाना···मर जाता! नहा के आओ! बाद में पीओ। पीने के बाद ट्री देको! बरप का ट्री! सब ह्वेट ऐ! पीक है, काई है, बंकर है वैट! बीर सिंह है, उसका पाल्सी है, माँ को देना। उसके पिंड में ट्री है। मेरे को बोला, नायडू, माँ बैटा बोड तल्ले!

१२३/१ सेक्टर-५५
चंडीगढ़-१६००५५
दूरभाष : ०९४१७२३७५९३

राख के नीचे

• तुलसी देवी तिवारी

वह धीरे-धीरे उसका तलवा सहला रहा था। 'अपने पाँव नीचे मत रखना मिती, मैले हो जाएँगे। मैं तो हिंदुस्तान का राजा हूँ, तुम्हें सदा फूलों पर चलाऊँगा, हजारों नौकर-चाकर तुम्हारे इशारे के इंतजार में खड़े रहेंगे। फूलों को भी तोड़कर लाना नहीं पड़ेगा, जहाँ तुम मुझे देखकर मुसकराईं कि अपने आप फूलों की वर्षा हो जाएगी।' वह उसके होंठों को चूम रहा था।

'हाँ, मेरे प्यारे चंदन, मैं तुम्हारे राज्य की अकेली महारानी! बस कुछ ही महीने···।' लाल-नीले-पीले रंग के वलयों का ऊपर-नीचे होता नर्तन, दोनों एक-दूसरे का हाथ थामे आकाश में उड़ चले थे। बादलों के पार जहाँ परियाँ नाच रही थीं, मधुर संगीत बज रहा था। हौले-हौले सुबह हुई, पंछी जागे। ''उठो, ऐ सोनेवालो, भोर जगाए।'' अरे, यह क्या? बार-बार यही लाइन! वह हड़बड़ाकर उठ बैठी।

''यह कौन आ मरा सुबह-सुबह और वह कहाँ चला गया? जरा दरवाजा भी नहीं खोल सकता! कितना सुहाना सपना था, ओह!'' उसके पूरे अंग में झुरझुरी सी हो रही थी, उसपर सपने का प्रभाव पूरी तरह छाया हुआ था। जरा सा आँखें खोलकर उसने अपने गाउन की तलाश की, वह दूर पलंग के दूसरे किनारे पर पड़ा हुआ था। इस बीच कभी गाना बजता, जो उसके डोर वेल का रिंग टोन था, कभी दरवाजे पर थाप पड़ती।

''आ रही ऽ···ऽ···ऽ हूँ!'' उसने अनमने स्वर में आवाज का उत्तर दिया। उसके चेहरे पर नागवारी के भाव स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रहे थे।

उसने बगलवाले कमरे से दरवाजे की ओर बढ़ती पदचाप सुनी। 'अब जा रहा है, जब मेरा सपना टूट गया!' वह गुस्से से बड़बड़ाई, ''हाय! सिर दर्द से फटने लगा।'' उसने अपना सिर दोनों हाथों में लेकर दबाया।

वह लुंगी के ऊपर शर्ट पहनता दरवाजे की ओर बढ़ रहा था। दरवाजा खोला तो सामने कल्पना मैडम अपना बड़ा सा बैग सँभालती खड़ी थीं।

''आइए, आइए मैडम! आज सुबह-सुबह कैसे आना हुआ?'' वह दरवाजे से हट गया।

''सुबह ही है अभी तक, दोपहर के एक बज रहे हैं।'' मैडम अंदर आकर सोफे पर बैठ चुकी थीं।

''अच्छा हो, उसी से बात करती रहे, नंबर वन की माथा है डोकरी! सब बनावटी बालों में एक भी बाल सफेद नहीं मिलेगा। लगता है, हर हफ्ते पार्लर जाती है। दाँत भी अवश्य नकली ही होंगे। साड़ी की कलफ देखो, एकदम कड़क! अच्छी छनने लगी है दोनों की, अच्छा है, छने, अपने को क्या? अपन तो बस दिन गिन रहे हैं, इधर अठारह साल पूरे हुए उधर उड़···ऽ···ऽ छू! उसने एक बेफिक्री की अँगड़ाई ली और मुँह धोने के लिए वॉशरूम चली गई।

सुपरिचित कथाकार। अब तक सात कहानी-संग्रह, दो यात्रा-संस्मरण, वृहद उपन्यास-१, दस बालोपयोगी पुस्तकें, 'पुकार जगन्नाथ की' (यात्रा-संस्मरण) प्रकाशित। 'छत्तीसगढ़ी राजभाषा सम्मान', 'व्यू कबीर सम्मान', 'राज्यपाल शिक्षक सम्मान', 'छत्तीसगढ़ रत्न', 'राष्ट्रपति पुरस्कार', साहित्य मंडल, नाथद्वारा से मानद उपाधि।

''मिति नहीं दिख रही है?'' उन्होंने उसके कमरे की ओर अपनी निगाहें घुमाईं।

''उसका अभी उठने का टाइम कहाँ हुआ है? पूरी रात मोबाइल पर लगी रहती है, जब नींद खुलती है, तब सुबह होती है। आपकी आवाज सुनकर उठी है, ऐसा लगता है।'' उसकी आवाज में वही तिरस्कार था, जिसे सुनकर मिति का आधा खून जल जाया करता है। वह रात भर जागे या दिन भर सोए, किसी को क्या मतलब है? अपना दिन भर छछूँदर की तरह छुछुआता है तो कौन कहने जाता है? जिसे पाएगा, बस उसकी ही शिकायत करेगा गोबर जैसा मुँह बनाकर। उसकी तो तकदीर ही फूटी थी, जो माँ चली गई उसे छोड़कर। इतनी स्वस्थ, इतनी सुंदर! देखकर कोई कह नहीं सकता था कि पचास के लपेटे में है, वैसा ही सुव्यवस्थित रहन-सहन, उनका सिंदूर टीका मलिन कभी नहीं देखा था मिति ने। पता नहीं कब उठती थीं, कब सोती थीं? उनके रहते इसकी भी पहचान कहाँ हो पाई थी? वैसे यह पहले भी उसे घूर-घूरकर देखता था। कहता भी था, 'मेरे भानजे को पाल क्या दिया, तुम्हारा हक बन गया अपने मायकेवालों को रखने का। इससे मेरा कोई खून का रिश्ता नहीं है। तुम लाद रही हो मुझ पर इसे।'

कहता तो सच ही है, इससे उसका खून का क्या, कोई रिश्ता नहीं है। यह उसका मौसा लगता है तो क्या हुआ, इससे बड़ा दुश्मन भी कोई नहीं दुनिया में। एक तो उसके माँ-बाप उस हिंसा के शिकार हो गए, जिसकी किसी को उम्मीद भी नहीं थी। छोटे चाचा ने दिन-दहाड़े घर में घुसकर खाना खाते पिताजी एवं गिलास में पानी ढालती माँ को गोलियों से भून डाला था। वह संभव के साथ पड़ोस में खेल रही थी, घटना की खबर सारे मोहल्ले में आग की तरह फैल गई। पड़ोसन ने उन्हें ऐसा छुपाया कि हत्यारा उन्हें ढूँढ़ता ही रह गया, वह पूरा वंश नाश करके

उनकी संपत्ति हड़पना चाहता था। बाद में जब वह कुछ दिनों के लिए जेल गया, तब बड़ी मौसी उसे ले आईं और छोटी संभव को ले गई।

तीन साल छोटा है मिति से। अब तो वह भी बड़ा हो गया होगा। छोटी मौसी उसे अपने साथ जापान ले गईं, आज तक दुबारा भाई-बहन एक-दूसरे से नहीं मिल सके; शायद इस डर से भी कि कहीं दुश्मन उसकी जान के पीछे न पड़ जाएँ। छोटी मौसी न स्वयं कभी देश लौटीं, न संभव को ही भेजा। वह अपने माता-पिता के अंतिम दर्शन भी नहीं कर पाई थी। बहुत दिन तक तो लगता था, सब झूठ कह रहे हैं। वे हैं इस दुनिया में, लेकिन सच से कब तक आँखे मूँदे रहा जा सकता था?

''अरे, कहाँ हो भई मिति बिटिया? जल्दी से इधर आ जाओ, मैं तुम्हारी पसंद के दही-बड़े बनाकर लाई हूँ।''

यह पहले-पहल उसे ही मिली थी आनंद मेले में, उसने अपनी सहेलियों के साथ पॉपकार्न का स्टाल लगाया था। वह मेले में किसी संस्था के बच्चों को लेकर आई थी। माँ के न रहने की बात जानकर एकदम से चिपक ही गई। आज तक कुँआरी घूम रही है। लगता है, अभी तक इसकी तलाश जारी है अपने जीवनसाथी की। 'ठाकुर साहब-ठाकुर साहब' करती रहती है। देख ही रही है, अच्छे पद पर काम कर रहा है। घर-द्वार सब जमा-जमाया है। आज भले ही बाप-बेटी अपने-अपने खाने का इंतजाम अपने हिसाब से करते हैं, घर में सब वस्तुएँ बिखरी पड़ी हैं। संडे छोड़कर नौकरानी के लिए दरवाजा खोलनेवाला कोई नहीं रहता था, इसने चिढ़कर उसे छुड़ा दिया था, वह जो निलेश सिंह ठाकुर कहलाता है। हाँ···ऽ···ऽ···! पूछे न ऊछे, मैं दूल्हे की चाची, अब ये आ रही हैं माँ बनने। उसने घृणा से मुँह में भरा टूथ पेस्ट थूक दिया। लगता है, कुछ खिचड़ी-विचड़ी पकने लगी है। अभी मात्र तीन महीने ही हुए हैं पहचान हुए और किसी-न-किसी बहाने से हर रविवार को आने लगी है। यह तो जब से बीवी मरी है, एकदम से पागल हो गया है। दो-चार दिन वह स्कूल क्या नहीं गई, नाम ही कटवा दिया।

दो साल हुए माँ को गए, स्तन कैंसर से मरी थी। इलाज में तो कोई कमी नहीं की थी इसने, मुंबई ले-लेकर जाया करता था। दो-दो, तीन-तीन बार ऑपरेशन हुआ, बड़े कष्ट से मुक्ति मिली थी उन्हें जीवन से। वह अपने दु:ख में ऐसा डूबा कि भूल ही गया मिति को। यों कहें तो उसने उसे अपनी जिम्मेदारी समझा ही कब था? बस पल रही थी कुत्ते-बिल्ली की तरह। माँ ही पैरेंट्स मीटिंग में जाती, रिपोर्ट कार्ड साइन करती, ट्यूशन छोड़ने जाती। स्कूल के लिए तैयार करती, यह तो अकसर लड़ा करता था, 'मेरे भानजे ने तेरे ही कारण घर छोड़ा है। तू यदि उसे माँ का प्यार देती तो क्या कारण था कि शादी होते ही एकदम बेगाना हो गया?' वह रोती थी, 'बस मेरी यही गलती है कि मैंने बाँझ होने के बाद भी माँ बनने की कोशिश की। अपनी ननद के बेटे को माँ बनकर पाला, जब वह बीमारी से हार गई, मानस के पापा अपने को सँभाल नहीं सके। दो माह बाद ही मानस को अकेला छोड़ गए, तब मैंने उसे गले से लगाकर पाला। अब जब मेरी बहन के साथ इतना बुरा घट गया तो क्या उसके बच्चों को सहारा देना हमारा मानवीय कर्तव्य नहीं है? हमारा मन भी लगा रहता है।'

''अरे, मिति बेटी! कितनी देर लगाती हो फ्रेश होने में?'' वह आवाज दे रही थी।

''आप लोग लीजिए न आंटी, मैं आ रही हूँ।'' उसकी नजर चाय के बरतन पर पड़ी, न जाने कब से गंदा जमा पड़ा था। अपने तो धो-धाकर बना लेते हैं। अब यह देखेगी तो अच्छा नहीं लगेगा। लोगों को न जाने कितना शौक होता है दूसरों के जीवन में झाँकने का। कैसे माँजू? माँ ने तो कभी कुछ करने ही नहीं दिया। बीमार रहती थीं, फिर भी उसे खेलने-कूदने, पढ़ने-लिखने का बराबर अवसर दिया करती थीं। 'तू, पढ़ लिख ले! जो कुछ सीखना हो, सीख ले, घर के काम तो जीवन भर करने हैं। वो सब तो मैं तुझे एक महीने में सिखा दूँगी।' चली गई माँ! अब तो उसकी मिति के समान बुरा कोई रह ही नहीं गया संसार में। उसकी आँखें भर आईं अपने पुराने दिन याद करके।

''अरे, तुम चाय के बरतन माँज लाई?'' वह किचन तक आ गई थी। उसके हाथ में पेपर प्लेट थी, जिसमें उसने दही-बड़े रखे हुए थे। पेपर प्लेट वह अपने साथ ही लेकर आई थी। पहली बार नहीं आई थी इस घर में।

''ठीक है न आंटी, आप बैठिए न ऽ!'' उसकी निगाहें संकोच से झुकी हुई थीं। यदि वह चाहती तो इधर-उधर फैली अपनी किताबों, कपड़ों और बरतनों को उनके स्थान पर रख सकती थी। पलक झपकते तो नहीं बीत जाएँगे कुछ महीने। क्या सबकुछ जैसे का तैसा छोड़कर चली जाएगी चंदन के साथ?

''अरे! आओ न, एक साथ बैठकर खाते हैं।'' उनका प्रबल आग्रह देखकर मिति को उनके साथ आना पड़ा।

''लीजिए न, आप भी।'' मिति ने झुकी निगाहों से कल्पना आंटी को देखते हुए आग्रह किया।

''बस ले रही हूँ।'' किसी नवोढ़ा की तरह चम्मच से छोटे-छोटे टुकड़े उठाकर खाने लगी वह।

''बहुत अच्छे बने हैं, आपने बड़ी मेहनत की।'' वह रुचि लेकर खा रहा था।

वाह! कैसे बिछा जा रहा है। और किसी की मेहनत की तारीफ करते तो मुँह में दही जमी रहती है, अभी परसों की ही तो बात है, पड़ोसन के बहुत समझाने पर उसने ड्यूटी से आते ही उसके हाथ में चाय की प्याली थमाई थी, जिसे देखते ही वह भड़क उठा था, 'किसने कहा तुझसे चाय बनाने के लिए? हाँ, तेरी उस दिन की बात सुनने के बाद

तूने कैसे सोच लिया कि मैं तेरा दिया कुछ भी खाऊँगा-पिऊँगा? तू तो मुझे खाने में जहर मिलाकर देना चाहती है नऽ?' वह कलेजा फाड़कर चीख रहा था।

'तो थूक दे चाय में! मेरी बात तो याद है तुझे और तूने क्या रिपोर्ट लिखवाई थाने में? मैंने तुझ पर रेप केस का आरोप लगाने की धमकी दी है, मेरा तेरा कोई खून का रिश्ता नहीं है। मैं तेरी गोद ली हुई संतान हूँ, जिसका कोई डॉक्यूमेंट्स नहीं है। तू तो मुझे बाल-संरक्षण गृह भेजना चाहता था नऽ? मुझे घर से निकालकर रँगरलियाँ मनाना चाहता है?'

ऐसा ही नाटक करना था तो पहले ही क्यों रखा? मुझे मार डालता, हत्यारे! जीकर ही क्या कर रही हूँ? वह अपने कमरे में लेटी बहुत देर तक रोती रही थी। बार-बार थाने में पड़ी डाँट उसके कानों में गूँज रही थी।

'आपको शर्म आनी चाहिए, अपनी ही बेटी के खिलाफ शिकायत दर्ज कराते हुए। इसने यदि झूठी रिपोर्ट कर दी, तब भी आप लंबे से नप जाएँगे। यदि किसी भी प्रकार की प्रतारणा की शिकायत मिली तो आप पर विभागीय व्यक्ति होने के नाते भी कोई रियायत नहीं की जा सकेगी।' उसके चेहरे पर जैसे बारह बज रहे थे। उसके सड़ियल स्वभाव से सब पूर्व परिचित थे।

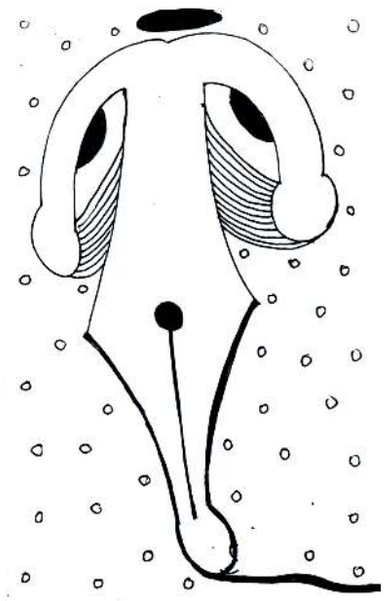

'जहाँ भी रहा, अपने नीचेवालों का जीना हराम किए रखा। पुलिसवाले चौबीस घंटे के नौकर हैं, लगातार काम करते रहो। दारू-गाँजे से कमाई मत करो। बताए कोई इनसे कि पुलिसवालों के घर-द्वार नहीं होते क्या? क्या समाज में सिर उठाकर जीने का उनको हक नहीं है, क्या पुलिस के छोटे से वेतन में बच्चों को ऊँची शिक्षा दिलाई जा सकती है? यह तो साफ साजिश है, सिपाही का बेटा सिपाही और अफसर का बेटा अफसर बनाने की। इसीलिए तो भगवान् ने संतान का मुख नहीं दिखाया। एक को पाला भी था तो लात मारकर रफूचक्कर हो गया। अब आया है पंजे में।' उसने सुना था, ड्यूटीवाले आपस में बातें कर रहे थे। उसे एक अनजानी पीड़ा ने अपनी गिरफ्त में ले लिया था। हाँ, उसके थाने जाने का लाभ उसे इस प्रकार मिला कि तब से उसने उसके खाने-पीने या मोबाइल के लिए खर्चा देने में आनाकानी नहीं की। बस बाहर निकलने से मना कर दिया। नंबर वन का शक्की है। उसे लगता है, अड़ोस-पड़ोसवाले मिति को बिगाड़ देंगे। अब कुछ बोलता भी नहीं, मत बोले, यहाँ किसे गरज पड़ी है ऐसे कूड़मगज से बात करने की? रहा समय कटने का सवाल, तो वह फेसबुक पर बड़े आराम से कट जाता है। कभी यूट्यूब खोल लो तो जो चाहो वो देखो। हाँ, परेशानी हो जाती है कभी-कभी एडल्ट विडियोज देखकर, तब के लिए नींद की गोलियों का इंतजाम रखना पड़ता है।

''आप बैठिए! मैं जरा एक पैकेट दूध लेकर आता हूँ चाय के लिए।'' वह अपने कपड़े से पैसे निकाल रहा था।

''अजी! आप कहाँ जा रहे हैं, हमारी मिति बेटी ले आएगी।'' उसने अपने बैग से निकालकर सौ रुपए का एक नोट मिति की ओर बढ़ा दिया।

कोई नई बात नहीं है। जब आती हैं, कुछ-न-कुछ घटा ही रहता है। वह इतनी भी नासमझ नहीं है, अपने बीच से उसे हटाने का बहाना है सब। उसे क्या, अच्छा ही है, अवसर का लाभ उठाकर वह भी चंदन को बुला लेती है मिलने के लिए। आज तो वह शहर से बाहर है। ऊब मिटाने के लिए उसने एक अँगड़ाई ली और दरवाजा उढ़काते हुए बाहर निकल गई। डेयरी घर से लगभग पाँच सौ मीटर की दूरी पर थी। वह आराम से गई-आई। आस-पास के घरों तथा काम करते मजदूरों पर नजर डालती। दो बजे की धूप उसके दाएँ अंग को तपा रही थी। नवंबर के शुरुआती दिन थे, किंतु ठंड अभी विधिवत् प्रारंभ नहीं हुई थी। उसने सुना है, मौसम-चक्र बदल रहा है।

दरवाजा उसी प्रकार उढ़का था, जैसा वह छोड़ गई थी। उसने बिना आवाज किए अंदर जाने लायक दरवाजा खोला और सीधे अपने कमरे में चली गई दूध लिये-लिये। बगलवाले कमरे से धीमी, किंतु स्पष्ट आवाजें आ रही थीं—

''और तो जो भगवान् ने किया, उसे कोई बदल नहीं सकता; किंतु मैं इस लड़की से बहुत परेशान रहता हूँ। एक भी बात नहीं मानती। बताइए, जब घर में कोई महिला नहीं है तो कौन सिखाएगा भला-बुरा उसे? कुछ कहने की कोशिश करता हूँ तो गलत भावना मन में लाती है। सच कहूँ तो इस लड़की ने कभी मुझे बाप का दर्जा दिया ही नहीं।''

'रो ले, रो ले नया मुरगा पाया है नऽ! मैंने तो तुझे बाप नहीं समझा, तू ने ही कब मुझे अपनाया?' वह किचन में जाकर चाय का पानी चढ़ाने लगी। सोकर उठने के बाद चाय मिल जाए तो तबीयत फड़का-फाइट हो जाती है।

''बच्ची है ठाकुर साहब, समय आने पर सब ठीक हो जाएगा।'' उसने सहानुभूति भरे स्वर में कहा।

''क्या सुधरेगी मैडम, पहले जमाने में इतनी उम्र में लड़कियाँ अपनी ससुराल जाकर पूरा घर सँभालती थीं और इसे देखिए, दोपहर ढले सोकर उठती है। पूरी रात मोबाइल पर न जाने क्या करती रहती है? देखते-देखते मेरा घर श्मशान हो गया। थोड़ा-थोड़ा सीखती, तब भी कम-से-कम अपने लिए तो पका-खा लेती। नौकरानी लगाओ तो दरवाजा नहीं खोलती, मैं ठहरा नौकरीवाला इनसान, वह भी पुलिस की नौकरी; जिसमें घर-परिवार के लिए कोई समय नहीं होता।''

'कभी कुछ सिखाने की कोशिश की? माँ थी तो उसने भी कभी कुछ करने न दिया और तू तो बस रोना भर जानता है, कुछ सिखाता तो

जरूर सीख जाती। और अच्छा ही किया न सीखकर। मैं क्या तेरे लिए खाना बनाऊँगी? जा-जा मुँह धोकर रख। चाहे जितना रो ले, तेरे लिए तो कुछ नहीं करूँगी।' कोई सुने-न-सुने, वह हर बात का उत्तर नहीं में देती जा रही थी।

''ठाकुर साहब, जहाँ समस्या है, वहाँ समाधान भी है। आप इसकी शादी कर दीजिए।''

''ऐसी बिगड़ी लड़की को किसके पल्ले बाँध दूँ, मैडम? फिर अभी यह अठारह की कहाँ हुई है?'' उसके स्वर में उसकी हताशा बोल रही थी।

''कोई करे, न करे, वह तो करेगा न; जिससे यह रात भर बतियाती है। उसका नाम चंदन है। मेरी जान-पहचान का है, बड़ी उम्र का आदमी है, इसे सुधारकर रख देगा। धनी बाप का अकेला बेटा है, पढ़ा-लिखा भी है। वह भी खुश और हम भी खुश। आप कहें तो बात करूँ, उसका बाप तो दोनों तरफ का खर्चा दे देगा हँसी-खुशी। हर्रा लगे न फिटकरी, रंग चोखा आए। फिर यदि आपको पसंद आएगा तो मैं आपका उजड़ा घर बसाने की जिम्मेदारी ले लूँगी।''

''इतना सबकुछ है तो अब तक कुँआरा क्यों बैठा है?''

''कुँआरा कहाँ? पहले दो शादियाँ हो चुकी हैं। जिसके भाग्य में सुख नहीं होता, उसकी मति मारी जाती है। दोनों भाग गईं इसका घर छोड़कर। और कुछ नहीं, जरा बातें ज्यादा करता है। बड़ी ऊँची-ऊँची, कभी ताजमहल खरीदने की बात करेगा तो कभी लाल किला। मिति जाए भोगे अपने भाग्य का सुख। वहाँ न किसी काम की कोई फिक्र रहेगी, न जिम्मेदारी। सब काम के लिए अलग-अलग नौकर लगे हैं। मुझे तो लगता है, हमारी मिति के लिए सब प्रकार से उचित है। न हो तो अभी सगाई करके छोड़ दीजिए, कुछ माह बाद जब अठारह की हो जाएगी, तब शादी कर देंगे। मुझे तो बस आपकी ही चिंता लगी रहती है।'' मैडम की आवाज अत्यंत मधुर थी।

बड़ी प्यारी लगी थी मिति को वह। उसके चंदन से उसका विवाह करा रही थी। कोई लाख बुराई करे, चंदन तो उसकी हर अदा का दीवाना है। इतना सुंदर, शिक्षित और कमाऊ है वह। जब तक साथ रहता है, लगातार उसकी प्रशंसा करता रहता है। चंदन से मिलाने के लिए वह फेसबुक की सदा आभारी रहेगी। रही बात शादी की तो पैसेवालों की दो क्या, चार भी हो सकती हैं, वैसे भी आजकल लड़कियों में हसबैंड चेंज करने का ट्रेंड है। वे छोड़कर नहीं गईं, उन्होंने मिति का रास्ता साफ किया। वह तो मिति के सारे दर्द की दवा है। शादी के बाद उसका अपना संसार होगा, जहाँ की वह मालकिन होगी। वह सबकुछ सीखेगी। इनका उसे सजा देने का सपना कभी पूरा नहीं होगा।

''हुम्म! बड़ी उम्र का आदमी है, जिसकी दो-दो औरतें भाग चुकी हैं, वह मेनिया का शिकार है। बहुत अच्छा रिश्ता ढूँढ़ा है, मैडम मेरी बेटी के लिए, क्या मेरे पास उसकी शादी के लिए पैसे नहीं हैं? क्या वह मेरे ऊपर भार है? अब मेहरबानी करके यहाँ से तशरीफ ले जाइए, वरना मैं आपकी सारी चिंता झाड़ दूँगा। उस अधेड़ उम्र के पागल से अपनी बेटी ब्याहने से अच्छा तो मैं उसे किसी कुएँ में धकेल दूँगा। जाइए, दफा हो जाइए।'' उसकी चिल्लाहट से पूरा घर झन्ना उठा। उसकी तेज आवाज में धीरे-धीरे एक कंपन शामिल होता अनुभव किया मिति ने।

''हाय! चंदन पागल है, कितना बड़ा धोखा हुआ उसके साथ?''

''सोच लीजिए अच्छी प्रकार, आप की बद्दिमाग बेटी के लिए इतना अच्छा रिश्ता फिर नहीं मिलेगा। फिर आपके साथ इस उम्र में कौन घर बसाने आएगा?'' वह इस अप्रत्याशित व्यवहार से सकते में आ गई थी।

''अरे! भाड़ में जाए यह रिश्ता और चूल्हे में जाओ तुम! जल्दी भागती हो या उठाऊँ पुलिसिया जूता···ऽ···ऽ···ऽ···?'' वह बल भर चीखा।

दुम दबाकर भाग रही थी वह।

''पा···पाऽ···!'' अस्फुट स्वर निकला मिति के मुँह से।

साअ

बी-२८, हरसिंगार, राज किशोर नगर
बिलासपुर-४९५००६ (छ.ग.)
दूरभाष : ०९९०७१८६३६१

इस अंक के चित्रकार

कृष्ण कुमार 'अजनबी'

सुप्रसिद्ध चित्रकार एवं लेखक। रेखाचित्र-संग्रह 'मेरी बोलती तसवीरें', अनूदित नाट्य 'जगन्नाथ प्रिय नाटकम्' तथा एक व्यंग्य उपन्यास (उड़िया में), अनूदित कहानी-संग्रह 'अलौकिक और अन्य कहानियाँ' (हिंदी में)। कई रेखाचित्र प्रदर्शनियाँ आयोजित। छत्तीसगढ़ सीडी फिल्म 'क्रिकेट खेल होंगे महाभारत' के गीत एवं संवाद-लेखन के अलावा देश की प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ एवं रेखाचित्र प्रकाशित।

साअ

ग्राम-पोस्ट : देवभोग, जिला : रायपुर-४९३८९० (छ.ग.)
दूरभाष : ९६९११९४९५३

आलेख

हिंदू पेट्रियट और अमृतबाजार पत्रिका

● ऊषा निगम

उन्नीसवीं शताब्दी के छठे दशक तक भारतीय पत्रकारिता अपने शैशव काल से आगे बढ़ चुकी थी। ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन की बागडोर अब ब्रिटिश सरकार के हाथ में आ गई थी। शासक वर्ग बदला, लेकिन भारत का भाग्य नहीं बदला। देश उसी शोषण और दमन की नीति का सामना कर रहा था। सत्तावन के विद्रोह ने जहाँ एक ओर अंग्रेजी सरकार को अधिक सचेत किया था, वहीं दूसरी ओर दमन के बाद भी भारतीय जनमानस में भीतर-ही-भीतर कुछ सुलगने लगा था। इन्हीं परिस्थितियों में बंगाल में 'हिंदू पेट्रियट' और 'अमृतबाजार पत्रिका' का जन्म हुआ था। इन दोनों पत्रों ने समाचार-जगत् में एक विशेष पहचान बनाई। इन्होंने राष्ट्रीय मुद्दों को उठाया। अन्याय और उत्पीड़न का विरोध किया तथा देशवासियों को जगाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

सुपरिचित लेखिका। स्वतंत्रता सेनानियों पर विशेष लेखन। पत्र-पत्रिकाओं में लेख आदि निरंतर प्रकाशित। 'कानपुर : एक सिंहावलोकन' स्मारिका भी। सन् १९७०-७२ में पी.पी.एन. कॉलेज में अध्यापन कार्य किया। संप्रति लेखन में रत।

हिंदू पेट्रियट

बंगाल में घोष बंधुओं द्वारा एक ऐसे पत्र के प्रकाशन पर विचार किया जा रहा था, जिसमें देश के हितों की चर्चा होती, उस कालखंड की सामाजिक और राजनैतिक समस्याओं पर गंभीरतापूर्वक विचार किया जाता तथा संवैधानिक अधिकारों की आवश्यकता के लिए भी आवाज उठाई जाती। इसी विचारधारा को लेकर गिरीशचंद्र घोष ने अपने भाइयों के सहयोग से १८५३ में कलकत्ता (कोलकाता) से 'हिंदू पेट्रियट' का प्रकाशन आरंभ किया। यह अंग्रेजी साप्ताहिक पत्र था। आरंभ में संपादन-कार्य घोष बंधुओं के ही हाथ में रहा, लेकिन कुछ समय के बाद हरिश्चंद्र मुखर्जी इसके संपादक बने। अपनी मृत्यु तक (१८६१) वे इस पद पर कार्यरत रहे। उन्होंने 'हिंदू पेट्रियट' की एक स्वतंत्र नीति निर्धारित की थी। यह पत्र न तो अंग्रेजी सरकार के पक्ष में था, न विपक्ष में। जो उचित और न्यायसंगत था, उसका समर्थन और अन्याय तथा अत्याचार का विरोध करना उसकी नीति थी। पत्र के स्वामियों का उद्देश्य एक ऐसे अंग्रेजी पत्र का प्रकाशन करना था, जो अपने देश के हित में साहसपूर्वक आवाज उठा सके और देशवासियों की आवाज बन सके। संपादक हरिश्चंद्र मुखर्जी ने उनके सपनों को साकार किया। तत्कालीन संपादकों में उनका महत्त्वपूर्ण स्थान है।

सन् १८५७ के स्वतंत्रता-संग्राम के बाद भारत की राजनैतिक दशा में बहुत बड़ा परिवर्तन आया था। यों तो कंपनी राज्य को भी अपनी सत्ता के प्रारंभिक दौर से ही कभी जंगल महाल, कभी संन्यासी विद्रोह, कभी वहाबी आंदोलन और कभी संथाल विद्रोह के रूप में सशस्त्र विरोध का सामना करना पड़ा था, लेकिन १८५७ का विद्रोह एक नया अनुभव था। कंपनी राज्य को इतने विशाल विद्रोह की आशा नहीं थी। उसके बाद अंग्रेज स्वामियों द्वारा प्रकाशित अंग्रेजी पत्रों में शासित वर्ग के प्रति घृणा और नफरत की अभिव्यक्ति और भी बढ़ गई। अपने स्वार्थों और साम्राज्यवादी नीति के पक्ष में लेखन बढ़ता गया। ऐसे में भारतीय पत्रकारिता के लिए कोई ठोस कदम उठाना आवश्यक था। 'हिंदू पेट्रियट' ने इस कार्य को पूरी ईमानदारी से किया। तत्कालीन पत्रकारिता के संबंध में सबसे महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि आजादी से पूर्व के समाज-सुधारकों और राजनेताओं ने अपने-अपने पत्रों का प्रकाशन किया, जिनके द्वारा न केवल उन्होंने अपने विचारों को देश के सम्मुख रखा, वरन् प्रत्येक स्तर पर जन-जागृति, राष्ट्रीय चेतना के विकास और परतंत्रता से मुक्ति का उद्घोष दिया।

पेट्रियट की नीति स्पष्ट थी। उसे असम के चाय बागानों के मजदूर, गुलामों से लेकर नील की खेती करनेवाले मजदूरों और खेतिहर किसानों का उत्पीड़न, प्रताड़ना, अपमान, उनका बेघर होना, जमीन से बेदखली आदि से मुक्ति दिलाने का प्रयास करना था। न्याय और खुशहाली उनका जन्मसिद्ध अधिकार था। पत्र ने अपने १९ मई, १८६० के अंक में इस संबंध में टिप्पणी करते हुए लिखा था—''हमारे कानून की कमियों, वर्ग विशेष द्वारा किए जानेवाले अत्याचार और चारों ओर फैली अराजकता को इस प्रकार अनावृत किया जाएगा, पहले कभी नहीं किया गया—कुछ इस प्रकार कि सुधार (शासक वर्ग द्वारा) अवश्यंभावी हो जाएँगे।'' पेट्रियट में अंग्रेजी शासन व्यवस्था से संबंधित सूचनाएँ होती थीं—अधिकारियों का स्थानांतरण, नए सरकारी आदेश, नए कानून, नई योजनाएँ, प्रस्ताव आदि। मौसम का हाल और इंग्लैंड की घटनाएँ भी उसमें विस्तार से प्रकाशित की जाती थीं। लेकिन इसका संपादकीय सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होता था। संपादकीय के स्वतंत्र विचारों और टिप्पणियों के माध्यम से इस पत्र ने 'हिंदुस्तान में राजनैतिक चेतना जाग्रत् करने का प्रयास किया था।' (विजय दत्त श्रीधर, 'भारतीय पत्रकारिता कोश' भाग-एक, पृ. १५०)।

सन् १८६१ में मुखर्जी की मृत्यु के बाद पत्र के प्रचार-प्रसार में थोड़ा अवरोध उत्पन्न हुआ। शीघ्र ही क्रिश्टोदास पाल के संपादन में पत्र को पुनः प्राणवायु मिली। क्रिश्टोदास पत्रकारिता से जुड़ने के साथ-साथ राजनीति में भी हस्तक्षेप रखते थे। वे 'ब्रिटिश इंडियन एसोसिएशन'

के सेक्रेटरी थे। इस संस्था पर उनका अच्छा प्रभाव था। सरकारी तंत्र में भी उनकी पहुँच थी। इतिहासकार आर.सी. मजूमदार अपने गंभीर एवं स्वतंत्र निर्णयों और संतुलित विचारों के कारण देशवासियों के साथ-साथ सरकार में भी लोकप्रिय एवं सम्माननीय थे। उन्हीं के शब्दों में—''तेईस वर्षों तक वे पेट्रियट के संपादक रहे, उन्होंने उसे देश की एक शक्ति बनाया, यहाँ तक कि जन-मानस के रुझान को जानने और समझने के लिए सरकार भी इस पत्र का सहारा लेती थी। उनके संपादन में पत्र ने जो ऊर्जा, प्रभाव और सम्मान प्राप्त किया, उसका सौभाग्य भारत के कुछ ही पत्रों को प्राप्त हुआ।'' (भारतीय विद्या भवन, भाग १०, पृ. २४१)। ''इसके अतिरिक्त इस पत्र ने बंगालियों में राष्ट्रीयता की भावना बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।'' (भारतीय पत्रकारिता कोश, वही, पृ. १७६)। इसी कारण प्राय: इसको अंग्रेजी सरकार के विरोध का सामना करना पड़ा।

सन् १८७० के आस-पास काउंसिलों में देशवासियों के प्रतिनिधित्व की माँग की जाने लगी। प्रत्येक दृष्टि से इस माँग का अपना औचित्य था। देश के नागरिक सरकार की प्रशासनिक नीतियों के निर्धारण में हिस्सा ले सकें, यही इस माँग का उद्देश्य था। सुरेंद्रनाथ बनर्जी और आनंद मोहन बोस ने इस विषय में अपने ठोस विचार रखे थे। तब १८७४ में क्रिश्टोदास पाल ने 'हिंदू पेट्रियट' में 'होम रूल फॉर इंडिया' शीर्षक आलेख में इसका समर्थन करते हुए लिखा था—''अधिकांश ब्रिटिश उपनिवेशों में संवैधानिक सरकारें हैं, फिर भी भारत जैसे विशाल, विविधतापूर्ण देश में जहाँ इतनी अधिक जनसंख्या है, इस प्रकार की व्यवस्था क्यों नहीं की जा सकती है। जब अन्य ब्रिटिश उपनिवेशों में कर निर्धारण और प्रतिनिधित्व साथ-साथ चल सकते हैं तो ब्रिटिश इंडिया में इस सिद्धांत की उपेक्षा क्यों की जाती है?'' उन्होंने आगे लिखा—''होम रूल की व्यवस्था हमारी माँग होनी चाहिए।'' (भा.वि. भवन, वही, पृ. ५००)। उपर्युक्त संक्षिप्त विवरण से स्पष्ट होता है कि इस पत्र का निरंतर यह प्रयास रहा कि हम अपने अधिकारों के प्रति सजग रहें।

अमृतबाजार पत्रिका

'अमृतबाजार पत्रिका' पत्रकारिता के इतिहास का एक अविस्मरणीय नाम है। बँगला भाषा में प्रकाशित इस साप्ताहिक का प्रकाशन २० फरवरी, १८६८ को जसोर जिले के 'अमृत बाजार' गाँव से हुआ था। इसका प्रकाशन शिशिर कुमार घोष और उनके भाई मतिलाल घोष ने आरंभ किया था। प्रारंभ में संपादन-दायित्व शिशिर कुमार घोष पर रहा। यह पत्र अपने जन्मकाल से राष्ट्रवादी रहा। शिशिर कुमार घोष ने बड़े स्पष्ट शब्दों में अपने पत्र के माध्यम से कहा, ''हम हम हैं। और वे वे हैं।'' शासित और शासक वर्ग की यह बहुत सरल शब्दों में अत्यंत स्पष्ट परिभाषा थी।

प्रारंभ से ही इस पत्र का स्वर बहुत तीखा रहा। उसकी दृष्टि में अंग्रेज और हिंदुस्तानी समान थे। मुख्य बात यह थी कि पत्र को अन्याय का विरोध करना ही था। प्रकाशन आरंभ होने के चार महीनों के बाद ही इसमें एक अंग्रेज द्वारा भारतीय महिला से किए गए अभद्र व्यवहार का समाचार छपा। पत्र ने इस व्यवहार की भर्त्सना की, परिणामस्वरूप पत्र के मुद्रक और पत्रकार को सरकार ने दंडित किया। अत: २५ फरवरी, १८६९ से इस पत्र के कुछ पृष्ठ अंग्रेजी भाषा में भी प्रकाशित किए जाने लगे। कालांतर में अंग्रेजी पृष्ठों की संख्या बढ़ती गई। १८७१ से इसका प्रकाशन कलकत्ता से होने लगा। इस पत्र ने सदैव अंग्रेजी शासन का विरोध किया। देश की आत्मा और स्वाभिमान को आहत करनेवाली प्रत्येक घटना का प्रतिवाद किया और राष्ट्रीयता एवं देशप्रेम की भावना का प्रसार करने का निरंतर प्रयास किया। १८७० में अनवरत ऐसे लेख प्रकाशित हुए, जिनमें भारत के लिए संसदीय व्यवस्था की माँग की गई। इस पत्र से संबंधित एक और विशेष बात थी। इसमें न्यायालयों की काररवाई भी प्रकाशित की जाती थी। उन केसों को प्राथमिकता दी जाती थी, जो जनता से संबंधित होते थे। फलस्वरूप अंग्रेजी सरकार की न्यायायिक व्यवस्था का विकृत चेहरा पाठकों के सामने आने लगा और उसी अनुपात में पत्रिका को अनेक बार अंग्रेजी सरकार के क्रोध का सामना कभी जुर्माना तो कभी दंड के रूप में करना पड़ा। पत्रिका ने पुलिस प्रशासन में सुधारों की आवश्यकता के विषय में भी विस्तार से चर्चा की। प्रशासनिक सेवाओं में भारतवासियों का समुचित प्रतिनिधित्व हो, इस पर भी समय-समय पर प्रकाश डाला जाता रहा। देश के राष्ट्रीय आंदोलन को सही दिशा प्रदान करने के लिए इस पत्रिका ने जिला और ग्राम स्तर पर राजनैतिक संस्थाओं की स्थापना पर भी बल दिया। इसी उद्देश्य को पूरा करने के लिए शिशिर कुमार घोष ने २३ सितंबर, १८७५ को कलकत्ता में 'इंडियन लीग' की स्थापना की।

यह वह समय था, जब अंग्रेजी सरकार को महसूस होने लगा था कि प्रेस की आवाज को दबाना आवश्यक है। अत: वाइसराय लॉर्ड लिटन ने देसी भाषा के पत्रों पर नियंत्रण बढ़ाने के लिए 'वर्नाकुलर प्रेस ऐक्ट-१८७८' पास किया। इस ऐक्ट से बचने के लिए २१ मार्च, १८७८ से 'अमृत बाजार पत्रिका' का प्रकाशन केवल अंग्रेजी भाषा में किया जाने लगा। अनेक वर्षों तक यह पत्रिका साप्ताहिक रही, लेकिन समय की माँग को देखते हुए १९ फरवरी, १८९१ को इसका स्वरूप दैनिक हो गया।

'अमृत बाजार पत्रिका' की कुछ अन्य विशेषताएँ भी थीं, यथा (१) इस पत्रिका में बैंक ऑफ बंगाल की ब्याज दर, हावड़ा पुल पर यातायात बंद होना तथा मौसम का हाल आदि की चर्चा आम जनता की जानकारी और सुविधा के लिए की जाती थी। (२) सन् १८८५ में इंडियन नेशनल कांग्रेस की स्थापना हुई थी। पत्रिका ने आरंभ से ही इस संस्था की प्रत्येक गतिविधि पर नजर रखी तथा उसे सकारात्मक सुझाव भी देती रही। (३) शिशिर कुमार घोष ब्रह्म समाज के सदस्य थे, अत: सामाजिक सुधारों में उनकी विशेष रुचि थी। पत्रिका के प्रारंभिक अंकों में सती प्रथा, विधवा विवाह, बाल विवाह आदि के पक्ष-विपक्ष में पर्याप्त लिखा गया। (४) १९०५ में लॉर्ड कर्जन ने बंगाल-विभाजन का निर्णय लेकर संपूर्ण बंग प्रदेश में एक ऐसी हलचल मचा दी, जिसके दूरगामी परिणाम हुए। पत्रिका ने बंग-भंग का घोर विरोध किया और जन-भावना को अपना

पूर्ण समर्थन दिया। जनता का विरोध और 'पत्रिका' का सरकार-विरोधी स्वर एक-दूसरे के पूरक बन गए। पत्रिका का कार्यालय राजनीतिज्ञों के विचार-विमर्श का केंद्र बन गया। पत्रिका की निडरता को जन-समर्थन प्राप्त था, इसीलिए 'पत्रिका' के संपादकीय में व्यक्त विचार जनता के विचार माने जाते थे। (भारतीय पत्रकारिता कोश, भाग-एक)। (५) पत्र की आयु बढ़ने के साथ उसके कवरेज का क्षेत्र भी बढ़ता गया। विदेशों में इसके संवाददाता भी थे। ७ दिसंबर, १९३६ को इसमें किंग एडवर्ड अष्टम के उदाहरण के संबंध में एक स्कूप प्रकाशित हुआ था। इस समाचार ने लोगों को आश्चर्यचकित कर दिया था। उस समय ब्रिटेन के भावी प्रधानमंत्री रेमसे मैकडॉनल्ड इसके संवाददाता थे।

सन् १९२८ में शिशिर के पुत्र तुषार कांति घोष ने पत्रिका के संपादन का दायित्व सँभाला। पिता की ही भाँति पुत्र के संपादकत्व में पत्र ने निरंतर प्रगति की। इसकी लोकप्रियता बढ़ती गई, प्रसार संख्या बढ़ती गई और उसी अनुपात में सरकार का विरोध भी बढ़ता गया। १९३२ में तुषार कांति घोष तथा मुद्रक पर ५००-५०० रुपयों का जुर्माना हुआ था। न्यायालय की मानहानि करना उनका अपराध था। १९३५ में पुन: इसी प्रकार के अपराध के लिए घोष बाबू को तीन माह और मुद्रक को एक माह के कारावास का दंड भी दिया गया। इसके बावजूद पत्रिका अपने लक्ष्य की ओर बढ़ती रही। 'अमृतबाजार पत्रिका' ने न केवल देश की आजादी की लड़ाई में अपनी लेखनी के माध्यम से साथ दिया, वरन् आजाद देश की आजाद हवा में भी एक लंबे समय तक अपनी उपस्थिति दर्ज की।

प्रसार संख्या में वृद्धि के कारण घोष बाबू के संपादन में ही १९४३ में इलाहाबाद से 'नॉर्दन इंडिया' पत्रिका का प्रकाशन और फिर यहीं से हिंदी में 'अमृत प्रभात' का प्रकाशन आरंभ हुआ। १९९१ में आर्थिक कठिनाई के कारण मई १९९१ से सितंबर १९९४ तक पत्रिका बंद रही। अक्तूबर १९९४ में पुन: इसका प्रकाशन आरंभ हुआ। लेकिन २९ अगस्त, १९९४ को घोष बाबू की मृत्यु हो गई और इसी के साथ देश की पत्रिकारिता का एक प्रमुख स्तंभ ढह गया। (विजय दत्त श्रीधर, वही, पृ.२१३)।

समकालीन पत्र 'समाचार चंद्रिका' ने १८ जनवरी, १८७२ को 'अमृतबाजार पत्रिका' के विषय में लिखा—''किसी अन्य समाचार-पत्र ने देश की स्वाधीनता के लिए इतना अधिक कार्य नहीं किया, जितना इस पत्रिका ने किया है और इसके लिए उसे पर्याप्त कष्ट सहने पड़े हैं।'' कवि नवीन चंद्र सेन ने शिशिर कुमार घोष और पत्रिका की प्रशंसा में लिखा था—''वे इस देश में देशभक्ति के अग्रदूत थे।'' (भा.वि.म., पृ.-२४५)। वियज दत्त श्रीधर लिखते हैं—''पत्रिका का कवरेज व्यापक था। इसकी निगाह से ऐसा कोई समाचार नहीं छूट पाता था, जिससे स्वतंत्रता आंदोलन को बल मिलता हो।'' १९१७ में बाल गंगाधर तिलक ने अपने एक पत्र में पत्रिका और शिशिर बाबू के विषय में लिखा था—''उस समय स्वतंत्रता और निष्पक्ष पत्रकारिता करने के दिन थे। उन्होंने अकेले लड़ाई लड़ी और उनकी आत्मा ने ही उन्हें रास्ता बतलाया। उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम दशकों में उन्होंने बंगाल को रास्ता बतलाया। मुझे याद है कि ४० वर्ष पूर्व मेरे राज्य (महाराष्ट्र) में 'पत्रिका' पढ़ने के लिए लोग डाकिए की किस उत्सुकता से राह देखते थे। वे उनके लेखन को देखकर प्रसन्न होते थे, लेकिन बहुत कम लोग दूसरों के सम्मुख इन्हें उद्धृत करने का साहस कर पाते थे—वे एकांत में इसका आनंद उठाते थे।'' (भा.वि.भ., वही, पृ. २४५)।

७४ कैंट, कानपुर-२०८००४
दूरभाष : ९७९२७३३७७७

लघुकथा

खनक

● लता कादंबरी

बत्ती बुझाकर वह अपने बिस्तर पर लेट गई, उसे किसी के घुँघरुओं के खनकने की आवाज सुनाई दी, एक बार तो उसे लगा कि शायद यह उसका वहम है। पर बाद में उसे यह आवाज रोज सुनाई देने लगी। सचमुच! हर रोज वह आवाज उसके आस-पास ही कहीं से आती थी। तभी उसकी आँखों में खुमारी उतरी और वह गहरी नींद में जा समाई—देखती क्या है कि तीन देवियाँ एक-एक कर उसके घर के मुख्यद्वार से बाहर जा रही हैं। लपककर उसने उन्हें पकड़ना चाहा, पर वे तेजी से मुख्यद्वार की ओर चल पड़ी। उसने उन्हें पुकारा और पूछा, 'कहीं जा रही हैं आप सबलोग?' फिर से पुकारा और गुहार लगाई—'नहीं जा सकती हैं आप मुझे छोड़कर।'

देवियों में से एक ने जवाब दिया—'नहीं, हम नहीं रुक सकती हैं यहाँ। तुम्हारे घर पर अब हमारा दम घुटता है। तुम्हारे घर के लोग हर दिन क्लेश किया करते हैं, कोई किसी का सम्मान नहीं करता। अत: अब हमें यहाँ से जाना ही होगा।' दौड़कर उसने माँ लक्ष्मी का हाथ पकड़ना चाहा, वे बोली, 'मैं तो सबसे पहले जाऊँगी।' सरस्वतीजी के सामने वह गिड़गिड़ाई—'माँ बोली, जहाँ आचार-विचार अच्छे न हों, वहाँ मैं कभी ठहरी हूँ भला?'

उसे घुँघरुओं की आवाज दूर जाती सुनाई दे रही थी। पागलों के समान वह रोती हुई उस दिशा में दौड़ी, परंतु सामने अंधकार के अलावा और कुछ न था।

७/२०२, स्वरूप नगर, कानपुर (उ.प्र.)
दूरभाष : ७६०७३४५६७८

अंधी गुफा

● राकेश भ्रमर

कामिनी के दुर्दिन तभी शुरू हो गए थे, जब उसने प्रोन्नति पर प्रधानाध्यापिका बनकर इस गाँव में आना स्वीकार किया था। पति और बच्चों से दूर तो हुई ही, एकाकी जीवन के साथ-साथ स्कूल की समस्याओं से भी दो-चार होना पड़ रहा था। समस्याओं से वह घबराती नहीं थी, परंतु जब उन समस्याओं के निदान और निराकरण के सारे उपाय विफल हो जाएँ, तो मन में खीझ, हताशा और कुंठा का व्याप्त होना संभावी था।

प्रोन्नति के साथ दूर गाँव में स्थानांतरण का आदेश मिलते ही उसके घर में खुशी के साथ गम का भी माहौल पसर गया था। पति ने एक सिरे से मना कर दिया था कि प्रोन्नति का कोई औचित्य नहीं। परिवार से इतनी दूर वह कैसे रहेगी? तनख्वाह में कोई विशेष अंतर नहीं पड़ रहा था, परंतु कामिनी का मानना था कि इससे भविष्य के लिए रास्ता खुल जाएगा। अभी उसकी बाईस साल की नौकरी शेष थी और वह प्रोन्नति पाकर माध्यमिक स्कूल तक जा सकती थी। इसीलिए उसने यह पदोन्नति स्वीकार कर ली थी।

प्रधानाध्यापिका बनने के बाद ही उसे पता चला था कि स्कूल की कितनी सारी जिम्मेदारियाँ निभानी पड़ती हैं। सरकार ने इतनी सारी योजनाएँ चला रखी हैं और ग्रामीण स्कूल के अध्यापकों को उनमें लगा रखा है कि अध्यापकों का सारा समय उन्हीं में निकल जाता है। बच्चों को पढ़ाने का वक्त ही नहीं बचता है।

राज्य सरकार एवं केंद्र सरकार की कई प्रकार की योजनाओं के लिए स्कूल के अध्यापकों की ड्यूटी लगती रहती थी। सारा दिन धूप-वर्षा और सर्दी में वह गाँव-गाँव चक्कर लगाते रहते थे। अभी जनगणना का कार्य प्रारंभ हो गया था। पल्स पोलियो कार्यक्रम एक नियमित अंतराल पर होता ही रहता था। इसके अलावा शासन का सख्त आदेश था कि स्कूल में बच्चों की निर्धारित संख्या भी होनी चाहिए, जो कि आज के जमाने में मुश्किल हो गई थी। दूर-दराज के गाँवों में पब्लिक स्कूल के नाम पर सैकड़ों स्कूल खुल गए। सरकारी स्कूल की तरफ कोई मुँह नहीं करता था, इसलिए गाँव-गाँव घूम-घूमकर अभिभावकों को सरकारी स्कूल में बच्चों के नाम लिखाने के लिए प्रेरित करना पड़ता था।

खैर, इन सरकारी कार्यक्रमों से कामिनी को कोई परेशानी नहीं होती थी। सबसे बड़ी परेशानी दोपहर को बच्चों को दिए जानेवाले भोजन से होती थी। इसका सारा इंतजाम ग्रामप्रधान के जिम्मे था। सामान

सुपरिचित साहित्यकार। 'जंगल बबूलों के', 'हवाओं के शहर में'; 'रेत का दरिया' (गजल-संग्रह), 'उस गली में' (उपन्यास), 'अब और नहीं' (कहानी-संग्रह)। 'प्राची' मासिक पत्रिका का संपादन। पत्र-पत्रिकाओं में सौ से अधिक रचनाएँ प्रकाशित। लखनऊ दूरदर्शन तथा आकाशवाणी रामपुर, जबलपुर और मुंबई से रचनाओं का प्रसारण। संप्रति केंद्र सरकार में अधिकारी।

खरीदने से लेकर खाना बनाने व खिलाने तक का सारा काम प्रधान के माध्यम से होता था। परंतु प्रधान इन सारे कामों में बहुत घपला करता था। भोजन के लिए इतना सड़ा-गला आटा, दाल, चावल और सब्जी इस्तेमाल होती थी कि खाना देखकर उबकाई आती थी। बच्चे शिकायत करते थे। उनके अभिभावक भी अकसर स्कूल आकर हंगामा खड़ा करते रहते थे। उन सबकी बातें कामिनी को सुननी पड़ती थीं, जबकि मिड-डे मील योजना में उसका कोई हाथ नहीं था। ग्रामप्रधान सरकारी पैसों में हेरा-फेरी करता था और सुनना पड़ता था कामिनी को।

स्कूल के नाम पर गैस का चूल्हा और सिलेंडर आया था। उसे भी प्रधान ने अपने घर में रखवा लिया था। लिहाजा लकड़ी के चूल्हे पर स्कूल के बच्चों के लिए खाना बनता था। खाना बनाने के लिए जो औरत रखी गई थी, उसको भी प्रधान निर्धारित मजदूरी से कम पैसा देता था।

स्कूल की इमारत काफी पुरानी थी। उसमें मरम्मत का काम करवाना था। मरम्मत के लिए पैसा भी आ चुका था, परंतु उसका उपयोग भी ग्रामप्रधान के माध्यम से होना था। जब तक वह चेक पर हस्ताक्षर नहीं करता, प्रधानाध्यापिका एक पैसा भी खर्च नहीं कर सकती थीं। कामिनी देवी ने मरम्मत और पुताई का कार्य करवाने के लिए कहा तो प्रधान ने कहा, 'आप काम करवा लीजिए।'

सीधे-स्वभाव की कामिनी ने तीन ठेकेदारों से बात करके, जो कम लागत पर काम करने को तैयार हुआ, उससे स्कूल की मरम्मत और पुताई का काम करवा लिया। काम पूरा हो गया तो ग्राम प्रधान पैसे का भुगतान करने में आनाकानी करने लगा। ठेकेदार को पैसा नहीं मिला तो उसने कामिनी से तगादा करना शुरू किया। प्रधान आज-कल करते-करते टालता जा रहा था। कामिनी को उसके घर जाकर पैसा माँगने में संकोच होता था, परंतु मन मारकर जाना ही पड़ता था। प्रधान सीधे मुँह

बात न करता। एक दिन बोला, ''आपको क्या तकलीफ हो रही है? स्कूल का काम हो गया, खुश रहिए। पैसा ठेकेदार का लगा है न! उसके लिए आप क्यों जल्दी मचा रही हैं, कमीशन खाना है?''

कामिनी सीधी-सादी महिला थी। प्रधान की बात पर भौचक्की रह गई। उसके मुँह से बोल न फूटे। अंदर से हूक उठी। लगा कि आँसू छलककर बाहर आ जाएँगे। मुँह घुमाकर दूसरी तरफ कर लिया। प्रधान की तीखी जुबान चलती रही, ''आपका काम पढ़ाना है, उतने तक ही सीमित रहिए, रुपए-पैसों के मामले में अपनी टाँग मत अड़ाइए; वरना ऊपर जाते देर नहीं लगेगी। यह ठाकुरों का गाँव है।'' यह एक तरह से उनकी जाति पर प्रहार था। वह पिछड़ी जाति की महिला थी, परंतु इतनी विषभरी वाणी पहली बार सुन रही थी। पुरुषों को तो आए दिन समाज में भेदभाव, ऊँच-नीच और छुआछूत का दंश झेलना पड़ता है, परंतु महिलाओं का इससे बहुत कम पाला पड़ता है। अपनों से दूर रहने पर कामिनी को यह दिन देखने पड़ रहे थे।

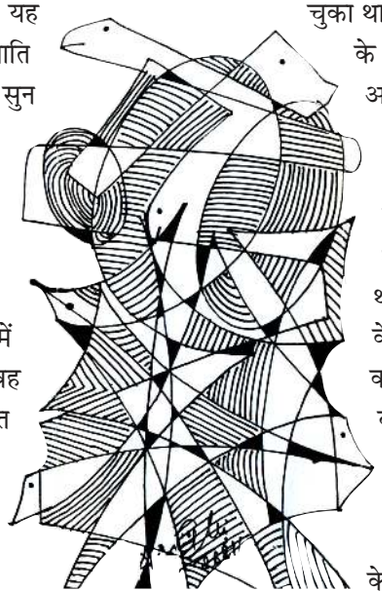

कामिनी का तो आए दिन स्कूल के मामलों में ग्रामप्रधान से पाला पड़ता रहता था। अपनी तरफ से वह संयत और अल्पभाषी थी, परंतु ग्रामप्रधान गुंडा प्रवृत्ति का पुरुष था। बात-बेबात पर गुस्सा करता। स्कूल के हर काम में वह अपना हिस्सा काट लेता था। कामिनी को उसकी कमीशनखोरी पर कोई एतराज नहीं था, परंतु जब वह उसको खरी-खोटी सुनाता तो ग्लानि और दुःख से भर उठती। कमरे में अकेली बिस्तर पर पड़ी-पड़ी रोती रहती। कोई उसका दुःख बाँटनेवाला न था। फोन पर पति और बच्चों से बात करके मन तो हलका कर लेती, परंतु उनसे अपनी परेशानी का जिक्र न करती, क्योंकि वह पति और बच्चों को अपने दुःख से दुःखी नहीं करना चाहती थी।

कामिनी से शिवपूजन प्रधान के नाराज होने के मात्र उपरोक्त कारण नहीं थे। इस मन-मुटाव के बीच में मानव की आदिम इच्छा और स्त्री-पुरुष संबंधों की जटिल प्रक्रिया थी। कामिनी ने एक पुरुष विशेष के समक्ष स्वयं को समर्पित नहीं किया था, यही उसकी परेशानी का मुख्य कारण था। कामिनी चालीस की उम्र पार कर चुकी थी। यौवन के मापदंड के अनुसार वह जवान नहीं थी, परंतु अच्छे खान-पान और रहन-सहन के कारण उसके चेहरे में सौम्यता के साथ-साथ किसी पुरुष को आकर्षित करनेवाला लावण्य और सौंदर्य मौजूद था। वह एक शिक्षिका थी, अतएव उसकी सोच सकारात्मक थी, इसका प्रभाव उसके चेहरे से झलकता था।

इस गाँव में वह अकेली रहती थी। शिवपूजन न केवल गुंडा प्रकृति का था, बल्कि लंपट भी था, ग्रामप्रधान तो था ही। एक तो करेला ऊपर से नीम चढ़ा। पैसा आने से आदमी की ताकत चार गुना हो जाती है। शिवपूजन औरतों के शरीर का भूखा भेड़िया था। औरत चाहे जितनी उम्रदराज हो जाए, वह कामी और लंपट पुरुष को हमेशा आकर्षित करती है। वह कामिनी का दीवाना था और इसके लिए तमाम तरह के हथकंडे इस्तेमाल कर रहा था कि परेशान होकर वह उसके सामने आत्म-समर्पण कर देगी।

नए स्कूल में पदभार ग्रहण करते ही कामिनी को शिवपूजन के इरादों का पता चल गया था। रोज स्कूल में आकर बेवजह बैठना, शाम को उसके कमरे का चक्कर लगाना और चिकनी-चुपड़ी बातों से लुभाने की कोशिश करना···कामिनी की आँखों के समक्ष सबकुछ स्पष्ट हो चुका था, परंतु वह कोई किशोरी नहीं थी कि कोई भी जवानी के रंगीन सपने दिखाकर उसे बहला-फुसलाकर उसकी अस्मिता के साथ खिलवाड़ कर लेता।

कामिनी ने शिवपूजन को धत्ता बताया तो वह उसे धमकाने लगा, स्कूल के कामों में अड़ँगा डालने लगा, तरह-तरह से उसे परेशान करता, परंतु कामिनी धैर्यवान महिला थी। जब तक बरदाश्त कर सकती थी, किया, फिर एक दिन स्कूल के अन्य अध्यापकों के साथ सलाह-मशविरा करके जिला शिक्षा अधिकारी को एक विस्तृत पत्र लिखकर प्रधान की ज्यादतियों के बारे में सूचित किया, परंतु ढाक के तीन पात, कई महीने बीत गए, पर शिक्षा अधिकारी की तरफ से कोई काररवाई नहीं हुई।

अंततः हारकर इन सब परेशानियों से बचने के लिए कामिनी ने अपनी बदली के लिए आवेदन दिया। इस पर भी कोई काररवाई नहीं हुई तो उसके मन में खीझ व्याप्त होने लगी। हताशा के क्षणों में अकेलेपन के भार से ऊबकर उसने इस्तीफा देने के बारे में भी सोचा, परंतु यह उचित नहीं लगा। उसके दोनों लड़के बड़े हो गए थे, जल्द ही उनकी उच्च शिक्षा के लिए लाखों रुपए की दरकार होगी। उसके पति भी तृतीय श्रेणी के कर्मचारी थे। उसके नौकरी छोड़ देने से सभी के भविष्य के उज्ज्वल सपनों में आग लग जाएगी।

कुछ अध्यापकों के कहने पर एक दिन की छुट्टी लेकर कामिनी ने जिला मुख्यालय जाना तय किया। अगले दिन ही वह जिला शिक्षा अधिकारी के कार्यालय में उपस्थित थी और संबंधित क्लर्क के समक्ष कुरसी पर विराजमान थी। ''तो आप तबादला चाहती हैं?'' क्लर्क अधेड़ उम्र का गंजी खोपड़ीवाला व्यक्ति था। उसकी आँखें कामिनी के पूरे अस्तित्व को परख चुकी थीं। कामिनी के शरीर का जायजा लेने के बाद उसने अजीब तरीके से अपना मुँह बिचकाया, जैसे मुँह में कोई कड़वी चीज आ गई हो। क्लर्क की आँखों के भाव बता रहे थे कि कामिनी उसे पसंद भी आई थी और नहीं भी। चंद्रमणि पहले सामने रखी चीज को परखता था।

''जी हाँ। देखिए, मैंने दो आवेदन-पत्र दे रखे हैं, उनपर···'' कामिनी ने अपने बैग से आवदेन की प्रति निकालकर दिखानी चाही,

परंतु चंद्रमणि ने उसकी बात बीच में ही काट दी।

''हाँ-हाँ, रहने दीजिए, तो क्या आप समझती हैं कि तबादला आवेदन देने मात्र से हो जाता है।''

''जी···'' कामिनी की समझ में क्लर्क की बात नहीं आई। वह अकबकाकर उसे देखने लगी।

''आप तबादला क्यों चाहती हैं?'' चंद्रमणि ने उल्टे सवाल किया।

''वही तो आपको बताना चाहती हूँ?'' फिर कामिनी ने स्कूल की परेशानियों, ग्रामप्रधान की उद्दंडता और मनमानी तथा अपनी घरेलू परेशानियों का संक्षेप में वर्णन किया। चंद्रमणि अपनी मुंडी हिलाता हुआ ध्यान से कामिनी की बातें सुन रहा था। बीच-बीच में उसकी आँखों में चमक सी आ जाती थी।

कामिनी के कान सुन्न हो गए, खून खौल उठा–कमीना, मक्कार कहीं का···क्लर्क के स्वभाव को वह पहले दिन ही पहचान गई थी, परंतु अपना काम करवाने के लिए कोई-न-कोई समझौता करना ही पड़ता है। कामिनी ने उसके स्वभाव को नगण्य करते हुए केवल अपने हित के लिए उसको रिश्वत देनी स्वीकार की थी। क्या पता था, वह पैसे लेकर भी उसके साथ मक्कारी करेगा।

कामिनी की बात खत्म होते ही क्लर्क ने कुटिलता से मुसकराते हुए कहा, ''तो तबादला करवाने में आपका स्वार्थ है?''

''स्वार्थ···''

''क्यों नहीं, अपेक्षित जगह पर तबादला होने से आपकी सारी परेशानियाँ दूर हो जाएँगी, ग्रामप्रधान आपको परेशान नहीं करेगा। सबसे बड़ी बात तो यह है कि आप अपने पति और बच्चों के पास पहुँच जाएँगी। इसमें आपका ही तो भला है।''

''जी!'' न समझनेवाले भाव से कामिनी ने कहा।

''और हमारा भला···'' चंद्रमणि ने आँखें मटकाते हुए कहा।

कामिनी कुछ-कुछ समझ गई। उसने कई लोगों से सुना था कि बी.एस.ए. बिना पैसा लिये कोई काम नहीं करता। उसने उत्सुकता से पूछा, ''जी बताइए।''

''आपको पता नहीं है?''

''आप खुलकर बताइए, तो कुछ समझ में आए।''

''साहब के बीस हजार और मेरे पाँच, फाइल में टिप्पणी मुझे ही तो करनी है।''

''ज्यादा नहीं हैं?''

''ज्यादा लगते हों तो वापस जाइए। जहाँ पर तैनात हैं, काम करिए। तनख्वाह मिलती रहेगी।''

''कुछ कम नहीं हो सकता?''

''यही रेट है, लोग एक हाथ से देते हैं, दूसरे हाथ से ऑर्डर लेकर जाते हैं।''

कामिनी कुछ देर विचार करती रही, अपने भले के लिए इतने पैसों का खून करने में कोई हिचक नहीं होनी चाहिए। मनुष्य अपने सुख के लिए ही मेहनत करता है और पैसे कमाता है। जीवन में आनेवाले संकट को दूर करने के लिए हम उपाय करते हैं। सुख की कामना के लिए तीर्थ-स्थलों में जाते हैं, पूजा-अर्चना और कथा-भागवत कराते हैं। इसमें पैसा और समय दोनों खर्च होते हैं, फिर अगर एक झटके में थोड़ा ज्यादा पैसे खर्च करके उनके समस्त कष्टों और दुःखों का निवारण हो रहा हो, तो कोई बुराई नहीं।

तुरंत उसने तय कर लिया कि क्या करना है। वह पूरे पैसे लेकर नहीं आई थी। पूछा, ''क्या अभी देने होंगे?''

''जब आपके पास हो जाएँ, दे देना। फाइल तभी आगे बढ़ेगी।''

''अभी पाँच हैं मेरे पास। आप चाहें तो ले लें, बाकी बाद में।''

''ठीक है, दे दीजिए।'' चंद्रमणि ने हाथ आगे बढ़ा दिया। कोई शर्म-संकोच नहीं, दफ्तर में सबकुछ खुलेआम चलता था। शिक्षा के दफ्तर में बाजार की तरह सौदेबाजी होती थी। रोज हजारों का कारोबार होता था। देने-लेनेवाले सभी खुश थे। किसी का काम बनता था, तो कोई अपनी तिजोरियाँ भरता था।

अगले हफ्ते कामिनी ने बैंक से बीस हजार रुपए निकाले और स्वयं जाकर चंद्रमणि को पकड़ा दिए। निवेदन करने पर चंद्रमणि ने बी.एस.ए. से उसकी मुलाकात भी करवा दी। बी.एस.ए. ने ध्यान से उसकी बात सुनी। कामिनी की समस्या और परेशानी से उसके माथे पर सिलवटें भी पड़ीं। ऐसा लग रहा था कि बी.एस.ए. वस्तुतः उसके दुःख से दुःखी था। उसने आश्वासन दिया कि एक महीने के अंदर उसका तबादला उसके गाँव के स्कूल में या आस-पास के किसी और स्कूल में हो जाएगा। कामिनी खुशियों के झोले में सपने समेटती हुई घर आ गई।

अगले एक महीने तक कामिनी की आँखों में चाँद उगते रहे। तारे बरात सजाकर मन के आँगन में मुसकराते रहे। पिछली सारी परेशानियों को भूलकर वह एक नई दुनिया में जीने लगी थी। इस दुनिया में केवल खुशियों के सुगंधित फूल थे, कष्ट व दुःख का कहीं अंशमात्र न था।

कामिनी के तबादले की बात केवल स्कूल के अध्यापकों को पता थी। एक महीना बीत गया। कामिनी की आशा को पंख लग गए। उसके तबादले का आदेश किसी भी दिन आ सकता था। वह प्रतिदिन आशाओं के हिंडोले पर सवार होकर स्कूल जाती, सारा दिन डाकिए का इंतजार करती, स्कूल के नाम आई डाक को बेसब्री से उलट-पलटकर देखती। बी.एस.ए. के कार्यालय की डाक सबसे पहले खोलती, परंतु पत्र खोलते ही उसकी आशाओं पर घड़ों पानी पड़ जाता। उसके हाथ-पैर ढीले हो जाते। फिर सारा दिन उसका मन किसी काम में न लगता। शाम वीरान हो जाती, रात काट खाने को दौड़ती, आसमान का चाँद नाग बनकर उसे डसने के लिए दौड़ता। उसकी रात करवट बदलते बीत जाती।

एक महीना···दो महीना···फिर तीसरा महीना बीत गया। कामिनी का ट्रांसफर ऑर्डर नहीं आया। साथी अध्यापक रोज पूछते कि उसके तबादले का आदेश अभी तक क्यों नहीं आया? इस प्रश्न का उसके पास कोई जवाब नहीं था। अंत में परेशान होकर उसने चंद्रमणि को एक दिन फोन किया, ''चंद्रमणिजी, मैं कामिनी बोल रही हूँ। पहचाना, मेरा तबादला···''

''हाँ कामिनीजी, आपका आदेश तैयार है, परंतु एक अड़चन आ गई है बीच में।''

कामिनी का हृदय अनजानी आशंका से धड़क उठा। सहमते हुए पूछा, ''क्या?''

''आपको जिस स्कूल में जाना है, वहाँ का प्रधानाध्यापक कहीं और नहीं जाना चाहता, इसलिए उसने अपना तबादला रुकवाने के लिए बी.एस.ए. को चालीस हजार दिए हैं, अगर आप इससे ज्यादा दे सकती हैं तो आपका तबादला पक्का।''

कामिनी के कान सुन्न हो गए, खून खौल उठा—कमीना, मक्कार कहीं का···क्लर्क के स्वभाव को वह पहले दिन ही पहचान गई थी, परंतु अपना काम करवाने के लिए कोई-न-कोई समझौता करना ही पड़ता है। कामिनी ने उसके स्वभाव को नगण्य करते हुए केवल अपने हित के लिए उसको रिश्वत देनी स्वीकार की थी। क्या पता था, वह पैसे लेकर भी उसके साथ मक्कारी करेगा।

दगाबाजी की कोई सीमा नहीं होती। थोड़े से लालच के लिए मनुष्य ही मनुष्य के साथ ऐसी बेढब चालें चलता है और दूसरों को इस तरह धोखा देता है कि स्वयं के ऊपर से उसका विश्वास उठ जाता है। एक क्षण में ही कामिनी के मस्तिष्क में पासबुक का अंतिम आँकड़ा घूम गया। दोनों बच्चे आई.आई.टी. की तैयारी के लिए कोचिंग कर रहे थे। बच्चों की जिद थी कि उन्हें कोटा के मशहूर गोयल कोचिंग इंस्टीट्यूट में दाखिला दिलवाया जाए। इस कोचिंग के लिए लाखों रुपए की फीस देनी पड़ी थी।

हॉस्टल में रहने का खर्चा अलग, किताबों का अलग। पति-पत्नी की अब तक की जमा-पूँजी कोचिंग के खर्चे में खत्म हो गई थी। खुदा न खास्ता अगर आई.आई.टी. या किसी अन्य इंजीनियरिंग इंस्टीट्यूट में उनका दाखिला हो गया तो फिर लाखों रुपए का खर्चा···कहाँ से आएगा यह सब? भविष्य निधि के अलावा और कोई उपाय न था।

कामिनी ने सोचकर बताया, ''परंतु मेरे पास और पैसे नहीं हैं। ये भी बड़ी मुश्किल से···''

चंद्रमणि कामिनी की बात हमेशा काट देता था, जैसे वह उसके मन की बात जानता था। इस बार भी बात काटकर बोला, ''तो क्या हुआ, आप एक बार आकर बी.एस.ए. से मिल लें। आप औरत हैं, शायद काम बन जाए।''

कामिनी को लगा, क्लर्क द्विअर्थी बात कह रहा है। चौंककर पूछा, ''क्या मतलब?''

''मतलब, एक बार साहब से मिलकर अपनी परेशानी विस्तार से बताइए। शायद वे पिघल जाएँ और आपका तबादला···'' उसने जान-बूझकर बात अधूरी छोड़ दी। कामिनी के मन में जिज्ञासा और कौतूहल जगाने के लिए इतना काफी था।

कामिनी के मन में आशा का थोड़ा संचार हुआ, ''कब आ जाऊँ?'' उत्सुकता से पूछा।

''कल ही आ जाइए।''

दूसरे दिन पहली बस से कामिनी जिला मुख्यालय पहुँच गई। जब वह बी.एस.ए. दफ्तर पहुँची, तब दस बज रहे थे। तब तक वहाँ न तो कोई कर्मचारी था, न कोई अधिकारी। सर्दी के दिन थे। वह कार्यालय के बाहर लॉन में खड़ी धूप सेंकती रही। साढ़े दस के बाद चंद्रमणि पहुँचा था। बाहर ही कामिनी ने उसे घेर लिया। वह ही-ही करता हुआ बोला, ''अच्छा हुआ, आप आ गईं। साहब ग्यारह बजे तक आएँगे। तब तक आप यही इंतजार करिए। मैं बुला लूँगा।'' वह धड़धड़ाता हुआ अंदर चला गया।

कामिनी धड़कते दिल से आशंकाओं के भँवरजाल में उलझी खड़ी रही। जाड़े की धूप में बहुत सारे लोग घास के मैदान में बैठकर गप्पें मार रहे थे, परंतु उसका मन कहीं बैठने का नहीं हुआ। सारा समय वह इधर-उधर टहलती रही। आते-जाते लोग उसे घूरकर देखते रहे, परंतु वह सबसे निर्लिप्त अपने ही विचारों में खोई हुई थी।

चंद्रमणि ने उसे बारह बजे अंदर बुलाया, ''माफ करिए, कामिनीजी, आपको लंबा इंतजार करना पड़ा। दरअसल साहब अभी-अभी आए हैं।'' वह साफ झूठ बोल रहा था। कामिनी ने बी.एस.ए. को ग्यारह बजे जीप से आते देखा था। उसके सामने वह जीप से उतरकर अंदर गए थे। फिर भी कामिनी ने चंद्रमणि की बात का प्रतिवाद नहीं किया। वह चाहती थी कि किसी प्रकार उसका काम हो जाए, फिर वह जिंदगी में दोबारा बी.एस.ए. कार्यालय की तरफ सिर उठाकर भी नहीं देखेगी।

चंद्रमणि ने आगे बताया, ''मुझे आपके काम की बहुत चिंता है। मैंने साहब से बात कर ली है, उनका कहना है···'' फिर उसने भेदभरी मुसकराहट से कामिनी की आँखों में झाँका। उसकी मुसकान और आँखों की चमक देखकर कामिनी एक अनजाने भय से काँप गई।

कामिनी ने कमरे में इधर-उधर निगाह दौड़ाई, चंद्रमणि के अलावा एक अन्य क्लर्क बाईं तरफ बैठा हुआ था, परंतु वह अपनी फाइलों में इस कदर व्यस्त था, जिससे लगता था कि कामिनी और चंद्रमणि की बातों से निर्लिप्त था। कामिनी का डर थोड़ा कम हुआ, कम-से-कम एक आदमी तो कमरे में है। चंद्रमणि की नजरों में उसे खतरा महसूस हो रहा था।

जिज्ञासा और उत्सुकता के मिले-जुले भाव से कामिनी ने चंद्रमणि

को देखा। वह बिना किसी संकोच के बोला, ''आप एक औरत हैं। अकसर अकेली रहती हैं। बी.एस.ए. साहब भी अपने परिवार से दूर यहाँ अकेले ही रहते हैं। आप समझ सकती हैं, मैं क्या कहना चाहता हूँ?''

कामिनी के शरीर में एक लहर दौड़ गई। उसका दिमाग सनसना गया, लगा कि सारे बदन में आग की लपटें उठ रही हों। चंद्रमणि क्या कहना चाहता था, यह वह अच्छी तरह समझ गई थी, परंतु अपने को जब्त किए बैठी रही। उसकी आँखों के सामने एक अँधेरी गुफा दिखाई पड़ने लगी थी। क्या इस गुफा के अंदर से उसे जाना होगा? गुफा के उस तरफ क्या कोई द्वार होगा, जिससे निकलकर उसे सुबह की रोशनी दिखाई देगी?

चंद्रमणि अपनी रौ में कहता जा रहा था, ''आपके पास देने के लिए और पैसे नहीं हैं। साहब का स्पष्ट सिद्धांत है कि बिना लिये-दिए कोई काम नहीं करते। आप एक अधेड़ महिला हैं, परंतु अभी भी सरस हैं। साहब का मन और तन जीत सकती हैं। आप हाँ करें, तो शाम को उनसे आपकी मुलाकात उनके घर पर करवा दूँ, आपके सारे दु:ख एक झटके में दूर हो जाएँगे।''

कामिनी को अपने जीवन में कभी इस तरह के प्रस्ताव से सामना नहीं हुआ था। जब जवान थी और अविवाहित, तब भी किसी युवक ने उसके सामने ऐसा घिनौना प्रस्ताव नहीं रखा था। प्रेम-निवेदन कई लड़कों ने किया था, परंतु उनमें छिछोरापन नहीं था, एक भावपूर्ण गरिमा थी।

आदमी अपने सुख के लिए बहुत सारे प्रयत्न करता है। दु:खों के निवारण के लिए भी बहुत कुछ करता है, परंतु दु:खों और कष्टों के निवारण के लिए कोई अपने आत्मसम्मान और मान-मर्यादा का सौदा नहीं करता। यह तो वेश्यावृत्ति से भी बुरा कर्म था। रुपया-पैसा इज्जत के लिए कमाया जाता है, इज्जत गँवाने के लिए नहीं। कामिनी को अपने जीवन में बहुत मान-सम्मान मिला था, एक महिला होने के नाते और शिक्षिका के नाते उसका सम्मान बाकी लोगों से ज्यादा था, परंतु आज···।

परंतु आज उसे स्वयं पर शर्म आने लगी थी। इतना घृणित प्रस्ताव उसके सामने रखा गया था। वह जवान होती तो कोई और बात होती, इस अवस्था में कोई उसके बारे में ऐसा सोच सकता है, यह उसकी बुद्धि से परे की बात थी। उसके सोचने-समझने की शक्ति गुम हो गई। आँखों के सामने अंधी गुफा का अँधेरा छा गया था। इस गुफा में क्या वह गुम होनेवाली थी?

नहीं! उसने अपने मन को संयत किया। गुस्से को बेकाबू हो जाने से बचाया और एक झटके से उठकर खड़ी हो गई। उसकी हड़बड़ाहट से कुरसी पीछे गिरते-गिरते बची। वह कभी भी इस अँधेरी गुफा में प्रवेश नहीं करेगी। उसका चेहरा लाल हो गया था, फिर भी यथासंभव अपनी वाणी को नियंत्रित करते हुए कहा, ''चंद्रमणिजी, अब इससे ज्यादा नीचता पर मत उतरिए। आप एक सरकारी कर्मचारी हैं। इस ऑफिस को चकलाघर मत बनाइए। मानव के अंदर अगर मानव होने की गरिमा नहीं है, तो वह पशु से भी बदतर है। आप अपने व्यक्तिगत जीवन में क्या हैं, इससे मुझे कुछ लेना-देना नहीं है, परंतु आपने मेरे बारे में बहुत गलत सोच लिया है। अब मैं किस तरह से आपका या किसी अन्य पुरुष का सम्मान कर सकती हूँ, मेरी नजरों में सारे पुरुष एक जैसे हो गए हैं। मैं कभी भी मन से उनका सम्मान नहीं कर पाऊँगी।

''और हाँ, मैं परेशान हूँ, परंतु इतनी परेशान भी नहीं कि अपने दु:खों को दूर करने के लिए अपने तन का सौदा करूँ। आपके घरों की औरतें अपना काम करवाने के लिए पैसा भी देती होंगी और जिस्म का सौदा भी करती होंगी। मेरे पारिवारिक संस्कारों और शिक्षा ने मुझे यह नहीं सिखाया। मुझे अपना तबादला नहीं करवाना। अब अगर आपमें थोड़ी सी भी गैरत होगी, तो मेरे पैसे वापस कर दीजिएगा, वरना मैं आपके पास माँगने नहीं आऊँगी। चलती हूँ, नमस्कार!'' कामिनी ने मुँह में आई लार को वहीं जमीन पर पिच्च से थूक दिया, जैसे सारी दुनिया की गंदगी उसके मुँह में भर गई हो। वह उस गंदगी को वहीं थूककर जा रही थी। वह तमतमाती हुई बाहर निकल गई।

कामिनी अभी भी उसी स्कूल में बतौर प्रधानाध्यापिका कार्य कर रही है। उसका अपने गृह-स्कूल में तबादला नहीं हुआ है। वह अब उसकी इच्छुक भी नहीं, जो उसके पास है, उसी में संतुष्ट है।

अब वह दु:खी और परेशान भी नहीं है। उसके दोनों बेटे आई.आई.टी. में आ गए। उसके जीवन का संघर्ष समाप्त हो गया, लेकिन दुनिया में मनुष्य को और बहुत सारे संघर्षों का सामना करना पड़ता है। कामिनी निडरता से उन सभी का सामना करते हुए इस पुरुष प्रधान समाज में गर्व से सीना तानकर अपने कर्तव्यों का निर्वहन कर रही है।

सा.अ.

७, श्री होम्स, कंचन विहार,
बचपन स्कूल के पास, लामती
विजय नगर, जबलपुर-४८२००२
दूरभाष : ०९९६८०२०९३०

सिहर गए गात

कविता

● अविनाश ब्यौहार 'उमरिया पान'

भौंरों ने
समझे हैं
फूल के जज्बात!
बागों में
छलक पड़ी
खुशबू की गागर!
नदी के
समर्पण से
लहराया सागर!
ठंडी हवाओं
से सिहर
गए गात!
नरम-नरम
धूप लगे
जैसे खरगोश!
शरद में
जाड़े को
आया है होश!
कंबल, रजाई
में दुबक
गई रात!

सा.अ.

८६, रॉयल एस्टेट कॉलोनी,
माढ़ोताल, कटंगी रोड,
जबलपुर-४८२००२
दूरभाष : ९८२६७९५३७२

हे भगवान्, हर साल नोटबंदी होती रहे

• हरि जोशी

उस परिवार में विमुद्रीकरण ने उन कहावतों को साकार कर दिया कि 'बेटा नंबरी, तो बाप दस नंबरी।' अथवा चोर का माल चंडाल खाए, मूँजी हाथ मलता रह जाए।' या 'पुत्र, पिता न भैया, सबसे बड़ा रुपैया।'

नोटबंदी से पहले कमाऊ विभागवाले पुत्र से पिता ने दो-चार बार कहा था, ''बेटे, इन दिनों मैं आर्थिक तंगी से जूझ रहा हूँ, तेरे पास तो पैसे की अच्छी आवक है, मेरी थोड़ी मदद कर दे।''

बेटा हर बार उत्तर देता, ''मेरे पास पैसा बचता ही कहाँ है, जो मैं आप की मदद कर सकूँ। इस हाथ से कमाता हूँ, उस हाथ से चला जाता है। जब इकट्ठा हो जाएगा, तब मदद कर दूँगा।''

ऐसा करते-करते कई वर्ष निकल गए। पिता ने पूरी तरह आशा छोड़ दी कि बेटा कभी कोई सहायता करेगा। अब उसने कुछ भी कहना बंद कर दिया। बेटा धीरे-धीरे धनी होता जा रहा था। उसने धन तो भरपूर कमाया, किंतु इतना रसवत (रिश्वत) का पैसा बैंक में जमा करने में आयकर विभाग की काररवाई का खतरा था, इसीलिए काला धन एक थैले में भरकर घर में छुपाकर रख लिया। इसी बीच विमुद्रीकरण का प्रेत आ धमका। अब उस काली कमाई को कहाँ रखे? देश के क्रूर शासक पर क्रोध व्यक्त करते हुए बड़बड़ा रहा था, 'किस पर भरोसा किया जाए? जिसके पास अभी पैसा रख देगा, बाद में जब जरूरत होगी, तब वापस मिलेगा या नहीं?' बहुत विचार-मंथन के बाद सोचा, 'बाप कैसा भी हो, हितचिंतक ही होता है। सोचा, 'पिता के बैंक खाते में राशि डाल दूँ। पिताजी वरिष्ठ नागरिक हैं, वर्षों पूर्व रिटायर्ड हुए हैं, इनके पास काले धन होने की कोई शंका भी न करेगा।' अत: बेटे ने पिताजी से निवेदन किया, ''पिताजी, आपको पैसे की जरूरत थी, दे दूँ? खाते में बड़ी राशि डाल दूँगा।''

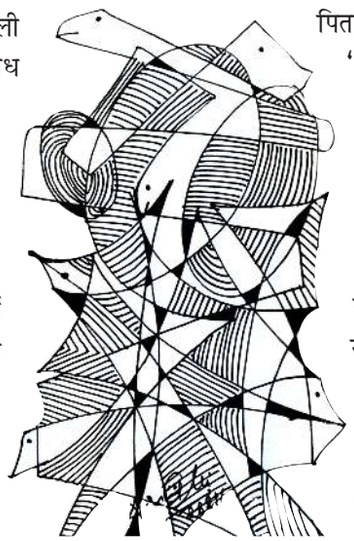

''फिर उस राशि का मैं उपयोग कर लूँ?'' पिता ने पूछा।

''किंतु कुछ दिनों बाद वह राशि आपसे ले लूँगा।''

पिता ने मन-ही-मन आकलन कर लिया, 'अब आया है ऊँट पहाड़ के नीचे।'

बाप भी कम घुटा हुआ नहीं था, उड़ती चिड़िया को पहचान लेता था। समझ गया कि आखिर बेटा इस बार पिता के प्रति इतनी उदारता क्यों दिखा रहा है? उत्तर दिया, ''मैं तुझसे क्यों माँगूँ? माँगते-माँगते थक गया, तूने तब तो एक छदाम नहीं दी। मेरे किस काम की वह राशि, अब जहाँ फेंकना हो, उसे फेंक आ।''

विमुद्रीकरण के कारण बेटे की पिता के लिए मुद्रा बदल चुकी थी। उसने अतिरिक्त नम्रता दिखाते हुए पिता से कहा, ''आपकी सेवा करना मेरा दायित्व है। यह राशि आपके खाते में डालता हूँ।''

पिता मौन रहा।

इस तरह बेटे ने जितनी कही थी, उससे भी अधिक राशि पिता के खाते में डाल दी। बेटा विमुद्रीकरण के पूर्व भले ही 'चमड़ी जाए, पर दमड़ी न जाए' में विश्वास करता था, किंतु विमुद्रीकरण होते ही दानवीर कर्ण हो गया। दोनों हाथों से लुटाने को बेटा तत्पर। नोटबंदी की रट में खैरात लगी बँटने। कई दिनों तक प्रतिदिन बेटा पिता के खाते में अच्छी राशि जमा कराता रहा।

उधर पिता जान-बूझकर अनदेखी करता रहा। जब विमुद्रीकरण का भूत चला गया, सबकुछ सामान्य सा होने लगा तो एक दिन बेटे ने पिता से निवेदन किया, ''अब मैं आपके खाते से वह राशि निकाल लूँ, जो मैंने विमुद्रीकरण के दिनों में जमा कराई थी?''

''देख बेटा, जब भगवान् देता है तो छप्पर फाड़कर देता है, विमुद्रीकरण के कारण मैं तो मालामाल हो गया और तू कंगाल। यदि नोटबंदी न होती तो मुझे भी तू क्यों देता? मैं तो भगवान् से प्रार्थना करता हूँ कि हर साल एक बार इसी तरह नोटबंदी हो जाया करे।''

वस्तुत: बेटा नंबरी था तो बाप भी दस नंबरी। उसने उत्तर दिया, ''जैसे पैसा जमा कराया था, वैसे ही निकाल ले।''

जाने-माने व्यंग्यकार। अब तक तीन कविता-संग्रह, पंद्रह व्यंग्य-संग्रह, छह उपन्यास के अलावा प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित एवं आकाशवाणी तथा दूरदर्शन से प्रसारित। म.प्र. हिंदी साहित्य सम्मेलन का 'वागीश्वरी सम्मान', 'व्यंग्यश्री सम्मान', 'गोयनका सारस्वत सम्मान' आदि।

''लेकिन आपके हस्ताक्षर से अब पैसा निकलेगा।'' बेटा बोला।

''बुढ़ापे में हस्ताक्षर बदल जाते हैं, मेरा पैसा ही नहीं निकल पा रहा है, तो तेरा कैसे निकालूँ?''

''लेकिन मुझे तो अब जरूरत है, मुझे रुपए चाहिए।''

''कौन, कैसे रुपए? अरे भाई, तूने तो कुछ भी पैसा जमा नहीं किया। फिर किसी के खाते में कोई कुछ डाल दे और उसे भूख लगी हो तो वह कुछ छोड़ता है? सबकुछ खा जाता है। मैं तो कई दिन से भूखा था, कई बार जब तुमसे माँगा था, तुमने कभी दिया नहीं। और मैंने तो तुम्हें मेरे खाते में पैसा डालने को कभी कहा नहीं। मेरे खाते में तुमने कुछ भी नहीं डाला। हाँ, मैं आई हुई लक्ष्मी का कभी अपमान नहीं कर सकता। उसे बाहर कैसे निकाल दूँ? बिन माँगे मोती मिलें, माँगे मिले न भीख।''

इस तरह पिता ने बेटे को दो टूक उत्तर दिया—''मेरे खाते में जितना पैसा है, वह मेरा है। तेरे खाते के पैसे को मैं हाथ भी लगाऊँ तो कहना। मेरे पास ही अतिरिक्त पैसा कहाँ है, जो मैं तेरी मदद कर सकूँ। जब आएगा, तब कर दूँगा।'' और पिता ने यह कहते हुए चर्चा बंद कर दी कि 'पुत्र, पिता न भैया, सबसे बड़ा रुपैया।'

३/३२ छत्रसाल नगर, फेज-२
जे.के. रोड, भोपाल-४६२०२२
दूरभाष : ०९८२६४२६२३२

कविता

चक्रधारी हाथ

• 'शैलांचली' सुशील बुड़ाकोटी

हाथ
एक-दूसरे से मिलाना
रखता है अलग मायना
संधि-स्नेह-स्वागत-प्रेम
या प्रणय में सीधा-सरल होकर
और प्रतिरोध या प्रतिशोध में
आग में जलने को तत्पर
कभी सहजता तो कभी कड़कपन के साथ
मिलाया जाता है हाथ।

हाथ
मित्रता में आगे,
कटुता में पीछे
स्वत: हो जाता है हाथ।

हाथ
अनुयायी होकर
अपने बड़ों का करते अनुसरण,
पैरों के धीमे या तेजी में
हिल-मिलकर गत्यानुक्रम
में चल पड़ते हैं हाथ।

हाथ
जब बालों को
सहलाते-सँवारने लगते हैं,
तब कंधे का काम करने लगते हैं हाथ।

हाथ
सफर में सिर के नीचे मोड़कर
सिरहाने का काम करते हैं,
ऐसे में सुस्ती व थकान
मिटाते हैं हाथ
पल भर में नींद
दिला देते हैं हाथ।

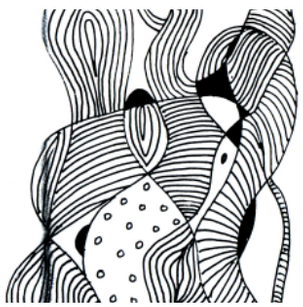

हाथ
पकड़ ले जब दूसरे हाथ
मिलते हैं तब हजारों हाथ,
और फिर कारवाँ बना देते हैं
समर्थकों के हाथ।

हाथ
पर उँगलियाँ
उनपर विभाज्य रेखाएँ
बन जाती हैं विश्व भर में
सहज गणना करनेवाले,
सर्वसुलभ गिनता करनेवाले हाथ।

हाथ
बेलते हुए रोटी
घुमाते हुए चाक
रिंगाते हुए चक्की,
सुचक्री बन जाते हैं
चक्रधारी हाथ।

हाथ
कुष्ठरोगियों से मिलाते
सहानुभूतिपूर्वक
दवा-मलहम लगाते
हमदर्द बनकर
आमटे व मदर टेरेसा के
निर्मलमना-स्वच्छ हृदयी
विभूतियों के चूमते-सहलाते थे,
सड़ने-गलनेवाले दया-पात्री हाथ।

हाथ
लिप्त होकर श्रम में
गंदगी हटाकर स्वच्छता बढ़ाकर,
अपावन जगहों को पावन करते हैं
निर्लिप्त होकर हाथ।

१२८, गोरा स्ट्रीट
वाटर वर्क्स रोड
मानसा-१५७५०५ (पंजाब)
दूरभाष : ९८७७१७२४१०

कलई

● अशोक गुजराती

हाथों में साइकिल थामे किसी तरह चल रहा था वह। साइकिल के कैरियर पर एक गठरी सी लगी हुई थी और मैला-कुचैला थैला हैंडल पर लटक रहा था। बीच-बीच में वह आवाज लगा रहा था—''कलई करा लो···कलई!''

वह काफी बूढ़ा था—सफेद दाढ़ी, सिर के बाल उसी रंग के, कुछ-कुछ कमजोर सा, निरीह और अकिंचन साधारण कुरता-पाजामा। हलका सा मैला। आँखें बंद-बंद सी, शायद कम दिखाई पड़ने के कारण सिकुड़ी हुईं। आवाज में दम था, शायद रोज के रियाज की वजह से। वैसे भी अकसर लोगों की आवाज में जोर रहता है, चाहे पैर कब्र में घुसने को बेताब हों।

सामने की बिल्डिंग के ऊपरी फ्लैट से उसे पुकारा गया। वह ठहरा, वहाँ से एक महिला ने पूछा, ''कितने पैसे लगेंगे एक कड़ाही के?''

उसने मिचमिची आँखों से आकाश की ओर देखा, ''पहले आप कड़ाही तो दिखाइए।''

उस स्त्री ने रस्सी से बँधी थैली में कड़ाही नीचे भेजी। बूढ़े ने उसका निरीक्षण किया और गरदन ऊँची कर बोला, ''पचास रुपए होंगे, बहनजी।''

बहनजी मोल-भाव पर उतर आईं। कुछ अकड़ के साथ बूढ़े ने अपना अंतिम निर्णय सुना दिया, ''चालीस से कम में नहीं होगा, बहनजी।''

बहनजी के हामी भरने पर थैली से उसने कड़ाही निकाली। कड़ाही अंदर-बाहर से कोयले की नाईं काली थी और तैलीय भी। उस गली में पड़ोस की इमारत का पिछवाड़ा था। वहाँ खड़ी की जाती कारें अभी अपने मालिकों के संग जा चुकी थीं। खाली जगह देखकर बूढ़े ने अपनी बिना स्टैंड की साइकिल खंभे से टिकाई और अपना असबाब गठरी व थैला नीचे उतारा। उकड़ूँ बैठकर गठरी खोली। उसमें से चार पायों की चूल्हे जैसी चीज निकाली। थोड़ा सा गड्ढा खोदकर उसे उसपर रखा। उसके बाहर निकले पाइप में पत्रे की बनी धौंकनी, जिसमें हैंडल फिट था, फँसाई। धौंकनी को एक चौड़े-सपाट पत्थर पर जमाया, ताकि चूल्हा उसके झटके से हिले नहीं। चूल्हे के छेद में एक कपड़ा ठूँसा, उसे जलाकर उसपर कोयले और लकड़ी के छोटे-छोटे टुकड़े डाले। यह सारा सामान निश्चित ही उसकी गठरी या थैले के भीतर समाया हुआ था।

धौंकनी के हैंडल को घुमाते ही चूल्हे से आग की लपटें उठने लगीं। कोयले और लकड़ी के टुकड़ों ने भी धीरे-धीरे आग पकड़ ली। अब उसने उसपर कड़ाही को उलटा कर रखा। इस सारी कवायद के बाद उसने जेब से बीड़ी निकालकर जलाई और अपने नितंब टिकाकर जरा सुस्ताते हुए कश लेने में डूब गया। कभी ध्यान आने पर वह आवाज लगा देता—'कलई करा लो, कलई!'

सुपरिचित लेखक। औपन्यासिक जीवनी, आलेख संग्रह, किशोर उपन्यास, अनुवाद (एक-एक); कहानी-संग्रह, व्यंग्य एवं लघुकथा-संग्रह (दो-दो), सात बालोपयोगी पुस्तकें और प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में छह सौ से अधिक रचनाएँ प्रकाशित। 'खुशबू का अहसास', 'पंछी सी उड़ान' महाराष्ट्र राज्य हिंदी साहित्य अकादमी से, 'अंगुलीहीन हथेली' केंद्रीय हिंदी निदेशालय से, 'खुशी के दीये' दिव्य स्मृति समिति से पुरस्कृत और कहानी 'भगदड़' को कमलेश्वर स्मृति कथा पुरस्कार।

यह सब वह और उसकी पत्नी अपने फ्लैट से देख रहे थे। पत्नी बोली, ''यह कैसी कलई है! कलई तो हम छोटे थे, तब एक साथ चालीस-पचास पीतल के बरतनों पर करवाते थे। चूल्हा, खैर कमोबेश ऐसा ही होता था, लेकिन हवा मारने के लिए उससे जुड़ी गुब्बारे सी धौंकनी होती थी, जिसे दबा-दबाकर आग को तेज किया जाता था। और हमारे साफ-सुथरे बासनों पर वह राँगे की सख्त सी छड़ लगाकर कपड़े से उसे फैलाते हुए कलई करता था। बरतन चाँदी से चमक जाते थे—बिल्कुल नए जैसे।''

पत्नी के इतने लंबे संस्मरण को सुनते हुए वह सिर हिलाता रहा, क्योंकि उसने भी कलई करने की यही पद्धति अपने छुटपन में देखी थी। प्रकटत: उसने अपने जाने संशोधन किया, ''भई, समय बदल गया है। चूल्हा देखो, कैसा आधुनिक है और उसका पंप हैंडलवाला। पर कलई तो चल ही रही है।''

''कैसे चल रही है, न वह कड़ाही पीतल की है और न ही उस बुड्ढे के हाथ में राँगे की सलाख दीख रही है।''

''हाँ, यह तो है।'' उसे भी ताज्जुब हो रहा था कि इस कारीगर ने अब तक न टिन की रॉड निकाली है मुलम्मे के लिए और न ही कड़ाही पीतल की लग रही है। उसने कहीं पढ़ा था कि इन कड़ाहियों को उस मिश्र धातु की चादर से, जिसे विमान बनाने में प्रयोग करते हैं, खराब हुए विमान के अवशेषों से इकट्ठा कर तैयार किया जाता है। उसने पत्नी को बताया तो उसने भी सहमति जताई।

वे देखते रहे। बूढ़ा आग की लौ बढ़ा-बढ़ाकर और कड़ाही के अलग-अलग भागों को उलटा-पलटाकर सीधे अतीव ताप देता रहा। कालापन छूमंतर हो शुभ्रता में बदलता गया। जली हुई कालिख की सफेद राख कड़ाही से अब भी कहीं-कहीं चिपटी हुई थी। फिर उसने कड़ाही को नीचे उतारकर चूल्हा बुझा दिया। इंतजार के बावजूद और कोई ग्राहक आकर्षित नहीं हो पाया था। इसके पश्चात् शुरू हुआ उसका फाइनल

टचिंग। लोहे के तारवाले ब्रश से घिस-घिसकर, पानी डाल-डालकर और कपड़े से पोंछ-पोंछकर उसने उस कलूटी को सुंदर से सुंदरतम बनाने में कोई कसर नहीं छोड़ी।

उसकी पत्नी की समझ में सारा मामला आ गया। वह बोली, ''कड़ाही इतनी काली होती कैसे है?'' इस बीच वह अपनी कड़ाही अंदर से ले आई थी। उसे दिखाते हुए उसने अन्य स्त्रियों के आलस और लापरवाही को जमकर कोसा, ''देखो, मेरी कड़ाही, पता नहीं, ये औरतें कैसे उसे इतनी गंदी होने तक इस्तेमाल किए जाती हैं।'' उसे कहीं अपनी पत्नी की कार्य-कुशलता पर गर्व हो आया।

बूढ़े ने उठकर वह कड़ाही उस महिला के झोले में डाल दी। महिला ने रस्सी से ऊपर खींचने के पश्चात् 'बहुत अच्छी साफ नहीं हुई' की शिकायत बुदबुदाते हुए जाहिर की। फिर ज्यों अनिच्छा से थैली में चालीस रुपए नीचे बूढ़े तक मुँह टेढ़ा कर पहुँचा दिए। बूढ़ा ऐसी तोहमतों का कदाचित आदी था, चुप्पी साधे रहा।

बूढ़ा जाने ही वाला था कि वह उसके पास गया। उसने सहज जिज्ञासावश पूछा, ''चाचा, आजकल पीतल के बरतनों पर कलई नहीं होती क्या?''

बूढ़े ने अपने सिर पर हाथ फेरते हुए जवाब दिया, ''होती क्यों नहीं साब, पर अब पीतल के भाँड़े होते ही कहाँ हैं।''

''यही कड़ाही-वड़ाई लोग साफ करवाते हैं। हम भी क्या करें, जिस काम से दो रोटी नसीब हो, वही सही।''

उसके मन में बूढ़े के प्रति करुणा उपज आई। उसने कहा, ''आपकी बात ठीक है, लेकिन यह गँदली-गँदली कड़ाही! लगता है, लोग उसे अच्छे से धोते-धुलवाते नहीं हैं।''

उसे उम्मीद नहीं थी कि वह मामूली कलईगर उसकी इस साधारण सी व्यर्थ टिप्पणी का कोई उत्तर भी देगा। इसके विपरीत बूढ़े ने मुसकराकर जो कहा, उसे चकित कर गया। उसने अपना सब सामान समेटकर साइकिल पर यथास्थान लगा दिया था। साइकिल को आगे बढ़ाता हुआ वह बोला, ''साब, हम ज्यादा पढ़े-लिखे नहीं हैं। हाँ, तजरबा जरूर है। इसीलिए बता रहे हैं, वह कड़ाही हमारा लोकतंत्र है और उसपर लिपटी कालिख और कुछ नहीं, आज की गंदी राजनीति है।''

वह अवाक्! जाते हुए बूढ़े को ताकता रह गया। वह सोच रहा था कि जैसे सियासत की गलीज की उसने सफाई कर दी हो, क्या यही वह गरीब-अपढ़ जनता है, जो नेताओं के दाँव-पेचों को इन दिनों अधिक समझ-बूझ रही है; धर्मांधता, भ्रष्टाचार विहीन समाज तथा विकास के झूठे वादों के वशीकरण से बचते हुए नए राजनैतिक-सामाजिक मूल्यों को वर्चस्व दे रही है। वरना तो मध्यम वर्ग, जो अधिकांश पढ़ा-लिखा है, अपवाद छोड़ दें तो इस उत्तर-आधुनिक समय में अपने दिमाग को ताक पर सजाकर धर्म, जातिवाद, सांप्रदायिकता, अंधविश्वास जैसे नाशक तत्त्वों को वरीयता देने में नहीं हिचकिचा रहा और मटमैले सैलाब में बहा जा रहा है। क्या यह कालिमा कभी उतर पाएगी, स्वच्छता अभियान के बावजूद क्या इन मटियाले मनों को साफ-शफ्फाफ कर उनपर कलई हो जाएगी?

सा अ

बी-४०, एफ-१, दिलशाद कॉलोनी, दिल्ली-११००९५
दूरभाष : ९९७१७४४१६४

हाइकू

सब बे अर्थ

• नाथूराम राठौर

गाँव में

गाँव में सच
पर शहर में है
झूठा सच।

मेरे गाँव में
गोली हैं, बंदूकें हैं
गुनाह नहीं।

मेरे गाँव में
मध्याह्न भोजन के
अपढ़ बच्चे।

खाली हैं गाँव
औरत और मर्द
पंचायतों में।

गुरु गाँव में
रहता शहर में
पढ़ाता कहाँ?

अपराध भी
आवाजाही करते
गाँव-गाँव में।

अस्पताल में

अस्पताल में
न रोतीं, न हँसतीं
बेदर्द नर्सें।

अस्पताल में
लाल, नीली, दूधिया
नर्सें-ही-नर्सें।

अस्पताल में
मुख, देह, नयन
सब बे अर्थ।

अस्पताल में
रोगी और नर्स की
जुड़ती आँखें।

अस्पताल में
मिष्ट लगती हैं
कड़वी गोलियाँ।

डॉक्टर कम
रोगी अधिकतम
निदान कहाँ?

इतः ततः

राजनीति में
तिरसठ-छत्तीस
दोमुँही चालें।

सत्ता का पानी
पंक भी, कमल भी
उजला-मैला।

सदय कन्या
क्यों जनमती है
हिंस्र कोख से?

इधर खाई
उधर कुआँ, कूद
जा मतदाता।

महानगर
पहचानते नहीं
हम हैं कौन?

कृष्णार्जुन
बनते रिश्तेदार
बिना खून के।

सा अ

एम.आई.जी. ३८३
विवेकानंद नगर
दमोह-४७०६६१ (म.प्र.)
दूरभाष : ०९९९३१५५९७७

उपनयन एक सार्थक संस्कार

• नताशा अरोड़ा

प्रतिष्ठित लेखिका-कथाकार। अब तक दो कहानी-संग्रह, तीन उपन्यास एवं इतिहास पर चार पुस्तकों के अतिरिक्त सामयिक विषयों पर लगभग एक सौ पचास लेख प्रकाशित। 'युगांतर' एवं 'हिडिंबा' उपन्यास विशेष चर्चित। कमला गोइनका फाउंडेशन के 'वाग्देवी सम्मान' एवं उ.प्र. हिंदी संस्थान के 'महादेवी वर्मा पुरस्कार' सहित नौ अन्य अखिल भारतीय पुरस्कारों से सम्मानित। संप्रति स्वतंत्र लेखन।

भारतीय संस्कृति में संस्कार बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। गणना की दृष्टि से हमारे प्राचीन ग्रंथों में कतिपय मतवैभिन्य के बाद भी सोलह संस्कार लगभग सर्वमान्य हैं। प्राचीन समय में इन सभी का यथाविधि पालन होता था। 'गर्भाधान' से आरंभ होकर अंतिम 'दाह-संस्कार' तक भारतीय जीवन में इनके प्रति गहरी आस्था रही है। संस्कार हमारी संस्कृति का मेरुदंड हैं। जिस प्रकार मेरुदंड का प्रत्येक मनका व्यक्ति के शरीर को सँभालने में अपना महत्त्व रखता है, उसी प्रकार प्रत्येक संस्कार जीवन को न केवल शारीरिक, वरन् आर्थिक एवं मानसिक संबल प्रदान कर समाज को सर्वांगीण रूप से स्वस्थ नागरिक प्रदान करता है। शरीर-मन व बुद्धि के विकास के साथ-साथ जीवन में सद्गुणों की प्रतिष्ठा एवं नि:श्रेयस (कल्याण, मुक्ति) की प्राप्ति ही इन संस्कारों की स्थापना का उद्देश्य रहा है। सत्यत: इन संस्कारों के रूप में हमारे पूर्वज-मनीषियों ने व्यक्ति के व्यक्तित्व के बहुमुखी विकास की व्यवस्था दी है। 'संस्कार रहिता ये तु तेषां जन्म निरर्थकम्', अर्थात् महर्षि आश्वलायन कहते हैं कि संस्कार रहित जीवन निरर्थक है। 'संस्कारो हि गुणांतराधानमुच्यते' अर्थात् दुर्गुणों का नाश एवं गुणों की प्रतिष्ठा को ही संस्कार कहते हैं। चरक संहिता का उक्त कथन यह स्पष्ट करता है कि संस्कार मात्र एक परंपरा ढोने का नाम नहीं है, वरन् यह व्यक्ति और इस प्रकार एक स्वस्थ समाज के निर्माण द्वारा देश एवं संपूर्ण मानवता के हित का सशक्त माध्यम है।

इतनी धनवान् भारतीय संस्कृति आज यदि हमारी वर्तमान समस्याओं के समाधान में असहाय सी दिखती है तो यह संस्कृति का नहीं, हमारा दोष है। हमने शनै:-शनै: आधुनिकता की दौड़, पश्चिम के प्रभाव और भौतिकता की चमक-दमक में स्वयं ही यह त्रासदपूर्ण स्थिति खड़ी कर ली है, जहाँ संस्कारों की उपेक्षा हमारी संस्कृति की प्रतिष्ठा पर ही कुठाराघात कर रही है। वर्तमान की विकट से विकटतर होती समस्याएँ तथा शिक्षा प्रणाली की कमजोरियाँ बालमन को मस्तिष्क पर पढ़ाई को एक बोझ बनाती जा रही हैं। यह बोझ युवा छात्रों में ही नहीं, किशोरों तक में इतने तनाव उत्पन्न कर रहा है कि विद्यार्थियों में आत्महंतात्मक प्रवृत्ति बढ़ने लगी है। अल्पायु से ही छात्र हिंसक होने लगे हैं, अनुशासनहीनता तो इसके सम्मुख छोटी समस्या बनकर रह गई है। हाल ही में एक किशोर छात्र द्वारा नन्हे से छात्र की निर्मम हत्या क्या हमें चेताने के लिए पर्याप्त नहीं? कुछ समय पूर्व का निर्भया कांड भी क्या विस्मृत किया जा सकता है, जहाँ एक नाबालिग द्वारा बलात्कार में अमानवीय निर्मर्मता की गई थी?

विश्वविद्यालयों के वातावरण में शिक्षा के स्थान पर गुंडागर्दी की हवा का बहना और युवा शक्ति का दुरुपयोग करते हुए उसे राजनीति का अखाड़ा बना देना, क्या यह भी गंभीर चिंतन-मंथन का विषय नहीं है? निश्चय ही समय है कि अपनी प्राचीन संस्कृति के मूल्यों को टटोला जाए व उनका पुनर्विश्लेषण किया जाए, क्योंकि किसी भी राष्ट्र की समाज की समस्याओं का निदान अपनी परंपरा में ही खोजा जा सकता है। हम जब जन्म लेते हैं तो केवल माता के गर्भ से ही नहीं, वरन् एक संस्कृति के गर्भ से जन्म लेते हैं। वही हमारी रगों में प्रवाहित होती है, अत: समाधान विदेशी सोच से नहीं मिल सकते। इसका यह तात्पर्य नहीं है कि दूसरी संस्कृतियों की सोच निकृष्ट है। हर संस्कृति अपनी-अपनी विशिष्टताओं से युक्त होती है। हमें अपनी परिस्थितियों व वातावरण तथा आवश्यकताओं के अनुरूप पग उठाने हैं। मानव हितकारी सोच कहीं से भी आत्मसात् की जा सकती है।

अपनी समस्याओं की उक्त पृष्ठभूमि में परम आवश्यक है कि हम आज अपने संस्कारों पर गंभीर दृष्टि डालें। यों तो सभी संस्कार अपनी-अपनी जगह महत्त्वपूर्ण हैं। हमारे ऋषियों ने माँ के गर्भ में शिशु के रहते हुए ही सद्संस्कारों की व्यवस्था देकर उस तथ्य की पुष्टि की है, जिसे आज पश्चिम जगत् वैज्ञानिक दृष्टि से स्वीकार कर रहा है कि गर्भस्थ शिशु पर भी माँ के क्रियाकलापों, सोच एवं बाह्य स्थितियों का प्रभाव पड़ता है। इन आरंभिक संस्कारों का किसी सीमा तक अभी भी परंपरागत रूप में पालन किया जाता है, किंतु हम उस विशेष संस्कार की ओर से बहुत उदासीन हो गए हैं, जो सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। हमारी शिक्षा प्रणाली से सीधा जुड़ा यह संस्कार हमारी उपेक्षावश शनै:-शनै: केवल नाममात्र में जीवित है, अन्यथा इसकी महत्ता और मूल उद्देश्य को हम विस्मृत कर चुके हैं। यह संस्कार है यज्ञोपवीत, अर्थात् उपनयन संस्कार, जिसे प्रचलित भाषा में जनेऊ कहते हैं।

एक ओर जहाँ विवाह-संस्कार की भव्यता व चमक-दमक बढ़ती जा रही है, वहीं शिक्षा हेतु विद्यार्थी को गुरु के पास भेजनेवाला यह उपनयन संस्कार अब विवाह से पूर्व मात्र एक रिचुअल बनकर रह गया है। कितनी त्रासदपूर्ण एवं हास्यास्पद स्थिति है कि चूँकि यज्ञोपवीत डाले बिना युवक द्विज नहीं बनता, अत: विवाह-संस्कार में प्रवेश का अधिकारी नहीं बनता; इस कारण लकीर पीटते हुए विवाह से चंद घंटे पूर्व पंडितजी भावी वर का झटपट यज्ञोपवीत संस्कार करा देते हैं। इसी प्रक्रिया में उपनयन के अर्थानुसार विद्यार्थी को चूँकि गृह-त्याग कर ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए गुरुकुल जाना होता है, अत: आज उपनयन की खानापूर्ति में ब्रह्मचारी बना हुआ वर घर के द्वार से चंद कदम बाहर जाकर गुरुकुल जाने के संस्कार की औपचारिकता पूर्ण कर तुरंत घर में वापस ले आया जाता है। इस विधि में ब्रह्मचर्य पालन के स्त्री-संसर्ग से दूर रहने के श्लोक पढ़ते हुए अगले ही क्षण उसे गृहस्थाश्रम के लिए तैयार मान लिया जाता है।

यज्ञोपवीत की अहमियत को नकारते हुए विवाह-संस्कार पूर्ण होते ही आधुनिक वर इसे व्यर्थ की रूढ़ि मानकर उतार भी देता है। जिन परिवारों में अल्पायु में परंपरा निभाते हुए उपनयन करते भी हैं तो वहाँ भी उसकी महत्ता को कोई स्थान न देकर इसे एक भव्य प्रदर्शन के रूप में मना लिया जाता है। कैसी विडंबना है कि एक ओर शिक्षा की महत्ता को समझने के कारण आधुनिक माता-पिता दुधमुँहे शिशु के स्कूल में दाखिले को लेकर परेशान रहते हैं, संपन्न लोग लाखों रुपयों का खर्च करने को तैयार रहते हैं, डोनेशन के नाम पर यह तथाकथित अंग्रेजी स्कूल मनमानी फीस वसूल करते हैं। और तो और, इस अंधी दौड़ में आज निम्नवर्गीय व्यक्ति भी पेट काटकर कुकुरमुत्तों की तरह उग आए अंग्रेजी स्कूलों में अपनी हैसियत से आगे बढ़कर बच्चे को पढ़ाता है कि गिटपिट पढ़कर वह जेंटलमैन बन सके। दूसरी ओर हम अपनी परंपरा के मोती चुनना भूलते जा रहे हैं।

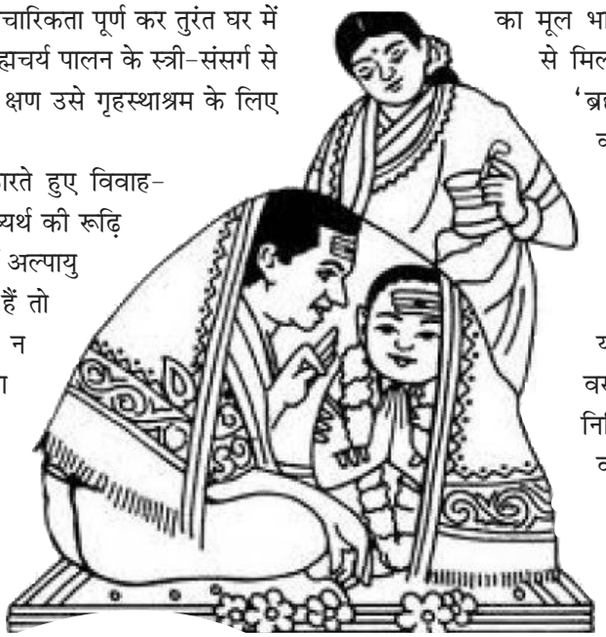

समय है कि देश के नौनिहालों को सही दिशा देने के लिए इस उपनयनन संस्कार को पुन: व्याख्यायित किया जाए। देशकाल के अनुसार किशोरवय बालक को इसके सार तत्त्वों से अवगत कराने की दृष्टि से इसका आयोजन हो, न कि रूढ़ि के रूप में मात्र औपचारिकता हो। वर्तमान समय में बच्चों की प्राइमरी शिक्षा पूर्ण होने के पश्चात् उपनयन का आयोजन श्रेष्ठ व उचित समय है। सत्यत: इस संस्कार द्वारा ही सर्वप्रथम बालक का अपनी भारतीय संस्कृति से सीधा परिचय होता है। वह जान पाता है कि भारतीय परंपराएँ निरर्थक रूढ़ियाँ नहीं हैं। इस तथ्य का उजागर होना उसमें अपने देश की सुपरंपराओं के प्रति गर्वानुभूति उत्पन्न करेगा।

जिस प्रकार मिट्टी के कच्चे घड़े पर लाल-काले रंगों से जो रेखाएँ खींच दी जाती हैं, वे पकने पर अमिट हो जाती हैं, उसी प्रकार बालमन पर यथासमय डाला गया संस्कार अमिट होता है। यही संस्कार उपनयन अथवा यज्ञोपवीत संस्कार है। उपनयन का अर्थ है—सन्निकट ले जाना, अर्थात् वह संस्कार, जिसके द्वारा भावी छात्र को गुरु के सन्निकट या पास ले जाया जाता है, ताकि वह वेदाध्ययन (वर्तमान दृष्टि से शिक्षा प्राप्त करना) कर सके। इस संस्कार को मनीषियों ने सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण इसी कारण माना है कि इस समय बालक को कोमल शाख के समान सही दिशा में मोड़ा जा सकता है और उसके व्यक्तित्व को संपूर्ण सद्नागरिक के रूप में विकसित किया जा सकता है। इस संस्कार का मूल भारती है। प्रसंगत: पारसियों में भी इसी से मिलती-जुलती प्रथा मिलती है। ऋग्वेद में 'ब्रह्मचारी' शब्द का उल्लेख इसके उद्गम की प्राचीनता का द्योतक है। आरंभिक रूप से यह संस्कार अति सरल था। शनै:-शनै: इस संस्कार की क्रियाओं का विस्तार हुआ व प्रत्येक क्रिया में नव अर्थों का रोपण हुआ। हमारा उद्देश्य यहाँ इन विधियों के विस्तार में जाना नहीं, वरन् मुख्य क्रियाओं की महत्ता व उनके निहित गूढ़ अर्थों को समझना तथा उन्हें वर्तमान के अनुरूप ढालना है।

उपनयन संस्कार में यज्ञोपवीत धारण किया बालक आचार्य द्वारा शिष्य रूप में स्वीकृत होकर गायत्री मंत्र द्वारा दीक्षित किया जाता है। इसी कारण इसे यज्ञोपवीत संस्कार भी कहते हैं। महर्षि कात्यायन व अन्य ऋषियों द्वारा इस यज्ञोपवीत की निर्माण-विधि प्रतिपादित की गई है। इसका निर्माण 'ऊँ भूर्भुव:' के उच्चारण से किया जाता है। आज गायत्री मंत्र की महत्ता व श्रेष्ठता की वैश्विक स्वीकृति कौन नहीं जानता। यज्ञोपवीत वह सूत्र है, जो तीन-तीन तंतु होते हैं। इसमें तीन सूत्र व त्रिवृत्त रखने के भी कारण हैं।

हिंदू धर्म (सनातन धर्म) में तीन की संख्या आध्यात्मिक, आधिदैविक व आधिभौतिक क्षेत्रों में महत्त्व रखती है। ऋक्, यजु:, साम ही तीन प्रमुख वेद हैं (तभी वेदत्रयी कहा जाता है)। ब्रह्मा, विष्णु व महेश त्रिदेव हैं। भूत, वर्तमान व भविष्य तीन काल हैं। सत्त्व, रज, तम तीन गुण हैं। तीन ऋतुएँ हैं—ग्रीष्म, वर्षा व शीत। पृथ्वी, अंतरिक्ष व द्यु लोक भी तीन हैं। इसके तीन-तीन तंतुओं के तीन-तीन धागे, यानी कुल नौ तंतु नौ देवताओं के आवास स्थान हैं, जिनकी प्रतिष्ठापना से मानव अपने हृदय में ब्रह्मलाभ, तेजस्विता, धैर्य, आह्लादकत्व, स्नेह, प्रजापालन, शुचित्व, प्राणत्व आदि गुणों को धारण करते हुए अनुभव करता है कि 'मैंने इन गुणों से परिपूर्ण सूत्र धारण किया है।' सूत्रधारण की यह

व्याख्या भावी छात्र के मानसिक व बौद्धिक विकास हेतु एक श्रेष्ठ व्यवस्था है। ऐसे यज्ञोपवीत को धारण करने के उपरांत छात्र आचार्य से गुरु मंत्र प्राप्त कर शिक्षा का अधिकारी बनता है।

प्राचीन व्यवस्था में इस संस्कार के उपरांत गुरुकुल में रहते हुए विद्यार्थी को कुछ विशिष्ट वस्तुएँ धारण करनी पड़ती थीं, यथा यज्ञोपवीत, दंड, मेखला व मृगचर्म आदि। दंड की आवश्यकता तत्कालीन परिस्थितियों में सुरक्षा व पथ-प्रदर्शन हेतु होती थी। प्राचीन ग्रंथ इन सभी की विस्तृत व्याख्या देते हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य को उपनयन का अधिकार था। तत्कालीन समाज का चतुर्थ वर्ण शूद्र इस अधिकार से वंचित रखा गया है। पहले भी इंगित किया जा चुका है कि पूर्व में स्थापित मान्यताएँ व नियम तत्कालीन परिस्थितियों से उपजे हैं। वर्तमान की परिस्थितियों में उनको रूढ़ि रूप में निभाना हितकर नहीं होता। किंतु उससे भी अधिक अहितकर उस संपूर्ण संस्कार को पूर्णांश में जाने-समझे बिना त्यागना है। उचितानुचित का निर्धारण हमें करना है और यह भी हमें ही निर्धारित करना है कि बालपन से ही हम कैसे संस्कार रोपित करें कि उनकी मानसिकता को सही दिशा मिल सके। जातिवर्ण व लिंग-भेद किए बिना समस्त भावी नौनिहालों का उपनयन संस्कार आज की आवश्यकता है। आज बढ़ते फैनेटिज्म को रोकने के लिए उतनी ही दृढता भरी सु सोच का होना जरूरी है। यज्ञोपवीत संस्कार द्वारा ही सद्बीजों का रोपण संभव है। उपनयन के नियम निर्माण में हमारे मनीषियों ने जिस शुचिता और पवित्रता पर विशेष बल दिया है, वह हमारे वर्तमान शिक्षालयों से विलुप्तप्राय: है, जिसकी पुनर्स्थापना हमारा उद्‌देश्य होना चाहिए।

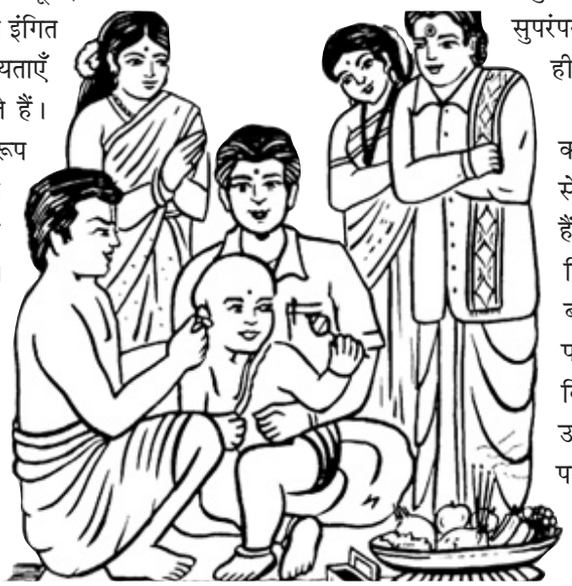

प्राय: यह मान लिया गया है कि उपनयन संस्कार से कन्याएँ वंचित रखी गई हैं। यह सोच सत्य नहीं है। प्राचीन समाज में दो प्रकार की स्त्रियों का उल्लेख है। प्रथम ब्रह्मवादिनी (ज्ञानिनी) एवं द्वितीय सद्योवधु (जो विवाह कर लेती है)। विचारणीय है कि जिस संस्कृति में ज्ञानदात्री देवी सरस्वती हों, वहाँ कन्या की अशिक्षा की सोच ही दोषपूर्ण है। हमें अनेक ऋषिकाओं के नाम मिलते हैं, जिनका इस क्षेत्र में विशिष्ट योगदान रहा है, यथा गार्गी, लोपामुद्रा, आत्रेयी, अपाला, घोषा, श्रद्धा आदि। स्पष्ट है कि भारतीय सोच बालक-बालिका दोनों के शिक्षित होने की व्यवस्था देती है। मध्यकालीन कुप्रथाओं के कारण ही समाज में यह सोच व्याप्त हो गई, जिसके परिणामस्वरूप कन्याएँ शिक्षा से वंचित कर दी गईं और बाल विवाह जैसी कुप्रथा बल पकड़ती गई। आज कन्या-शिक्षा का प्रसार समाज व देश के विकास के लिए अति शुभ है।

विद्यार्थी के ब्रह्मचर्यावस्था के नियम आज भी सार्थक हैं, यथा ब्रह्मचारी के लिए कुछ तामसिक खाद्यों व पेयों का वर्णन था। गुरु/आचार्य एवं गुरुजन की सेवा अनिवार्य थी। मन को व्यवस्थित रखना, कृतज्ञता का भाव, सत्य वादन तथा स्वास्थ्य संबंधी नियमों का पालन अनिवार्य था। छात्र को व्यर्थ के छिद्रान्वेषण से दूर रहना होता था। गुरु का सम्मान व आदर अनिवार्य था, यथा गुरु के समीप नीचे आसन पर बैठना, जम्हाई न लेना, जोर से न हँसना, उच्च स्वर में न बोलना, बहस न करना व सम्मानपूर्वक अपना दृष्टिकोण रखना आदि। शिक्षा-प्राप्ति ही प्राथमिक व अंतिम उद्‌देश्य था। हमें अपनी वर्तमान शिक्षा प्रणाली को आधुनिकतम बनाने के साथ उसमें इन प्राचीन सुपरंपराओं एवं मानवीय मूल्यों का समन्वय करना ही अभीप्सित होना चाहिए।

आज समय है कि हम स्वयं से प्रश्न करें, ऐसा क्यों है कि हम संस्कारों को धर्म से जोड़कर एक सर्वथा अलग रूप दे बैठे हैं? क्यों नहीं यह उपनयन संस्कार हमारी शिक्षा प्रणाली का अनिवार्य अंग बने। जैसे बच्चे के दाखिले के लिए जन्म का प्रमाण-पत्र अनिवार्य होता है, उसी प्रकार माध्यमिक विद्यालय प्रवेश से पूर्व विद्यार्थी के लिए उपनयन की शिक्षा का कम-से-कम मौखिक परीक्षण अनिवार्य हो। हम यह भी प्रश्न करें कि क्या आतंकवाद को आतंक से मिटाया जा सकता है? घृणा को और अधिक घृणा से दूर किया जा सकता है या अमानवीयता को और अधिक अमानवीय बनकर समाप्त किया जा सकता है? यदि नहीं, तब विकल्प क्या है? विकल्प है—संस्कारयुक्त शिक्षण। जैसा कि ऊपर चर्चा हो चुकी है, आज आवश्यकता है खुली दृष्टि, वर्तमान के अनुरूप सोच एवं प्राचीन-नवीन के संतुलन से युक्त ऐसी व्यवस्था की, जो भावी पीढ़ी को तैयार कर सके। हमें मैकाले के उत्तराधिकारी नहीं, वरन् प्राचीन भारतीय मनीषा के उत्तराधिकारी तैयार करने हैं। अत: विवाह के समय यज्ञोपवीत के रिचुअल की खानापूर्ति कर अपनी विश्वविख्यात संस्कृति का मखौल न बनाकर उचित कैशोर्यावस्था में ज्ञानी आचार्यों द्वारा संपूर्ण गंभीरता से अपने बच्चों को विद्यालय में प्रवेश कराना ही औचित्य पूर्ण होगा। हम सब जानते हैं कि विश्व की दृष्टि सदा भारतीय ज्ञान की ओर रही है, तब हम स्वयं को ही उससे वंचित रख अपनी मानसिक कंगाली सिद्ध करने पर क्यों तुले हैं। यदि भारत वैश्विक योग गुरु बन सकता है तो शैक्षिक गुरु भी बन सकता है। मार्ग कंटकाकीर्ण व लंबा है, किंतु उसपर प्रथम पग तो रखना ही होगा।

सा अ

सृजन, ए-१६, सेक्टर-२७
नोएडा-२०१३०१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९८७१४४४४३२

ऊँचे-नीचे रास्ते

● एम.डी. मिश्रा 'आनंद'

कृषि विभाग कार्यालय में साधारण क्लर्क की नौकरी थी। अधिकारी ही नहीं, गिरधारी बाबू को सभी 'बड़े बाबू' कहते। अपने कर्तव्य के प्रति समर्पित गिरधारी लाल सबसे पहले दफ्तर पहुँचते और सभी के बाद घर प्रस्थान करते। घर पहुँचते ही पत्नी सुखदेवी कहती, सभी लोग तो बहुत पहले आ चुके, आप इतने विलंब से क्यों आते हैं? इस पर उनका एक ही जवाब हुआ करता कि जिसका वेतन लेते हैं, उसका काम तो करना ही पड़ेगा। सुखदेवी चाय बनाकर लाती, निकट बैठ कहने लगती कि देखो, बड़ी बेटी यशोदा का शादी-विवाह ईश्वर की कृपा से अच्छा हो गया था; लेकिन सरस्वती भी विवाह योग्य हो गई है। कार्यालय से अवकाश लेकर बेटी के लिए घर-वर की तलाश करो। गिरधारी लाल कहते कि छोटी तनख्वाह में परिवार का खर्चा चलाना कठिन हो रहा है। एक बच्ची घर से विदा हो गई है, अभी दो की शादी करनी है और बेटा पारसमणि की बोर्ड की परीक्षा है; वह पढ़ाई में बहुत मेहनत कर रहा है। उसे कोचिंग सेंटर में भेजने के लिए भी पैसा नहीं है। परंतु देख लेना, गरीब और ईमानदार का साथ ईश्वर देता है। सभी की चोटी उसके हाथ में रहती है। सब ठीक हो जाएगा। मुझे तो उसी पर भरोसा है। सुखदेवी बोली कि जिस जगह आप काम करते हैं, वहाँ पर तो ऊपरी कमाई भी होती है। वे तुनककर कहते, अरे भाग्यवान! मुझे मेहनत की तनख्वाह लेनी है। ऊपरी कमाई साथ में व्याधियाँ लेकर आती है।

इतने में पारस और सुरेखा वहाँ आ गए, ''पापा, हम लोगों को पुस्तकें खरीदनी हैं।''

''ठीक है, पहली तारीख के बाद सबको दिला देंगे।''

पारस ने परिश्रम से पढ़ाई कर बोर्ड परीक्षा दी। उसे आशा से अधिक सफलता प्राप्त हुई, प्रदेश में प्रथम स्थान मिला। संपूर्ण परिवार ने खुशियाँ मनाईं और ईश्वर को धन्यवाद दिया।

बारहवीं उत्तीर्ण करने के पश्चात् विद्यार्थी के लिए निर्णायक अवसर होता है कि किस लाइन में जाना है—डॉक्टर, इंजीनियर, प्रशासन किंतु संरक्षकों को शिक्षार्थी से अधिक अपेक्षाएँ होती हैं। सभी लोग शुभकामनाएँ, बधाई दे रहे थे। उनके कार्यालय के सभी कर्मचारियों तथा अधिकारियों ने गिरधारीलाल को शुभकामनाएँ देते हुए उनका उत्साह बढ़ाया।

शाम को पारस के मामा पंडित रामनंदजी उनके घर आए। वे कथावाचक भागवती पंडित संस्कृत के विद्वान् थे। उन्होंने पारस को आशीर्वाद दिया और अपनी बहन सुखदेवी से कहा, ''देख सुखी, पारस को मुझे सौंप दे। मैं इसे बनारस में पढ़ाऊँगा। यह बहुत नाम करेगा और धन कमाएगा। आजकल तो कथावाचकों की इतनी माँग है कि टेलीविजन के हर चैनल पर कथाएँ हो रही हैं, और अब तो विदेश में भी माँग बढ़ गई है। हमारे देशवासी संपूर्ण विश्व में फैल चुके हैं। वे वहाँ रहते हुए वहाँ की संस्कृति व रहन-सहन से ऊब जाते हैं और फिर अपनी मातृभूमि को स्मरण करते हुए कथा सुनकर अपने देश की सुखानुभूति का अनुभव करते हैं। इससे कथावाचकों को विदेशी मुद्रा कमाने का शुभ अवसर प्राप्त हो जाता है।''

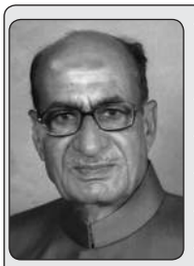

जाने-माने लेखक एवं कवि। प्रमुख कृतियाँ हैं—'मोक्ष की राह', 'मैं कौन हूँ', 'पंख' (काव्य-संग्रह), 'इंद्रधनुष से रंग जीवन के संग' (कहानी-संग्रह)। आकाशवाणी छतरपुर से काव्यधारा तथा सब टीवी पर कार्यक्रमों का प्रसारण। म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति भोपाल एवं साहित्य मंडल, नाथद्वारा, 'साहित्यश्री' बनारस सहित कई संस्थाओं द्वारा सम्मानित।

सुखदेवी ने कहा, ''भाई साहब, भानजा आपका, मुझसे क्या पूछना है? आप जहाँ पढ़ाना चाहो, पढ़ाओ। उसका भविष्य बन जाएगा। मुझे क्या आपत्ति है?''

पंडितजी की यह खबर पूरे ग्राम में फैल गई तो प्रमुख लोग व बुद्धिजीवी कहे जानेवाले प्राणी एक हो गए और सबके बीच प्रसंग पारस का ही चल रहा था। पंडितजी कुछ ज्ञान चर्चा भी कर रहे थे। एक अनुभवी ने कहा, ''हमारे एक रिश्तेदार इंजीनियर हैं। बड़े-बड़े सरकारी बाँध बनवाते हैं। उनका रहन-सहन, ठाट-बाट राजसी है। पहले से माता-पिता बहुत गरीब थे, किंतु अब वे करोड़पति हैं। उनके बनवाए बाँध टूट गए, फूट गए, परंतु उनका मकान सात पीढ़ियों तक नहीं टूटेगा। समझो, स्वर्ग का कोना है। इसलिए हम कहते हैं कि पारस को इंजीनियर बनाओ, दरिद्रता दूर हो जाएगी।''

दूसरी ओर से आवाज आई—''अरे भइया, डॉक्टर बनवाओ। देखते नहीं, हर घर में एक-दो बीमार पड़े ही रहते हैं। डॉक्टरों के सामने तो मरीजों की लाइन लगी रहती है।''

पारस भी ये सभी चर्चाएँ बैठा चुपचाप सुन रहा था। उसके मन में उथल-पुथल हो रही थी; जैसे उफनती हुई नदी में भँवर चल रही हो। उसे याद आया कि एक अध्यापक ने समझाया था कि विद्याध्ययन ज्ञानार्जन के लिए किया जाता है। गिरधारी बाबू ने कहा, ''ऊँची पढ़ाई के लिए बहुत रुपया-पैसा चाहिए। वह हमारे पास है नहीं। अब आगे तो पढ़ाना ही है। जहाँ बन सकेगा, प्रयास करते हैं।''

पारसमणि कस्बे से शहर चला गया और कॉलेज में प्रवेश लेकर पढ़ाई करने लगा। चूँकि वह अच्छे अंकों से पास हुआ था, इसलिए कॉलेज की पढ़ाई की फीस शासन की घोषणानुसार माफ हो गई थी और ऊपरी रहन-सहन के खर्च के लिए वह ट्यूशन पढ़ाने लगा। परिश्रम से पढ़ाई करते हुए आगे बढ़ता गया। समय बीतता जाता है, पता ही नहीं चलता। वह अपनी लगन से परिश्रम करते हुए प्रतियोगिताओं में सम्मिलित होता गया। उसके भाग्य ने भी साथ दिया। वह संघ लोक सेवा आयोग की परीक्षा पास कर आई.ए.एस. के लिए चयनित हो गया।

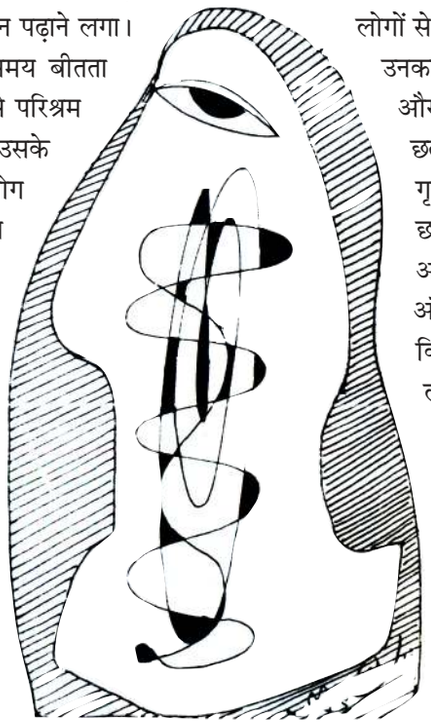

जब यह शुभ समाचार गृह-निवास पर आया तो माता-पिता को अति प्रसन्नता हुई, जैसे किसी नेत्रहीन को ज्योति मिल गई हो। परिवार तथा स्वजनों में खुशी की लहर दौड़ गई। गिरधारी और सुखवती ने मंदिर जाकर ईश्वर का धन्यवाद किया। भोग-प्रसाद चढ़ाया।

अगले दिन वहाँ के कलेक्टर ने शासकीय वाहन भेजकर गिरधारी बाबू को अपने बँगले पर बुलाया। साथ बैठकर चाय-नाश्ता कराया और शुभकामनाएँ दीं। यह बात कार्यालय में शीघ्र ही फैल गई कि गिरधारी बाबू का बेटा कलेक्टर बनेगा। कार्यालय के सभी लोग मिल रहे थे और शाम को चाय नाश्ते का आयोजन भी स्टाफ की ओर से किया गया। आस-पड़ोस के सभी लोग कह रहे थे कि मनुष्य धूल भरा हीरा है, कब कहाँ पहुँच जाए। देखो, एक साधारण से क्लर्क का लड़का कलेक्टर बन गया! धन्य भाग्य हैं गिरधारी बाबू और सुखवती के! सब जगह ऐसी ही चर्चा हो रही थी।

कहते हैं कि पारस के स्पर्श से लोहा सोना हो जाता है। अखिल भारतीय प्रशासनिक सेवा के प्रशिक्षण केंद्र लाल बहादुर शास्त्री नेशनल अकादमी ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन, मंसूरी के लिए पारस को बुलावा आ गया और उसने प्रशिक्षण लेना प्रारंभ कर दिया। प्रातः चार बजे से जागना, नित्य क्रिया से निवृत्त होकर ड्रिल परेड में सम्मिलित होना, आठ बजे नाश्ता, कक्षाओं में पढ़ाई, व्याख्यान, श्रवणालय के पश्चात् व्यावहारिक ज्ञान। शाम तक की व्यस्तता मात्र पाँच-छह घंटे से अधिक आराम करने या नींद लेने के लिए समय नहीं मिलता। प्रशिक्षण के दौरान देश के अनेक भागों की यात्राएँ, प्रशासनिक कार्यों के अनुभव कराए जाते हैं। प्रशिक्षार्थियों को ऐसे तपाया जाता है, जैसे भट्ठी में सुनार सोना तपाता है। भोजन-विश्राम के अतिरिक्त सोलह से अठारह घंटे परिश्रम कराया जाता है। देश और विदेश, भूमंडल की राजनीति एवं प्रशासनिक व्यवस्थाओं से अवगत कराया जाता है। प्रमुख रूप से तीन बातें, जो उनके लिए महत्त्वपूर्ण होती हैं, सिखाई जाती हैं—शासक-राजनेताओं से तालमेल के साथ रहें। आपके रहन-सहन, हाव-भाव सभी ईमानदार व सादगीपूर्ण दिखने चाहिए। अपनी निजी बातों को किसी भी आम जन से साझा नहीं करें।

पारस गरीब परिवार से था। वह पूरे प्रशिक्षण में बहुत लोगों से आगे की कतार में था। अब भारत-भ्रमण के लिए उनका समूह चयनित किया गया था, जिसमें पंद्रह लड़के और दस लड़कियाँ सम्मिलित थीं। यह दल चलते हुए छतरपुर (म.प्र.) आया। वहाँ उन्हें शासकीय विश्राम गृह और दूसरे होटलों में ठहराया गया। महाराज छत्रसाल की नगरी के समीप धुवेला म्यूजियम अवलोकन किया। जहाँ उनके भाला, तलवार, बरछी और अंगवस्त्र रण-शृंगार के साधन अवलोकन किए। रात्रि-विश्राम छतरपुर में करने के पश्चात् वे लोग विश्वप्रसिद्ध खजुराहो के लिए प्रस्थान कर गए। वहाँ अच्छे से होटल में ठहर गए। मंदिर समूह का प्रांगण, हरे-भरे पार्क में गगनचुंबी भव्य मंदिर, जो चौदहवीं सदी में चंदेल वंश के शासकों ने अमर कलाकृतियों का निर्माण कराया, जो मंदिरों की दीवारों पर उकेरा है, इनकी सजीवता देखकर देश और विदेश के दर्शक अचंभित-रोमांचित हो जाते हैं। स्त्री-पुरुषों की काम-क्रीड़ा का वर्णन अद्वितीय है। संपूर्ण प्रणय कथाएँ साकार होने लगती हैं। मानो निर्जीव पत्थरों पर उकेरी गई प्रतिमाएँ हमारे समक्ष प्रकट हो गई हों। कामपिपासा शांत होने की प्रक्रिया, अंतिम उत्कर्ष बिना किसी छुपाव के प्रदर्शित की गई है। लड़कों का समूह अलग और लड़कियों का समूह बड़ी तन्मयता से कलाकृतियाँ निहार रहा था।

निधि प्रशिक्षण में प्रारंभ से ही पारस की सादगी, लगनशीलता से प्रभावित थी और अन्य साथियों की अपेक्षा उससे अधिक वार्त्तालाप किया करती थी। आज उसने पारस की ओर देखा तो उसके पहले और आज के देखने में कुछ अंतर था। आँखें बिना कहे सबकुछ कह देती हैं। इसका अहसास पारस को भी था। आज उसको ऐसा लगा कि असहनीय तपती गरमी के बाद पहली बरसात की ठंडी बूँदें उसके शरीर पर गिर रही हैं। उसको एक असीम सुखानुभूति हो रही थी। किंतु कहीं एक कोने में गरीबी का भूत, उसकी हेय भावना उसे कुंठित कर रही थी कि कहाँ यह राजकुमारी जैसी सुखों में पली-बढ़ी हुई और कहाँ हमारा परिवार!

एक साथी ने कंधा झटकाया—''अरे पारस, मंदिर-मूर्तियाँ तो इधर

हैं।'' वह झिझकता हुआ उनको देखने लगा।

निधि एक वरिष्ठ अधिकारी व धनवान् पिता की बेटी थी। निधि, जो स्वयं आई.ए.एस. का प्रशिक्षण साथ में ले रही थी, रूप-रंग में सुंदर, फूलकुमारी, आसमान की परी जैसी! वह सोच रहा था, क्या वह वास्तव में उसे चाहती है, प्रेम करने लगी है अथवा बेवकूफ बना रही है। लेकिन अब पारस की जिंदगी में एक नया अहसास जुड़ रहा था। वह अपने सपनों को साकार होते हुए भी अनुभव करने लगा। खजुराहो मंदिर की चित्रकला को मंदिरों के पास बैठे देशी-विदेशी लोग मानो अपने हृदय में उतार रहे थे। कुछ लोग हाथों से कागजों पर उतार रहे थे और अधिकांश कैमरा और मोबाइल का प्रयोग करने में लगे हुए थे। मंदिर एक नहीं, अनेक हैं और सभी अपनी कुछ विशेष कला सँजोए सीना ताने शान से खड़े हैं। प्रत्येक मंदिर के इर्द-गिर्द सदैव ही पर्यटकों की भीड़ रहती है। दर्शनार्थी आते हैं और वापस चले जाते हैं। प्रशिक्षार्थी की यह टोली भी अपने हृदय में अमिट छाप लेकर लौट गई।

निधि ने अपने मन की बात फोन पर अपनी माँ को बताई और पारस का पता-ठिकाना भी बताया। यह सब बात उन्होंने अपने पति इंद्रजीत को बताई। इंद्रजीत स्वयं एक उच्च पद पर विराजमान वरिष्ठ आई.ए.एस. अधिकारी थे। उन्होंने पारस के घर-परिवार के संबंध में जब पता लगाया तो निराश हुए। उन्होंने अपनी पत्नी से कहा, ''देखो मीनाक्षी, पारस का परिवार अपने स्तर का नहीं है। उसके पिता एक साधारण क्लर्क हैं। रहन-सहन, रिश्तेदार, सगे-संबंधी भी तो बराबरी के होने चाहिए। इसलिए निधि के लिए कोई अच्छा घर-वर देखा जाएगा। इससे सीनियर बैच में मेरे पहचानवालों का लड़का भी आई.ए.एस. है। संबंध करने में आनंद आएगा।''

दीपावली के त्योहार के अवकाश पर निधि अपने घर आई तो इसी विषय पर चर्चा प्रारंभ हो गई और अपने मन की बात पिता इंद्रजीत ने निधि को भी बताई। निधि चुपचाप सुनती रही। उसने माँ के पास आकर कहा, ''पारस गरीब घर का है। उसका स्वभाव, विचार अच्छे हैं। वह अपने से बड़ा हम लोगों को हमेशा मानता रहेगा, सम्मान करेगा। उसमें कोई नशा या व्यसन नहीं है। हम लोगों की इतनी बड़ी नौकरी है कि उस परिवार के स्तर का मूल्यांकन करने की आवश्यकता ही नहीं है। मैं उसे पसंद करती हूँ।''

मीनाक्षी ने अपने पति को यह समझाया कि जब लड़का-लड़की एक-दूसरे को पसंद करते हैं और बराबरी का पद है। लड़का भी देखने में अच्छा है तो पिता इंद्रजीत ने कहा, ''ठीक है, अभी कोई शीघ्रता की आवश्यकता नहीं है। पहले प्रशिक्षण पूरा हो जाए। इन लोगों की पोस्टिंग होने के पश्चात् शादी करना उचित रहेगा और आप दोनों माँ-बेटी की इच्छानुसार मेरी भी सहमति है। बेटी को प्रसन्न रहना चाहिए। यही तो माता-पिता चाहते हैं।''

समय तो किसी की प्रतीक्षा नहीं करता है। वह अपनी गति से चलता रहता है। इस बैच का प्रशिक्षण पूरा हो गया। दोनों को एक ही प्रदेश के लिए आवंटित कर दिया गया। वे परीक्षा अवधि में सहायक कलेक्टर में पदस्थापना प्राप्त कर एस.डी.एम. बन गए थे।

बसंतोत्सव पर निधि अपने घर आई। इंद्रजीत ने पारस को भी अपने बँगले पर आमंत्रित किया और निधि से विवाह के संबंध में कहा तो पारस ने सहर्ष प्रस्ताव स्वीकार कर अपने माता-पिता से भी बात करने के लिए कहा। कुछ समय पश्चात् इंद्रजीत और मीनाक्षी ने गिरधारी लाल के पास उपस्थित होकर अपना प्रस्ताव सुनाया। गिरधारी बाबू को अपार प्रसन्नता हुई। उन्होंने कहा, ''हमारे धन्य भाग हैं, जो अपनी बेटी का रिश्ता लेकर आए हैं! हमें स्वीकार है।''

इंद्रजीत ने ऐसी सुंदर व्यवस्था और भव्यता अनुसार विवाहोत्सव संपन्न किया कि सभी वाह-वाह कर उठे। इतना दान-दहेज दिया कि गिरधारी बाबू के घर में सामान रखने के लिए जगह ही नहीं थी। शादी के पश्चात् वर-वधू के लिए स्विट्जरलैंड में पूरे दस दिन के लिए होटल बुक करा दिया गया था और हवाई जहाज से यात्रा के टिकट भी। हनीमून के लिए निधि और पारसमणि उस कंचन भूमि में चले गए, जहाँ सड़कों के किनारे दोनों ओर मकानों के छज्जों तथा दरवाजों के सामने फूल-ही-फूल महक रहे हैं। पहाड़ों ने बर्फ की चाँदी जैसी चादर ओढ़ ली है। सर्द हवाओं में आलप्स पर्वत माला की सैर से आनंद की अनुभूति हो रही थी। प्राकृतिक-मनमोहक छटाएँ, दूर-दूर तक फैली बर्फ तथा उसपर अठखेलियाँ करते देश-विदेश के पर्यटक। कहते हैं कि सुख का समय पंख लगाकर उड़ जाता है। इस प्रकार दस दिवस पूर्ण हो गए। वे मधुर स्मृतियाँ लेकर स्वदेश लौट आए।

शासन के नियमानुसार आस-पास के जिलों में पदस्थापना हो गई थी। दोनों कलेक्टर बन गए थे। नौकरशाही में सबसे श्रेष्ठ पद होता है आई.ए.एस. का। पहले समय में जैसे राजा-महाराजा होते थे। जिनके आगे-पीछे फौज-फांटे, घोड़ा-गाड़ी, वैसे ही वाहन और अब लालबत्ती सायरन, जिले का सबसे बड़ा अफसर जिले का मालिक होता है। शान-शौकत, हुकूमत सब उपलब्ध। खुशी-ही-खुशी! अब उन्हें एक और बड़ी प्रसन्नता प्राप्त हुई। निधि ने पुत्र को जन्म दिया। उसका नाम रखा गया 'उमंग'। एक वर्ष का समय उमंग के साथ उमंगों में फुर्र हो गया। उसका जन्मदिवस धूमधाम से मनाया गया, जिसमें दो जिले के अधीनस्थ अधिकारी सम्मिलित हुए। सोने के उपहार, नकद राशि के लिफाफे, जिसके जितने काम थे, उसके अनुरूप उपहार आए।

धन जितना अधिक आता है, उससे अधिक पाने की इच्छा बढ़ती जाती है। कभी भी कम नहीं होती है। अब कहाँ से, किस स्रोत से अधिक धन प्राप्त हो सकता है, पारस और निधि आपस में यही विचार-मंत्रणा करते। क्योंकि दोनों के हाथों में अधिकार थे। सामाजिक कार्यों के लिए शासकीय मदों से धन-निकासी के लिए कमीशन कहें अथवा रिश्वत लिए बिना कोई काम नहीं करते। लोगों के कार्यों का निराकरण रिश्वत लेने के बाद ही करते थे। वे जानते थे कि किसी का क्या साहस है कि अपनी कोई शिकायत कर सके। क्योंकि उन्हें तो यह बात याद रहती थी कि शासक पद पर बैठे राजनेताओं के साथ सामंजस्य करके ही प्रशासनिक अधिकारी सफल हो सकते हैं। इसलिए वे उन्हें प्रसन्न किए

रहते थे। दूसरी बात भी उन्हें स्मरण थी कि सभी की नजरों में ईमानदार दिखना चाहिए, इसका भी वे पालन कर रहे थे।

अब इनके यहाँ एक कन्या ने जन्म लिया। पारस के माता-पिता भी आए। उत्सव मनाया गया। फूल जैसी प्यारी बच्ची का नाम नाना-नानी ने तरंग रख दिया। कुछ समय वहाँ रहने के बाद दोनों के माता-पिता वापस लौट गए। पारस और निधि के प्रमोशन हो गए। उन लोगों को मनचाहे विभागों में पद मिल गए थे। अब तो चारों हाथों से रुपया-धन बटोर रहे थे। मनोरंजन के लिए विदेश यात्राएँ कर रहे थे और धन को ठिकाने लगाने की विधि-सोच रहे थे। इसी क्रम में अपने माता-पिता, बहन-बहनोई और ससुराल पक्ष के दूर के रिश्तेदारों के नाम से कृषि-भूमि, घरों के प्लॉट, बँगले, फ्लैट खरीद लिये। शहर में एक फ्लैट तो अपने प्यारे डोगी के नाम से भी खरीदा। उनकी और पदोन्नति हो गई। इसी समय उन्हें संदेश प्राप्त हुआ कि पूज्य माता सुखवती का निधन हो गया है, दोनों शीघ्र वहाँ पहुँच गए। दाह-संस्कार और सभी रीति-रिवाज के अनुसार कार्यक्रम पूर्ण कर वापस चलने की तैयारी हो रही थी। यशोदा, सरस्वती, सुरेखा तीनों बहनें और उनका परिवार था तथा पारस के मामा एवं निजी संबंधी सभी ने कहा कि ग्यारहवीं तक यहीं रुकना चाहिए। अस्थि-विसर्जन और ग्यारहवीं को मृत्युभोज के बाद जाना ठीक रहेगा।

□

गिरधारी बाबू अकेले रह गए थे। उन्हें पारस ने अपने पास बुला लिया। बड़ा बँगला, नौकर-चाकर सभी सुविधाएँ, लेकिन पारस तो शासकीय कार्यों में इतना व्यस्त था कि उसे समय नहीं मिलता था। गिरधारी बाबू यहाँ बेहद अकेलापन महसूस करने लगे थे। उन्होंने यहाँ जब धन-संपत्ति और सगे-संबंधियों के नाम से जमीन, मकान देखे तो उनका मन भावी आशंकाओं से डरने लगा। उन्होंने एक दिन पारस को अपने पास बैठाया। उस समय निधि भी आई हुई थी, कहा, ''बेटा, हमेशा इस बात का ध्यान रखना कि ईश्वर हमारे ऊपर है। वह सदैव हमें देखता रहता है। हमारी छोटी-मोटी भूलें माफ कर देता है। आटे में नमक से स्वाद बढ़ता है, किंतु नमक में आटा मिलाने पर किसी काम का नहीं रहता है। और मैं अब घर लौटना चाहता हूँ। क्योंकि अपनी हमउम्र लोगों के साथ उठने-बैठने, बातचीत में समय ठीक से कट जाता है। इसलिए अब मुझे वापस भिजवा दो। मैं वहीं रहूँगा।''

समय-चक्र चलता रहता है। उमंग, तरंग बच्चे बड़े हो गए और उच्च शिक्षा हेतु विदेश चले गए थे। धन-संपत्ति की कोई कमी नहीं थी। निधि और पारस की विदेश यात्राएँ बढ़ गईं। विकसित देशों की साफ-सफाई, स्वच्छता और सुविधाएँ देखीं तो विदेश में ही घर-मकान खरीदकर रहने का मन बना लिया।

नगर में कुछ धर्मप्रेमी लोग श्रीमद्भागवत कथा का आयोजन कर रहे थे। इस शुभ कार्य के लिए आर्थिक सहायता माँगने के लिए उपस्थित हुए तो पारस ने एक लाख रुपया दान दिया। कमेटीवालों ने साहब को और मैडम को मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित किया। कथा प्रारंभ होने के समय दोनों वहाँ उपस्थित हो गए। कथावाचक बहुत ही ज्ञानी संत थे। कथा-वृत्तांत के मध्य उन्होंने बताया कि मृत्यु के पश्चात् स्वर्ग की कल्पना असत्य है। सबकुछ यहीं पर है। जो जैसा कार्य करेगा, उसे उसका फल यहीं, इसी जीवन में मिल जाता है। हम संसार के प्राणियों को धोखा दे सकते हैं। अपने पाप और गलत काम छुपा सकते हैं, किंतु ईश्वर एक अदृश्य शक्ति है, जिससे कोई भी कृत्य छुपता नहीं है, इसलिए सदैव अच्छे काम करें। ईश्वर ने हमको विवेक दिया है। हमारे सामने दो रास्ते हैं—एक ऊँचाई की ओर, दूसरा नीचे गइराई की ओर। अब मार्ग हमको ही चुनना है। जिस मार्ग चलेंगे, उसी मंजिल पर पहुँच जाएँगे। कथा समाप्त होने पर दोनों वापस अपने बँगले पर आ गए थे। निधि ने प्रश्न किया, ''क्यों, स्वर्ग कैसा होता है?'' पारस ने कहा, ''हम लोग स्वर्ग जैसा आनंद ही तो उपभोग कर रहे हैं। किसी वस्तु की कोई कमी नहीं है। स्वस्थ हैं, धन-वैभव है। दोनों बच्चे विदेश में उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। इससे अधिक और क्या चाहिए। हाँ, एक बात अवश्य है कि हम लोगों ने काला धन बहुत इकट्ठा कर लिया है। इससे जरूर मन कभी भयभीत होने लगता है।'' निधि ने कहा, ''जिन्हें धन कमाने के अवसर प्राप्त नहीं होते, वे ईर्ष्या-द्वेष से धन को काला कहने लगते हैं। धन कभी काला नहीं होता और बिना धन के स्वर्ग जैसे सुख उपलब्ध नहीं हो सकते। अभी पद है, अधिकार है तो लोग दे रहे हैं। इसके बाद कौन पूछता है?'' यह कहकर दोनों अपने द्वारा किए जा रहे गलत काम को उचित मानकर अपना मन संतुष्ट कर रहे थे।

कहते हैं कि पाप का घड़ा जब भर जाता है तो फूटता है। वही हुआ। पचास लाख की रिश्वत के लेन-देन की बात चल रही थी। देनेवाला राजी हो गया और वह पूरी राशि लेकर आ गया था। जैसे ही उसने नोटों की गड्डियाँ पारस के हाथों में पकड़ाईं कि उसी समय छापामार दल ने गड्डियाँ थामे दोनों हाथ पकड़ लिये। कैमरे भी चमक उठे। पारस की साँसें रुक गईं। उसे लगा, जैसे उसका निर्जीव शरीर बहुत ऊँचे शिखर से नीचे गहरी खाई में गिर गया है। ठीक उसी समय निधि के कार्यालय पर भी छापा पड़ा। पारस के बँगले की तलाशी प्रारंभ हो गई थी में बोरियों में नोट भरे थे। कमरों में कई बोरियाँ रखी पाई गईं। बेडरूम के गद्दे तथा पलंग के बॉक्स भी सोने-चाँदी और नोटों से लबालब भरे

पड़े थे। नोट गिनने के लिए मशीनें लगाई गईं। सोने-चाँदी के जेवरात और रजिस्टर्ड दस्तावेजों, बैंक एकाउंट और लॉकरों से प्राप्त संपत्ति का मूल्यांकन हो रहा था। अखबार, रेडियो और टेलीविजन पर समाचार प्रसारित-प्रकाशित हो रहे थे, जिसकी खबर विदेश में उमंग और तरंग को भी मिल चुकी थी। उनकी काली कमाई की सूची पढ़कर बार-बार दोहराई जा रही थी। पारस और निधि गिरफ्तार कर लिये गए। उनके सपनों का महल भरभराकर धराशायी हो गया था।

जो पुलिस अधिकारी उन्हें सैल्यूट करते थे, वही अधिकारी-कर्मचारी आपस में हँसी-ठिठोली कर रहे थे। कानूनी कारवाई प्रारंभ हो गई। रिश्वत लेना पद का दुरुपयोग था। अवैध तरीके से धन अर्जित करने पर विभागीय और न्यायालयीन प्रक्रिया प्रारंभ हो गई। जिन सगे-संबंधियों के नाम से संपत्तियाँ खरीदी गई थीं, सभी की जाँच प्रारंभ हो चुकी थी। समाज में गिरधारी लाल का जितना ऊँचा नाम हो गया था, अब वृद्ध पिता को उतना ही अपमान सहना पड़ रहा था।

गहन जाँच के पश्चात् आय से अधिक अर्जित समस्त संपत्ति शासन द्वारा अधिगृहीत कर ली गई और उन्हें सेवा से बरखास्त कर दिया गया था। न्यायालय द्वारा पारस और निधि को दस-दस वर्ष के सश्रम कारावास की सजा दी गई। निधि को जब जेल-वाहन की ओर ले जा रहे थे, तब वह मूर्च्छित होकर जमीन पर गिर पड़ी। उनके वकील ने थोड़ा समय माँगा और जमानत के लिए अर्जी लगाई। निधि दोनों आँखों से आँसू बहा रही थी और हाथ जोड़कर न्यायाधीश से जमानत स्वीकारने के लिए प्रार्थना कर रही थी। जमानत की दूसरी अर्जी पारस की ओर से वकील ने स्वास्थ्य का हवाला देकर प्रस्तुत कर दी। जज साहब ने दोनों अर्जियों पर तत्काल सुनवाई करते हुए अस्वीकार कर दीं। पुलिस दोनों को जेल में दाखिल कर लौट आई थी।

किन ऊँचाइयों की कल्पनाओं के साथ दोनों हनीमून के लिए दुनिया के स्वर्ग स्विट्जरलैंड गए और आज दोनों अलग-अलग जेल कोठरी में, जिसे नर्क कहते हैं, पड़े हुए सोच रहे थे कि जीवन के रास्ते कितने ऊँचे-नीचे हैं।

आनंद भवन, मेन रोड पृथ्वीपुर
जिला-टीकमगढ़-४७२२३८ (म.प्र.)
दूरभाष : ०९४२४३४५३५५

कहीं कुछ नहीं बदला

कविता

• प्रेमशंकर भट्ट

कुछ भी तो नहीं बदला
न तुम, न मैं, न ही वे,
इस देह में अब भी तो
वैसा ही स्पंदन है।

और आँखों में मोतिया
उतरने के बाद भी
वही जिजीविषा, वही आकर्षण
युवती को देख
वैसा ही उबाल आता है।

वैसे ही प्रेम के शब्द
मन-देह में उतरते हैं
हाँ, कुछ भी तो नहीं बदला है।

शरीर तब भी काँपता था
आज भी काँपता है,
कहने को तो क्यों कहते हैं
सबकुछ बदल गया है।

देह में झुर्रियाँ आ गई हैं
चाल में भी वह कड़कपन नहीं,
ये तो हैं बस बाहरी संकेत
और मैं फिर भी कहता हूँ
कुछ नहीं बदला है।

मन वैसे ही कुलाँचें मारता है
वैसी ही जिज्ञासा, वैसा ही मनोबल

वैसे ही कुछ कर गुजरने का
अदम्य उत्साह,
वैसा ही अट्टहास
वैसी ही किलकारियाँ
वैसा ही खुशनुमा माहौल
वैसा ही हवा भरा मौसम

वही समस्याएँ, वही प्रश्न
जो तरसते हैं, आज भी उत्तर को
वैसा ही डर, वैसा ही प्रेम
अभी भी मन करता है
अनावृत देह-सृष्टि देखने को
कपोतों के सम अधर पर अधर रखने को
और शाम होते ही
मंदिर की घंटी सुनने को,
वितान में घर लौटते पाँखियों को
देखने को
हाथ जोड़ उसे स्मरण करने को
कहाँ कुछ बदला है,
नहीं
अब भी कुछ नहीं बदला है।

जी-५०४, सगांथ सिल्वर
डी-मार्ट के पीछे, चाँद खेड़ा
अहमदाबाद-३८०००५ (गुजरात)
दूरभाष : ९४०८७६१५५८

बर्फ गिरी इस बार

● दयाकृष्ण विजयवर्गीय 'विजय'

जाने-माने कवि-साहित्यकार। 'आंजनेय' (पुरस्कृत), 'श्वेत शिखरों पर धूप बिंब', 'राम की बहुरिया', 'मेरे भारत मेरे देश' (काव्य); 'आदि सम्राट्', 'सिंहासन', 'छत्रपति शिवाजी' (नाटक); 'बड़ी मछली', 'स्वप्न और सत्य', 'उलझन' (कथा-संग्रह); 'गीता अनुशीलन', 'राजस्थानी काव्य साधना : अब और तब' (समीक्षा) आदि चर्चित।

मौसम का गीत

डिगा दिए इस बार पौष ने सारे ही अनुमान।
वर्षों नहीं गिरी थी वैसी
बर्फ गिरी इस बार,
पात गिर गए सारे सहते
गहन तुषारी मार;
फैला श्वेत चादरें ढाँकी हरियाली मुसकान।
डिगा दिए इस बार पौष ने सारे ही अनुमान॥
हाड़ कँपाती लगी हवाएँ
चलने चारों ओर,
घिरी धुंध ने दी न दिखने
तनिक उज्ज्वला भोर;
सुनकर भी कर रहे अनसुना श्रवण प्रात का गान।
डिगा दिए इस बार पौष ने सारे ही अनुमान॥
देवभूमि ही नहीं, तपस्वी
तक हैं सब आक्रांत,
उष्ण आँच के निकट बैठ भी
मन है विचलित भ्रांत;
चुरा ले गई शीत भूतनी आत्म अवस्थित ध्यान।
डिगा दिए इस बार पौष ने सारे ही अनुमान॥

मत करो कलंकित

मत रोको रेलें
मत उखाड़ो पटरियाँ
पहुँचने दो
रोगियों को चिकित्सालयों तक
पहुँचने दो
परीक्षा-भवनों तक विद्यार्थियों को
पहुँचने दो
बिना जमानती वारंट से आहूत
अपराधियों को न्यायालय तक।
और भी बहुत प्रकार हैं
सरकार विरोधी आक्रोश प्रकटाने के
मत बाधित करो
जन-सुविधा के उपलब्ध संसाधनों को।
रेलें जनता की ही संपत्ति हैं
उनकी ही सुविधाओं हेतु विनिर्मित
मिलने दो उन्हें
उनकी सुविधाएँ निर्बाध।
मत उजाड़ो रेलें रोक
आतंकित करती अपनी हठवादिता से
किसी सधवा का सुहाग।
मत करो
किसी विद्यार्थी का अकारण वर्ष बरबाद
मत पहुँचाओ
किसी निर्दोष को
जेल के सींकचों के पीछे।
और भी बहुत से मार्ग हैं
अपनी बात मनवाने के
लोकतांत्रिक।
असीम शक्ति है जनता में
सरकार को झुका बात मनवाने की
मत करो कलंकित
लोकतंत्र की प्रतिष्ठा
अपने स्वार्थवश।

करें न ऋण से हेत

उत्पादन की वृद्धि हेतु, करें न ऋण से हेत।
पानी यदि बरसा नहीं, सूखे रहते खेत॥

सिंचन का होता नहीं, जब तक उचित प्रबंध।
ऋण के घर रखिए नहीं गिरवी जीवन छंद॥

जीवन को समझें नहीं, कभी निराशा पर्व।
साहस से करते रहें भौतिक विपदा खर्ब॥

घबराकर मत छोड़िए धारित अपना कर्म।
साहस से लड़िए सदा, धीरज धरना धर्म।

कमर बाँध आपत्ति से लड़ते रहें अबाध।
आत्मघात तो पाप है, एक बड़ा अपराध॥

आत्मघात परिवार पर छोड़े ऋण का भार।
रहा स्वयं के साथ ही बच्चों तक को मार॥

धैर्य धरे जो भी जिया, कहा गाँव ने धन्य।
धूनी-धूनी का बना, जीवन उसका वर्ण्य॥

खुदवा जल संचय करें गाँव-गाँव में ताल।
हो पहले से ही जहाँ ऊँची करिए पाल॥

करें न छाती पर कभी सरिता के जनवास।
स्वयं बुलाना मानिए, अपना नाश-विनाश॥

बसने से पहले करें जल का निकट प्रबंध।
थक जाएँगे अन्यथा पानी ढोते स्कंध॥

बड़े नगर जितने बसे बड़ी नदी के तीर।
करके ही नल योजना हर पाए उर पीर॥

नहीं नदी हो गाँव में, नहीं निकट तालाब।
बाँध किसी भी खाल को, लेवें जल का लाभ॥

विजय भवन, २२८ बी, सिविल लाइंस
कोटा-३२४००१ (राजस्थान)
दूरभाष : ०९४६०५७०८८३

थैंक्यू पापा

● दिनेश बैस

सुलभ महसूस कर रहा था, जैसे उसका कच्ची ईंटों से बना महल अचानक भसक गया हो। पापा को अटैक आया था। वे आई.सी.सी.यू. में थे। प्राथमिक जाँचों के बाद हृदय-रोग विशेषज्ञ का मत था कि स्थिति गंभीर है। सघन जाँच के बाद ही कुछ स्पष्ट हो पाएगा, निदान भी तभी तय हो सकेगा। किसी भी हालत में पाँच लाख रुपए का प्रबंध तो करना ही होगा।

कहाँ तो सुलभ एनीवर्सरी पर अंजलि को कार गिफ्ट करने की योजना बना रहा था। अंजलि कब से हसरत पाले बैठी थी कि घर के बाहर अपनी कार हो। क्या हुआ, जो मकान किराए का था, कम-से-कम कार तो अपनी हो। भगवान् की कृपा हुई और भाग्य मेहरबान हुआ तो कल मकान भी अपना हो जाएगा। बस, सुलभ का प्रमोशन हो जाए। उसे कोई ठीक-ठाक सा जॉब मिल जाए, फिर कौन सी परेशानी रहनेवाली है। शादी से पहले भी तो जॉब कर रही थी। फिर शादी के बाद यहाँ आ गई। यह जगह अभी कस्बा से शहर बनने की प्रक्रिया में थी। यहाँ शांति थी, लेकिन रोजगार के अवसर कम थे। सोचा, चलो, कुछ दिन शादी एन्जॉय कर लेते हैं। बाद में जॉब भी कर लेंगे। आखिर कोई बेबी वगैरह हो जाएगी, तब तो हाउस वाइफ की भूमिका में आना ही होगा। गृहिणी की तरह रहने का आज का अनुभव काम आएगा। अंतत: बच्चा तो होना ही है। हमेशा फैमिली प्लानिंग ही तो नहीं करते रहेंगे।

कार सुलभ का भी सपना थी। 'नैनो' तो वह कभी भी खरीद सकता था, मगर 'नैनो' पर 'गरीबों की कार' का ठप्पा लग चुका था। सुलभ को ही नहीं, अंजलि को भी यह बरदाश्त नहीं था कि 'नैनो' के कारण खामाख्वाह लोग उन्हें गरीब मानने लगें। ठीक है, तंगी थी, लेकिन ऐसा भी नहीं था कि फुटपाथ पर बैठे हों। बाहर से देखकर तो कोई उन्हें गरीब मानने की हिमाकत कर ही नहीं सकता था। चीकट तकिए पर भी साफ-धुला गिलाफ चढ़ा दो तो सारा चीकटपन दुबक जाता है। उनका भी आउटफिट ऐसा था कि भीतर के अभाव बाहर नहीं झाँक पाते थे। यह तो हर मध्यवर्गीय परिवार की संस्कृति होती है—सब की गैस के चूल्हे जंग खाए होते हैं। 'नैनो' दरवाजे पर खड़ी करके तो सीधे-सीधे विज्ञापन करना है कि भाई, गर्दिश के दिनों से गुजर रहे हैं। नैनो में बैठकर किसी के फंक्शन वगैरह में जाओ तो हीन भावना घेरे रहती है। मन में मनाते जाते हैं कि 'हे भगवान्, 'नैनो' से उतरते कोई देख न ले।'

यह गरीब और गरीबी चुनाव लड़ने का ही अचूक नुस्खा है, अन्यथा तो हर जगह गरीब मुसीबत ही होते हैं। वे सोच रहे थे—बेचारी 'नैनो' कैसी अभिशप्त हो गई गरीब की कार के नाम से। गरीब खरीद

जाने-माने व्यंग्यकार। 'रेल जगत्' पाक्षिक पत्र के संस्थापक संपादक। 'ट्रांसमार्ट' (व्यंग्य-संग्रह), लगभग सभी अग्रणी पत्र-पत्रिकाओं में अबाध प्रकाशन। आकाशवाणी से प्रसारण। कई दैनिक पत्रों में स्तंभ लेखन।

नहीं पाए, अमीरों ने देखकर मुँह बिचका दिया। अब तो कंपनी ने भी उसके और उत्पादन से कान पकड़ लिये हैं।

अंजलि के मन में हुंडई जैसी कोई कार समाई थी। अधिक नहीं, बस चार-पाँच लाख तक का कोई क्यूट सा मॉडल—आकाश के अनंत वितान पर एक छोटा सा सपना। इतना अफोर्ड कर पाना फिलहाल सुलभ के बूते के बाहर था। बाजारवाद के दौर में साग-भाजी की तरह कार बेचने के लिए बेकरार कंपनियाँ थाली में सजाकर परोसने की तरह ई.एम.आई. भी लिये घूम रही थीं। इस दलदल में सुलभ फँसना नहीं चाहता था। गर्लफ्रेंड्स के नखरों की तरह रोज बढ़ते पेट्रोल-डीजल के दामों के बीच तय करना मुश्किल हो जाता है कि गाड़ी में तेल भरवाएँ या ई.एम.आई. भरें। न भर पाओ तो फजीहत। अगले महीने दुगुनी रकम। किश्त ज्यादा बढ़ गई तो गई भैंस पानी में। कर्ज भरने के लिए कोई दूसरा कर्ज लो या रिकवरी एजेंट्स की दबंगई से बचने के लिए कार बैंक को सरेंडर करते घूमो। सारी रहीसी का फलूदा बनते देर नहीं लगती, इतनी समझ तो है सुलभ में, यह तोता नहीं पालना है।

पापा ने लटके हुए मुँह देखे तो समझ गए कि कुछ कचोट रहा है। सवेरे-सवेरे टी-स्ट्राइक पर उतर आए—''जब तक मालूम नहीं पड़ जाता कि क्या बात है, तब तक चाय को तलाक। तुम लोगों का मायूस होना मुझसे सहा नहीं जाता, यह तुम जानते हो'' पापा भुनभुना रहे थे।

''कुछ खास नहीं, पापा। आप चाय पीजिए। यों ही बस, थोड़ा सा मन उदास सा हो गया था। कोई बात नहीं है।'' अंजलि ने बात सँभालने की असफल चेष्टा की।

''यों ही कुछ खास नहीं होता है, अंजलि बेटे!'' अंजलि की आखों की गहराइयों में पापा की भेद भरी नजरें हलचल पैदा कर रही थीं।

अंजलि सकपकाकर रह गई। सारा रहस्य उगल दिया।

पापा ठठाकर हँस पड़े—''बस, इतनी सी बात··· । इतनी सी बात का बोझ दिल पर लिये घूम रहे हो तुम दोनों।'' वे सुलभ से मुखातिब हुए, ''बहू गलत क्या कह रही है। नैनो भी कोई कार है। कार ऐसी तो हो, जो देखने में डिब्बा न लगे। ऐसा कर··· '' वे आगे बढ़े, ''तेरे पास जो

है, उसे रख। मेरी एक एफ.डी. मैच्योर हो रही है, उससे जैसी चाहो, वैसी कार खरीदी जा सकती है। सबकुछ तुम्हीं लोगों का तो है। मेरे बाद भी तुम्हारे ही पास आएगा। इस बार धूमधाम से तुम्हारी एनीवर्सरी सेलिब्रेट करते हैं। मुझे भी खुशी होगी।''

अंजलि की नजरों में तो पापा जैसे और भी ग्रेट हो गए। ''पप्पा!'' रात में लिपटकर लरज पड़ी—''ओह सुलू, मैं तो पापा को ठीक से थैंक्यू पापा भी नहीं कह पाई। हाउ ग्रेट इज योर पा···।''

अंजलि को जैसे पंख लग गए थे। सप्ताहांत की छुट्टी का पूरा दिन उनका कारों के शोरूम खँगालते बीता। कारों की कीमत, मॉडल, सेग्मेंट्स, टैक्नीकल फीचर्स, मेंटीनेंस, एवरेज जैसी तमाम जानकारियों को जैसे दिमाग में भरती जा रही थी अंजलि। एक शोरूम से दूसरे शोरूम तक का रास्ता, सुलभ के पीछे स्कूटर पर बैठी अंजलि उन जानकारियों पर चर्चा करते हुए तुलना तथा विश्लेषण करते हुए तय कर रही थी। अजब सी दीवानगी छाई हुई थी उसपर। सुलभ के कंधों पर कोहनी रखे अपना पूरा वजन सुलभ पर डाले उसके कान में मंत्र सा फूँकती चल रही थी। शाम होते-होते निढाल हो गई, लेकिन उत्साह वही था। एक ठेले पर गन्ने का रस पीत-पीते मनुहार सी करने लगी—''बहुत थक गई हूँ। कुछ करो न, यार सुलू।''

''क्या करूँ, पूरा शहर तो छनवा दिया तुमने। और क्या करूँ।'' उलाहना दिया सुलभ ने।

''ऐसा करते हैं,'' बताने लगी—''लौटते हुए अपने लिए जनक्स से डिनर पार्सल करा लेते हैं। एक पार्सल काफी होगा। दोनों का काम चल जाएगा उसमें।'' वह मितव्ययी होने की धौंस जमा रही थी, ''नारायण चाट भंडार से पापा के लिए दही-बड़ा और मूँग का चीला ले चलते हैं। पापा मुरीद हैं नारायण की चाट के।'' पापा की पसंद के बहाने वह खुद को जस्टीफाई कर रही थी।

रात में सबने एन्जॉय करते हुए खाना खाया। पापा को अंजलि पर गर्व हुआ कि वह उनकी पसंद को कितना पहचानती है। सुलभ में यह बात अब तक पैदा नहीं हो पाई है। पापा से कारों की कीमत आदि पर चर्चा होती रही। वे उत्सुकता से सुनते रहे। पापा का बस इतना सा सुझाव था कि कार ऐसी हो, जिसमें आगे काफी लैग-स्पेस हो। कभी बैठूँ तो असुविधा नहीं हो। घुटने अब अधिक मुड़ने की इजाजत नहीं देते हैं। दूसरा, कोई भी कलर पसंद करो, लेकिन कोशिश हो कि वह हलका हो। हलके रंग सोवर लगते हैं। साथ ही रात में उनकी विजुएलिटी तुलनात्मक रूप से अच्छी होती है। खाना खाकर पापा अपने कमरे में चले गए। उनका प्राइम टाइम देखने का समय हो रहा था। माँ के बाद से वे उसी कमरे में सोते थे। एक छोटा सा हवादार कमरा। एक प्रकार से वह उनका अध्ययन-कक्ष भी था। एक कोने में छोटी सी टेबल और कुरसी थी। एक ओर सिंगल दीवान था। बगल में छोटी सी बुक-सेल्फ थी। इनके अतिरिक्त महत्त्वपूर्ण कुछ था तो दीवान के ऊपर, दीवार पर जड़ा माँ का बड़ा सा पोर्ट्रेट। कुछ ऐसे कि आँख खुलते ही पापा की नजर माँ पर पड़ती थी। यह जा चुकी माँ के प्रति अनुराग था या उनसे जुड़े रहने का पुरसुकून तरीका, पापा जानें। अलबत्ता पापा को यहाँ के अतिरिक्त शांत नींद कहीं नहीं आती थी।

सुलभ और अंजलि भी सोने की तैयारी कर रहे थे। 'भाभीजी···' का ब्रेक के बाद अंतिम भाग चल रहा था। अचानक पापा के कमरे से कुछ गिरने की आवाज आई। साथ ही पापा की एक मर्मांतक चीख सुनाई दी। अंजलि और सुलभ घबराए हुए पापा के कमरे में पहुँचते हैं। पापा कमरे के अंदर से कुंडी नहीं लगाते। वे दीवान के नीचे फर्श पर पड़े तड़प रहे हैं। जोर-जोर से छाती दबाने, सहलाने का प्रयास कर रहे हैं। ताकत साथ नहीं दे रही है। चेहरे की मांसपेशियाँ अकड़ रही हैं। समझते देर नहीं लगी कि पापा को हार्ट अटैक आया है। सुलभ ने अंजलि के साथ मिलकर पापा को उठाकर किसी प्रकार दीवान पर लिटाया। झटके से दिमाग में एक स्मृति कौंध गई—कभी, कहीं पढ़ा था कि अचानक ऐसी स्थिति आ जाए तो पीड़ित को तुरंत पानी में घोलकर एस्प्रीन की एक-दो गोलियाँ देनी चाहिए। यह प्राथमिक उपचार की तरह होता है। एस्प्रीन लाइफ सेवर का काम करती है। सुलभ बेड-रूम में रखे दवाइयों के डिब्बे में एस्प्रीन तलाशने दौड़ पड़ा। अंजलि ने पंखा तेज कर दिया और पापा की छाती की मसाज में जुट गई। इस बीच वह एंबुलेंस सेवा-108 को फोन कर घर की लोकेशन भी समझा चुकी है।

पापा लाइफ लाइन के आई.सी.सी.यू. के पीछे की रहस्यमय दुनिया में भेजे जा चुके हैं। जहाँ जिंदगी के पक्ष में मौत से जूझता हृदय-रोगी होता है। होते हैं, धरती के भगवान्, डॉक्टर और पैरानर्सिंग स्टाफ। आई.सी.सी.यू. की दुनिया के दरवाजे के इस ओर होते हैं, आशंकाओं के झंझावात में हिचकोले लेते उसके अपने। कोई सकारात्मक विचार उनके मन में आते ही नहीं हैं। भय···भय···भय! आशंकाएँ··· आशंकाएँ···आशंकाएँ!

सुलभ का मन भी विचारों के कोलाज में मथ रहा है, होनी क्या इसी का नाम है। कहाँ तो पापा में कार खरीदने को लेकर इतना उत्साह था। आज ही वे बैंक से एफ.डी. कैश करवा लाए थे। सारा पैसा अंजलि को सौंप दिया था। कहाँ आज ही वे इस दुर्घटना के शिकार हो गए। क्या उन्हें पूर्वाभास हो गया था। कार के बहाने इलाज के लिए घर में पैसा रख छोड़ा था। क्या संयोग इसी को कहते हैं।

''क्या सोच रहे हो, सुलू? यही न कि अब कार खरीदने की योजना खटाई में चली गई।'' अंजलि जैसे उसका मन पढ़ रही है। सुलभ निढाल हो गया। अंजलि के कंधों पर सिर टिका दिया।

रात तीन बजे के आस-पास आई.सी.सी.यू. का दरवाजा हलका

सा खुलता है। सिर पर स्कार्फ तथा मुँह पर मास्क लगाए नर्स का चेहरा बाहर झाँकता है, वह आँखों के संकेत से सुलभ को अंदर आने का संकेत देती है। अंजलि भी साथ हो ली। भीतर पहुँचकर वही आँखें डॉक्टर के चैंबर में जाने का इशारा करती हैं।

वे डॉक्टर सिद्दकी के सामने बैठ गए हैं। वे पूरी व्यावसायिक कुशलता से प्रारंभ होते हैं—''देखिए, हम पूरी कोशिश कर रहे हैं। फिर भी कुछ कहा नहीं जा सकता। आप चाहें तो कहीं सेकेंड ओपीनियन भी ले सकते हैं। कहीं और शिफ्ट भी कर सकते हैं। इस दुनिया में चमत्कार भी होते हैं। ऊपरवाला क्या नहीं कर सकता, हालाँकि पेशेंट शिफ्टेबिल कंडीशन में कतई नहीं है।''

वे कातर से डॉक्टर सिद्दकी को सुन रहे हैं। कोई निर्णय लेने की स्थिति ही नहीं है।

''बहरहाल, हम तो अपना काम कर ही रहे हैं। फिलहाल आप लोग भी उनके पास बैठिए। इस समय हमसे ज्यादा आप लोगों की जरूरत है उन्हें।''

सुलभ हार नहीं मानना चाहता। पापा से ही उसने सीखा है कि परिस्थितियाँ कितनी भी खराब हों, धैर्य नहीं खोना चाहिए। सुलभ नर्सिंग कक्ष में नेट खोलकर बैठ गया है। अंजलि पापा को सँभालने के मोरचे पर डट गई है। पापा के पास स्टूल पर बैठी, उनकी हथेली अपनी दोनों हाथेलियों में जोर से दबाए है। जैसे उनमें अपने संवेग और ऊर्जा संचरित कर रही हो। पापा जगह-जगह सुइयों से बिंधे हैं। इलेक्ट्रोड्स उनकी देह में स्पंदन तलाश रहे हैं। अंजलि की दृष्टि ई.सी.जी. मॉनीटर पर स्थिर है। मॉनीटर के स्क्रीन पर ई.सी.जी. का ग्राफ झटके खा रहा है। ऊर्ध्व रेखाएँ सरल रेखाओं में बदलती जा रही हैं।

अंजलि पापा की छाती पर सिर रखे फफक पड़ी है—''मत जाओ पापा, बच्चों की महत्त्वाकांक्षा पूरी करने का यह तरीका तो नहीं होता।''

३-गुरुद्वारा नगरा, झाँसी-२८४००३
दूरभाष : ०८००४२७१५०३

राम-राम सा !

लघुकथा

• लता कादंबरी

एक बिल्ली न जाने कहाँ से हरिद्वार के आश्रम में आकर बस गई। बड़ी विचित्र बिल्ली थी, उसे प्रवचन सुनने का खास शौक था।

गरमी की एक दोपहरी जब वह सो रही थी, तभी 'धम्म' की आवाज सुनकर उसकी आँखें खुल गईं। तेजी से भागते चूहे को झपट्टा मारकर उसने पकड़ा और देखते-ही-देखते गटक गई। खा-पीकर फिर से जा दुबकी एक ठंडे कोने में। इस प्रकार उसका यह रोज का क्रम बनता जा रहा था।

एक दिन टहलते-टहलते वह पहुँच गई गंगा किनारे और ठंडी हवाओं का मजा लेने लगी, तभी वहाँ जाने कहीं से जुपिटर डॉगी आ पहुँचा। बिल्ली मौसी तो अपनी ही धुन में चली जा रही थी, उसे देखकर डॉगी ने एक बार भौं-भौं आवाज की और उसे धर दबोचा। उसके पैरों में जकड़ी मौसी से तो डर के मारे चिल्लाया भी नहीं जा रहा था, पर मन-ही-मन वह कुकुर को कोस अवश्य रही थी कि न जाने कहाँ-कहाँ से चले आते हैं ये राक्षस? जरा नहीं सोचते कि मुझमें भी जान है। अचानक कुछ कराहकर···''इसकी कैद में जकड़ी मेरी तो जान ही निकल जाएगी।'' बमुश्किल वह साँस ले पा रही थी और मन-ही-मन ईश्वर से अपनी मुक्ति की प्रार्थना भी करती जा रही थी। तभी किनारे पड़ी रोटी के टुकड़े को देख जुपिटर उसे खाने के लिए झपटा और बिल्ली मौसी तेजी से प्राण बचाकर वहाँ से भागी, उस वक्त जितनी तेज हो सकता था, उतनी तेजी से वह भागी चली जा रही थी।

आश्रम के नजदीक आते हुए उस क्षण उसे आत्मज्ञान प्राप्त हुआ कि 'यही दुर्दशा तो मैं औरों की करती हूँ और उन्हें मारकर खा भी जाती हूँ।' मन-ही-मन उसने प्रण लिया कि; वो अब से शाकाहारी हो जाएगी। और उसी क्षण अपने पापों का प्रायश्चित करने हेतु वह उल्टे पैर गंगा में स्नान करने पहुँच गई। हर डुबकी के साथ वह राम-राम का जाप करती जा रही थी। नब्बे, बियानवे, पिच्यानवे, अट्ठानवे कहते हुए वह साथ-साथ राम नाम जपती जा रही थी। आज वो पूरी एक सौ एक डुबकी लगाकर अपने अब तक के सारे पापों का प्रायश्चित कर लेना चाहती थी। तभी सौ, फिर एक सौ एक कहते हुए अचानक वह गंगाजी से उछलकर बाहर निकली और सामने दौड़ते हुए चूहे को मुँह से पकड़कर पुन: आश्रम की ओर भाग चली।

उर्मिला क्यों मौन हो?

''उर्मिला तुम्हारे इस मौन ने न जाने कितनी स्त्रियों को सहने का हथियार थमा दिया है। परंतु अब हम तुम्हारे बोलने का इंतजार कर रहे है। उर्मिला! अपने मन के शिखर पर जमी बर्फ की परतों को खोलो और पिघलने दो इस मौन को, जिसमें न जाने कितनी स्त्रियों की आवाजें तुमने कैद कर रखी हैं। अब वक्त आ गया है, अपने मन की आवाज सुनाने का। बोलो उर्मिला कुछ तो बोलो! बताओ कि तुम क्यों मौन हो?''

७/२०२, स्वरूप नगर, कानपुर (उ.प्र.)
दूरभाष : ७६०७३४५६७८

राम झरोखे बैठ के

संस्कार स्कूल ऑफ हिंदुस्तान

● गोपाल चतुर्वेदी

उनकी, यानी वर्माजी की दो चिंताएँ हैं। एक तो धीरे-धीरे देश से संस्कारों का लुप्त, दूसरा आर्थिक अभाव। स्थिति इतनी पतनोन्मुख है कि बेटा बड़ों को देखकर चरण-स्पर्श तो दूर, फिल्मी गानों की सीटी बजाता है। लड़की कौन कम है, वह अपनी माँ को सूचित करती है, ''मम्मी! रात को लौटने में देर हो जाएगी। मुझे दोस्त की बर्थ-डे पार्टी में जाना है।'' दोस्त कौन है—लड़का या लड़की? माँ को यह पूछने की अनुमति भी नहीं है। ऐसा प्रश्न लड़की के निजी जीवन में हस्तक्षेप होगा। यह नई पीढ़ी को कतई बरदाश्त नहीं है। माता-पिता से अनुमति लेने के दिन कब के लद गए। उन्हें खुद को भाग्यशाली मानना चाहिए कि पुत्री ने उन्हें अपने कार्यक्रम की सूचना तो दे दी, वरना बिना बताए देर से आती तो चीखने-चिल्लाने के अलावा कर ही क्या लेते?

उन्हें अपने जमाने का ध्यान आता है। कैसे आज्ञाकारी पुत्र थे वे! स्कूल से आकर खेलने तक जाते तो माता या पिता की अनुमति लेकर। हाँ, इतना जरूर है कि उन्होंने चोरी-चोरी सिगरेट पीना शुरू कर दिया था, बिना किसी को खबर दिए या इजाजत लिये। पर यह भी उनके संस्कारित चरित्र का ही हिस्सा था। वह रात को पेड़-पौधे, फूल-पत्ती नहीं तोड़ते थे, इस आशंका से कि कहीं उनकी नींद में खलल न पड़े, तो सिगरेट-सेवन की सूचना से माँ-बाप का दिल कैसे दुखाएँ? इनसान की सिफत है। वह अपने हर सही या गलत कर्म को उचित ठहराने में समर्थ है। कौन कहे, हत्यारा भी हत्या को न्यायसंगत ठहराता है। हमदर्द तो इसी मत के हैं कि उसे पुलिस ने वसूली के चक्कर में फँसाया है। उसकी तो यह पहली वारदात है। पेशेवर हत्यारे भी दे-दिवाकर छूट जाते हैं। देश में दहेज-बिके पतियों की बहुतायत है। उन्हें इस हत्यारे से हमदर्दी है। इस बेचारे ने पत्नी की हत्या ही तो की है। जरूर साहसी होगा। उन्हें अपनी कायरता पर कोफ्त होती है। हसरत तो उनकी भी यही थी, पर हिम्मत नहीं पड़ी। वर्माजी कॉलेज आते-आते शराब भी चख चुके थे, पर यह भी उन्होंने बिना माता-पिता के दिल दुखाए किया। जैसे संस्कार संस्कार न होकर नैतिक पलायन का वह द्वार है, जिससे कोई भी हरकत करके चुपचाप निकला जा सके।

यों सार्वजनिक रूप से वे अब संस्कारों के प्रबल पक्षधर हैं। जब सुबह वे घूमने जाते हैं तो चिड़ियों को दाना डालना नहीं भूलते, 'किसी भी भूखे को भोजन देना भारतीय संस्कारों की मूलभूत शिक्षा है।' दीगर है कि गृह-सेवक रामू खाना बनाता तो है, पर उसे वहाँ कुछ भी चखना वर्जित है। उनकी और पत्नी की पूरी निगरानी रहती है कि सब्जी से लेकर रोटी तक वह अपनी लाई हुई ही खाए। गाहे-बगाहे किचन के चक्कर लगाकर अपने निरीक्षण के द्वारा मियाँ-बीवी यह सुनिश्चित करते रहते हैं। वह कहने को सबको सुनाते हैं कि मेहमान भगवान् होता है, पर यह उनके लिए केवल जुबानी जमा खर्च है। पहले तो 'बाहर जाना है,' 'यह आने का सही समय नहीं है,' 'वायरल फैला हुआ है,' जैसी बातों से वे अतिथि को टालते हैं।

यदि वह बेशर्म फिर भी आ ही जाए तो पाता है कि उसे खटमल भरे सोफे पर सोना पड़ता है। घर में कोई अतिरिक्त कमरा उपलब्ध नहीं है। महानगर में रहने का अर्थ ही फ्लैट के कबूतरखाने की अनिवार्य कैद है। सुबह वह बिना दूध की चाय पाता है—''क्या करें भैयाजी! फ्रिज से निकालकर गरम करते ही दूध फट गया।'' वर्माजी माफी की मुद्रा में मेहमान को सूचित करते हैं। दिन में उसे काम है तो बाहर रहना है। यों भी महानगरों में 'डिब्बा संस्कृति' है। सब अपना डिब्बा ले जाते हैं, खाने के वास्ते। ऐसा कोई सौभाग्यशाली ही होगा, जो भोजन के लिए घर आए अथवा कोई असहाय वृद्ध-वृद्धा, जो घर से बाहर निकलने को लाचार हैं। शाम को थका-माँदा मेहमान घर लौटता है तो पाता है कि दरवाजे पर ताला लटका है और एक नोट चिपका है, 'हमें एक पारिवारिक आयोजन में सम्मिलित होना है, आप भी आमंत्रित हैं। ४३०, बसंत कुंज में आ जाइए।'

आस-पास की खोज-खबर से उसकी ज्ञानवृद्धि होती है कि मेट्रो वहाँ नहीं जाती, दो बसें बदलकर ही उसका वांछित स्थल पर पहुँचना संभव है। वक्त तो लगेगा ही। एक-डेढ़ घंटा आसानी से। फिर बसंत कुंज का गंतव्य कोई राष्ट्रपति भवन या प्रधानमंत्री का आवास तो है नहीं, उसे भी खोजना होगा। यह विकल्प उसे व्यावहारिक नहीं लगता। वह ढाबे में खाना खाकर निरुद्देश्य घूमता है अपने मेजबान के इंतजार में। एक कानून का रक्षक निजी स्वार्थवश गतिविधि को संदेहास्पद मानकर थाने ले जाने की धमकी से उसकी जेब की तलाशी लेकर पूरी नकदी धरवा लेता है। वह क्या करे, बस फ्लैट के सामने बैठकर ऊँघता है—प्रतीक्षारत! मध्यरात्रि के लगभग वर्मा परिवार पधारता है, चहकता-गुनगुनाता। वर्माजी की उससे सहानुभूति है, पर जाना विवशता थी। उनके संस्कारों की सीख है कि संबंध निभाए जाएँ, विशेषकर

उन परिस्थितियों में, जहाँ खान-पान का प्रश्न हो। सामान्य हालात में मिलना-जुलना भी कहाँ होता है? बहुत हुआ तो फोन पर हाल-चाल ले लिया। फिर भी उन्होंने मेहमान से क्षमा-याचना की। पुलिसिए ही नहीं, पूरी व्यवस्था को कोसा। इस बार सुबह मेहमान दूध की चाय पीकर विदा हो लिया। बिना अनखाए, वर्माजी ने ऐसी मेहमाननवाजी की उसकी कि वह मेहमान बनने के पहले दस बार सोचे।

हमारे शहर में आज भी चाय-पान की दुकान ही इंग्लैंड की 'पब' का पर्याय है। पूरे देश के हालात की विवेचना यहीं होती है, वर्माजी की संस्कारों पर नसीहत भी। मेहमान के संकट से छुटकारा पाकर आज वे खासे मुखर हैं, ''हमारे यहाँ तो स्त्री को देवी माना गया है, स्नेह की प्रतिमा, पूजा की पात्र। फिर आजकल सड़कों पर खुलेआम दुर्व्यवहार और छेड़छाड़, अपहरण के हादसों से हमें लगता है कि हम या तो अपने संस्कारों को भूल गए हैं अथवा उनसे परिचित नहीं हैं। यह वाकई देश का दुर्भाग्य है और हमारे पारिवारिक जीवन की असफलता का प्रतीक।'' वे वक्त के हालात का बचाव भी करते हैं। आज किसके पास समय है, बच्चों के संस्कार के बारे में सोचने का भी? पति-पत्नी दोनों जीवन की चूहा-दौड़ में मिलकर ऐसे लगे हैं कि उन्हें फुरसत ही नहीं है बच्चों पर ध्यान देने की। झुग्गी-झोंपड़ी हो या कोठी-बँगले, आर्थिक स्थितियाँ भले भिन्न हों; पर परवरिश की उदासीनता दोनों में समान है। कुछ को सत्ता भरमाए है, कुछ को भूख, पर संतुष्ट कोई नहीं है। ऐसी असंतुष्ट पीढ़ी बच्चों को असंतोष तो दे सकती है, संस्कार नहीं। भले ही बार-बार दोहराए जाने से वाक्य घिसा-पिटा लगे, पर जब तक मानसिक या शारीरिक कुपोषण आड़े न आए, सच्चाई यही है कि किसी भी देश का भविष्य उसके बच्चे ही हैं। जब वे ऐसी भूमिका बाँधते तो पान के तलबगार जर्दा-किवाम भूलकर उनकी बातों पर गौर करते। स्वाभाविक भी है। ज्यादातर बाल-बच्चोंवाले लोग ही श्रोता हों तो सबको बच्चे या बच्चों के भविष्य की चिंता रहनी ही रहनी। फिर वर्माजी यह भी बताते कि संस्कारयुक्त बच्चे ही देश के अच्छे नागरिक बनते हैं। उनके प्रवचन के दौरान एक 'सिविक' ने सवाल उठाया—सुनने में यह सब अच्छा लगता है, पर इसका कोई क्या करे, जब बच्चों को शुरू से ही झूठ और फरेब सिखाया जाता है? पापा आराम से धूप सेंक रहे हैं, पुत्र उनके मोबाइल से खेल रहा है कि उसकी घंटी बजती है। पापा नाम देखकर फोन बच्चे को देते हुए फुसफुसाते हैं, 'बेटा, कह दो कि पापा घर पर नहीं हैं और फोन यहीं भूल गए हैं।' इस वास्तविकता के साथ बड़ा हुआ बच्चा झूठ का पैगंबर नहीं तो क्या सत्य का साधक बनेगा? बस जैसे इसी प्रश्न का वर्माजी को इंतजार था। वह सुनते ही बोले, ''इन्हीं तथ्यों से प्रेरित होकर हमने निश्चय किया है कि हम अपना बचा हुआ जीवन देश की सेवा में लगाएँगे, संस्कारों का 'स्कूल ऑफ हिंदुस्तान' खोलकर।''

पापा आराम से धूप सेंक रहे हैं, पुत्र उनके मोबाइल से खेल रहा है कि उसकी घंटी बजती है। पापा नाम देखकर फोन बच्चे को देते हुए फुसफुसाते हैं, 'बेटा, कह दो कि पापा घर पर नहीं हैं और फोन यहीं भूल गए हैं।' इस वास्तविकता के साथ बड़ा हुआ बच्चा झूठ का पैगंबर नहीं तो क्या सत्य का साधक बनेगा? बस जैसे इसी प्रश्न का वर्माजी को इंतजार था। वह सुनते ही बोले, ''इन्हीं तथ्यों से प्रेरित होकर हमने निश्चय किया है कि हम अपना बचा हुआ जीवन देश की सेवा में लगाएँगे, संस्कारों का 'स्कूल ऑफ हिंदुस्तान' खोलकर।''

एक अन्य परिचित श्रोता ने नाम पर आपत्ति की—''यह अंग्रेजी-हिंदी का मिश्रण क्यों? आप इस नई संस्था का नामकरण 'संस्कारों की पाठशाला' क्यों नहीं कर सकते? एक अन्य ने दुःख जताया कि विज्ञान ने इतनी प्रगति की है, पर कोई ऐसा जादुई घोल क्यों नहीं बनाया, जिसे पी लो तो संस्कारयुक्त हो जाओ या संस्कार का विटामिन खा लो! वर्माजी ने संतोष की साँस ली। अपने प्रस्ताव पर सुननेवालों की रुचि से वे प्रभावित हुए—''आप के सुझावों में दम है, पर आप देश के हिंदी क्षेत्र का ही मत सोचिए। अपने देश की विविधता पर ध्यान दीजिए। हम तो चाहते हैं कि संस्कार का अभियान पूरे मुल्क में चले। कोई माने या न माने, अंग्रेजी आज भी साक्षरों की समझ में आनेवाली अखिल भारतीय भाषा है। 'संस्कार स्कूल ऑफ हिंदुस्तान' कहने और सुनने में प्रभावी लगता है, साथ ही हमारी सामाजिक संस्कृति का भी प्रतीक है। कौन कहे, इस नाम से आकृष्ट होकर विदेशी छात्र भी इसमें प्रवेश लें और फिर हम साइंस के न सही, संस्कारों के विश्वगुरु बनने में सफल हों।''

चाय-पान की 'पब' की इस चर्चा के बाद से वर्माजी मिशनरी भावना से अपनी नई संस्था के गठन में जी-जान से जुटे हैं। सबसे पहले उन्हें रियायती दर पर सरकारी जमीन 'लीज' पर चाहिए। इसके लिए उन्होंने मुख्यमंत्री को पत्र तो भेजा ही है, वे एक आकर्षक फोल्डर भी अपने मित्र की प्रिंटिंग प्रेस में छपवा रहे हैं। इसके मुख्य तत्त्व हैं कि संस्कारों से लैस बच्चे देश के विकास, कानून-व्यवस्था के अनुपालन, अपने कर्तव्य के निर्वहन तथा बराबरी के समाज के निर्माण में सहायक ही नहीं, प्रेरक भी सिद्ध होंगे।

स्वयं तो ठनठन गोपाल हैं, क्या पता वर्तमान में संस्कार के लोकप्रिय बाजार से ही कुछ पैसा मार लें? फोल्डर इसमें मददगार होंगे। वर्माजी का एक सहपाठी पढ़ाई में 'जीरो' था। वही आज शिक्षा के क्षेत्र में 'हीरो' है। उसके पिताजी की परचून की दुकान थी। उसने कुछ वहाँ से उठाया, कुछ बैंकों से और पुश्तैनी जमीन पर पहले एक कमरे में, फिर धीरे-धीरे पूरी इमारत बनवाकर स्कूल से कॉलेज तक तरक्की की है। अब तो उसके मेडिकल कॉलेज भी चलते हैं, यानी तख्ती, स्लेट-पूजन से लेकर, हारी-बीमारी, जन्म-मरण तक का मुकम्मल इंतजाम। कहाँ रिक्शा-स्कूटर की सवारी को तरसते थे, कहाँ अब कारों की पूरी कतार है। हफ्ते में हर रोज वे कारें बदल-बदलकर सवारी करने में समर्थ हैं। जब शिक्षा के मिशन को कामयाब और कमाऊ उद्योग में तब्दील किया जा सकता है तो संस्कार को क्यों नहीं? वर्माजी की इकलौती महत्त्वाकांक्षा इस कीर्तिमान को स्थापित कर उसका पहला उद्यमी बनना है।

उनके पिता ने तो जमीन छोड़ी नहीं थी, पर वे जन-कल्याण समर्पित शासन को माई-बाप सरकार का दर्जा देते हैं। संस्कार स्कूल की जमीन तो उससे हड़पनी-ही-हड़पनी है, वरना संस्कार के अस्तित्व पर प्रश्न-चिह्न लगने का खतरा है। संस्कार और राष्ट्रहित उनकी नजर में गड्ड-मड्ड हो गए हैं। वे जानते हैं कि मात्र पत्र से सरकार के पहाड़ का टस-से-मस होना नामुमकिन है, लिहाजा उन्होंने एक ओर व्यक्तिगत त्याग किया है। सिद्धांत से स्वार्थ तक प्रगति कर वर्माजी ने शासकीय दल की सदस्यता हथिया ली है। उसके चार-पाँच विधायकों को संस्कार स्कूल के संभावित लाभ में हिस्सा देने के वादे से फँसाया है और अब फोल्डर के साथ मुख्यमंत्री को पटाने में प्रयत्नशील हैं। वे एक बार मुख्यमंत्री के दर्शन भी कर आए हैं और जमीन के लिए प्रार्थना भी। हाल ही में उन्होंने 'संस्कार का देश के विकास में योगदान' पर एक राष्ट्रीय गोष्ठी का भी आयोजन किया है उधार चंदे की मदद से। जाहिर है कि इसके उद्घाटन के लिए वे मुख्यमंत्री से निवेदन करें। अपनी ही पार्टी का कार्यक्रम जानकर मुख्यमंत्री भी आने को राजी हो गए हैं। कौन कहे, वे जमीन देने की घोषणा भी इसी मंच से कर दें।

उनका चंदा-उगाही कार्यक्रम भी जोर-शोर से चालू है। अपने एक चार्टर्ड एकाउंटेंट मित्र की सहायता से वे चंदे का नियमित हिसाब रख रहे हैं, पर उन्हें जमीन के आवंटन की प्रतीक्षा है। वहाँ स्कूल तो होगा ही, संस्कारी कैंटीन व भोजनालय भी होगा। उनकी योजना है कि एक संस्कारी अतिथि-गृह निर्मित हो। इसमें सस्ती दरों पर सैलानियों को कमरे उपलब्ध कराए जाएँ। वे दु:खी हैं, यह सोचकर कि जिस रफ्तार से सपने देखते हैं, उसी रफ्तार से सरकार उन्हें जमीन क्यों नहीं आवंटित करती है? कमाई की जुगत तो जमीन में है।

इधर जब वे पूरे समर्पण से 'संस्कार स्कूल ऑफ हिंदुस्तान' के निर्माण से राष्ट्र के विकास में लगे हैं, उधर उनके निजी जीवन में त्रासदियाँ भी घट रही हैं। एक दिन वे घर पहुँचे तो रात तक लड़की कॉलेज से नहीं लौटी थी, दूसरे दिन तक भी उसके दर्शन नहीं हुए। खोजने पर उसके कमरे से एक नोट मिला, जिसमें सूचना थी कि वह अपने मित्र के साथ 'लिव-इ न' के लिए जा रही है, उसे ढूँढ़ने के प्रयास न किए जाएँ।

वर्मा-पुत्र अपनी हरकतों से बाज क्यों आते? उन्होंने कॉलेज व उसके बाहर अपने मित्रों के साथ मिलकर लड़कियाँ छेड़ने की ऐसी जोरदार मुहिम चलाई कि नतीजतन, कॉलेज से वह निष्कासित किए जा चुके हैं, लड़कियों की शिकायत पर। वहीं से उठाकर पुलिस ने अनौपचारिक रूप से बिना केस दर्ज किए उनकी ऐसी धुनाई कर दी है कि एक टाँग में फ्रैक्चर हो गया है। संस्कारित पिता किस मुँह से अपनी पीड़ा बयान करे? बेचारे कर्तव्यवश उसकी सेवा-इलाज में लगे हैं। मोहल्ले में कानाफूसी प्रारंभ हो गई है कि वर्माजी ही 'संस्कार स्कूल ऑफ हिंदुस्तान' चलाने के सुयोग्य सुपात्र हैं, क्योंकि संस्कारों की सर्वाधिक दरकार इनके परिवार को ही है। उन्हें सरकारी जमीन का अब भी इंतजार है। क्या पता, उसके बाद जेब भरने का कुछ जुगाड़ लगे!

९/५, राणा प्रताप मार्ग
लखनऊ-२२६००१
दूरभाष : ९४१५३४४८४३८

साहित्य अमृत (मासिक)

(फॉर्म नं. ४, नियम ८ के अनुसार स्वामित्व संबंधी विवरण)

समाचार-पत्र का नाम	:	साहित्य अमृत
प्रकाशन अवधि	:	मासिक
भाषा जिसमें प्रकाशित होनी है	:	हिंदी
प्रकाशन स्थान	:	४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-११०००२
संपादक का नाम	:	त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी
नागरिकता व पता	:	भारतीय, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-११०००२
प्रकाशक का नाम	:	श्यामसुंदर
नागरिकता व पता	:	भारतीय, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-११०००२
मुद्रक का नाम व पता	:	ग्राफिक वर्ल्ड, १६८६, कूचा दखनीराय, दरियागंज, नई दिल्ली-११०००२
उन व्यक्तियों के नाम व पता जो समाचार-पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूँजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझीदार या हिस्सेदार हों	:	श्यामसुंदर, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-११०००२

मैं, श्यामसुंदर, एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी के अनुसार दिए गए विवरण सत्य हैं।

नई दिल्ली, २० फरवरी, २०१८ — श्यामसुंदर

दहेज ऐक्ट

● राहिला रईस

''आसिफा-आसिफा, कहाँ हो तुम?'' रियाज जोर-जोर से आसिफा को पुकार रहा था, उसकी आवाज में थोड़ी हड़बड़ाहट थी।

''क्या हुआ रियाज, इतनी जोर से क्यों चिल्ला रहे हैं, जाहिर सी बात है, सुबह का वक्त है तो मैं बावरचीखाने में ही होऊँगी।'' आसिफा ने झल्लाते हुए जवाब दिया।

''अरे! सुनो तो सही, हर वक्त गरम तवे पर ही सवार रहती हो। तुमने आज का अखबार देखा?'' रियाज ने अपनी आवाज धीमी करते हुए कहा।

''हाँ जरूर! बच्चों को स्कूल के लिए तैयार करना है, आपका और उनका टिफिन पैक करना है, सबके लिए नाश्ता बनाना है और आप कह रहे हैं कि मैं सबकुछ छोड़कर आपकी तरह अखबार बाँचने बैठ जाऊँ। आप खुद तो मेरी कोई मदद करते नहीं हैं, मुझे परेशान और कर रहे हैं सुबह-सुबह।'' आसिफा ने शिकायती लहजे में कहा।

''अच्छा, ऐसा क्या है अखबार में, जो आप यों बौखलाए हुए हैं।'' आसिफा को जैसे कुछ याद आया।

''अरे, वे अपने सिद्दीकी साहब हैं न, उन्हें और उनकी बेगम को पुलिस ने कल शाम दहेज ऐक्ट में गिरफ्तार कर लिया।'' रियाज ने बताया।

''कौन से सिद्दीकी साहब?'' आसिफा जैसे इतमीनान करना चाहती हो, ''वही, जो पिछले मोहल्ले में रहते हैं?''

''हाँ-हाँ, वही, जहाँ तुम इस्तमा में जाती हो।'' रियाज ने यकीन दिलाने के अंदाज में कहा।

''यह कैसे हो सकता है, वे दोनों तो बहुत ही नेक लोग हैं। अंकल इतनी बड़ी पोस्ट से रिटायर हुए हैं। इतना आलीशान मकान है, फिर भी किस कद्र सादा मिजाज। उनका बेटा और बहू तो यहाँ रहते भी नहीं हैं। बहू बेगम को तो इतना गुरूर है कि यह शहर उन्हें अपने शयान-ए-शान नहीं लगता, इसलिए यहाँ आती नहीं। बूढ़े सास-ससुर को साथ रखना उसके स्टेटस के खिलाफ है। तो फिर उन बिचारों ने कब उसपर जुल्मोसितम ढहा दिए। खुदा नेक और शरीफ लोगों के साथ ऐसा क्यों करता है?'' आसिफा अपने से ही बोले जा रही थी।

रियाज भी ताज्जुब में था। ऐसा कैसे हो सकता है, जरूर कोई गलतफहमी हुई है। अखबार में गलत नाम छप गया होगा। ऑफिस जाते वक्त अंकल-आंटी से मिलकर जाऊँगा तो सब पता चल जाएगा। ये अखबारवाले भी उल्टी-सीधी खबर छाप देते हैं, कभी खबर गलत होती है तो कभी नाम गलत होता है, फिर माफीनामा छापते रहते हैं। रियाज जैसे खुद को समझा रहा था।

सुपरिचित रचनाकार। प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में लेख, शोध-पत्र, अनुवादित कहानियाँ प्रकाशित। साहित्यिक संस्था साहित्य मंडल, नाथद्वारा द्वारा सम्मानित। संप्रति अलीगढ़ मुसलिम विश्वविद्यालय में एसोसिएट प्रोफेसर (हिंदी) के रूप में कार्यरत।

आसिफा का खुद भी बहुत दिल हो रहा था कि जाकर अंकल-आंटी से मिल आए, रियाज के आने तक सब्र करना उसे मुश्किल लग रहा था। सिद्दीकी साहब और उनकी बेगम से उसे वैसे भी बहुत उनसीयत थी। इसलिए वह जल्दी-जल्दी काम निपटाकर उनके घर जाने के लिए तैयार होने लगी। बुआ भी आ गई थी और आते ही हस्बे मामूल उसने मोहल्ले की रिपोर्ट देनी शुरू कर दी थी। नादिरा बुआ वाकई बीबीसी की रिपोर्टर थीं।

''अरे मैडमजी! वहाँ जाकर क्या करेंगी। घर पर कौन है, जिससे मिलेंगी। पुलिस ताला लगाकर दोनों को ले गई है। सुना है, अभी तो हवालात में हैं, फिर जेल भेज देंगे। वह जो वकील बाबू हैं न, जहाँ मैं काम करती हूँ, वह कह रहे थे कि इस केस में जल्दी जमानत भी नहीं हो सकती। बिचारे!'' आसिफा के सिद्दीकी साहब के घर जाने की बात सुनकर बुआ बोली।

आसिफा का दिल नहीं मान रहा था। आंटी-अंकल और दहेज की माँग, बहू पर जुल्म! नहीं, वे ऐसा कर ही नहीं सकते। इस उम्र में यह इल्जाम भी लगने थे। थाना, कचहरी, जेल-हवालात क्या-क्या देखेंगे वे! अब शाम को रियाज के ऑफिस से आने के वक्त से पहले से ही तैयार होकर वह उसका इंतजार कर रही थी। वह थाने जाना चाहती थी। रियाज की गाड़ी की आवाज सुनते ही वह बाहर आ गई।

''रियाज, गाड़ी अंदर मत लाओ, पहले आंटी-अंकल से मिलने थाने जाएँगे।'' आसिफा ने कहा। रियाज भी जानना ही चाहता था, इसलिए उसने फौरन गाड़ी मोड़ ली। थाने का दरोगा पहले तो उन्हें सिद्दीकी साहब से मिलने ही नहीं दे रहा था। उसके अल्फाजों में सिद्दीकी साहब के लिए हिकारत झलक रही थी—''साले बुड्ढे, अब मासूम बन रहे हैं। नाटक कर रहे हैं, बुढ़िया को देखो, कैसे टसुए बहा रही है। जब बहू को पीटती थी, उससे दहेज लाने को कहती थी, कोसती थी, ताने देती थी तो कितनी ताकत आ जाती थी इसमें। ऐसे लोगों को

तो बीच सड़क पर जूते लगाने चाहिए।'' दरोगा का वश नहीं चल रहा था, वरना पीट ही डालता दोनों को। सिद्दीकी साहब की बहू ने बहुत रो-रोकर अपने पर हुए जुल्मों की दास्ताँ सुनाई थी। एक जवान और खूबसूरत औरत के आँसुओं में डूबी व हिचकियों में लिपटी शिकायतों ने उसपर इतना असर कर दिया था कि इन बुजुर्गों की तकलीफ और सच्चाई उसे नजर ही नहीं आ रही थी।

आसिफा और रियाज बस चुपचाप दरोगा की शक्ल ही देखते रह गए। क्या जवाब दें इन बातों का, समझ ही नहीं पा रहे थे। खैर, दरोगा की मिन्नत-समाजत करके, कुछ दे-दिलाकर उन्हें सिद्दीकी साहब से मिलने की इजाजत मिल पाई। बेगम सिद्दीकी गठिया की मरीज थीं और सिद्दीकी साहब आर्थोराइटिस के शिकार। हवालात में दोनों जमीन पर बैठे हुए थे। वे लोग फर्श पर किस तरह मुश्किल से बैठ पा रहे होंगे, आसिफा यही सोच रही थी। इन दोनों को देखकर सिद्दीकी साहब तो नदामत से सिर भी न उठा सके थे, पर बेगम सिद्दीकी फूट-फूटकर रोने लगी थीं।

''आसिफा बेटा, देखो न हमारी बहू ने हम पर क्या इल्जाम लगाए हैं। इस उम्र में बेइज्जती और नदामत के किस दलदल में हमें डुबो दिया, हम तो कहीं मुँह दिखाने के काबिल भी नहीं रहे।'' हिचकियों से टूटती आवाज में उन्होंने कहा।

''आंटी, आप घबराइए नहीं, सब ठीक हो जाएगा।'' कहने को तो आसिफा यह कहकर उन्हें हौसला बँधा रही थी, पर वह जानती थी कि दहेज कानून बहुत सख्त है। एक बार कोई फँस जाए तो निकलना बहुत मुश्किल होता है। बेगम सिद्दीकी की हालत देखकर आसिफा का कलेजा फटा जाता था। इस वक्त वह बस यही चाहती थी कि पकड़कर उनकी बहू राबिया को दिखाए इन बुजुर्गों की तकलीफ, पर राबिया तो आराम से दिल्ली वापस जा चुकी थी।

बड़े अरमानों से उन्होंने शादी की थी, अपने इकलौते बेटे मोमिन की राबिया के साथ। उसे अपनी बहू के तौर पर पसंद करने पर वे दोनों कितने खुश थे! चहकते हुए उन्होंने आसिफा को बताया था कि 'बेटा, राबिया बहुत अच्छी लड़की है, पढ़ी-लिखी, खुशशक्ल, तहजीबदार। ज्यादा अमीर तो नहीं, पर नेक और खानदानी लोग हैं। जब तुम मिलोगी उससे तो देखना, यकीनन वह तुम्हें पसंद आएगी।'

अपने गठिया के न काबिले बरदाश्त दर्द के बावजूद बेगम सिद्दीकी ने बरी तैयार करने में कोई कोर-कसर न उठा रखी थी। शादी के हर तकरीब के बेहतरीन इंतजाम किए थे। राबिया सच में उतनी ही खूबसूरत थी, जितनी अकल-आंटी ने बताई थी, पर तहजीबदार तो वह आसिफा को शुरू से ही नहीं लगी थी। उसके रंग-ढंग कुछ अजब से ही थे, अपनी खूबसूरती का गुरूर भी कुछ ज्यादा ही था। शादी को चार साल हो गए थे, पर अब तक छमिया बनी घूमती है। न बाल, न बच्चा। महीनों में एक-दो दिन के लिए आती भी है ससुराल तो सिर्फ अपने में ही उलझी रहती है, मैकअप, हेयरस्टाइल, ये-वो। न सास को सहारा दे, न ससुर की बात पूछे। मुँह फुलाए टी.वी. देखती रहेगी या बाजारों में घूमती रहेगी और फिर बड़े-बड़े शॉपिंग बैग उठाए चली आती है। आसिफा जब से थाने से आई थी, यही सब सोचे जा रही थी। उसे पता ही नहीं चला कि कब आकर रियाज उसके नजदीक बैठ गया था।

रियाज की आमद का अंदाजा होते ही उसने अपना सिर उसके कंधे पर रखते हुए कहा, ''कुछ करो न, रियाज। मोमिन भी यहाँ नहीं है। आंटी ने बताया कि परसों ही तो वह एक सेमिनार में हिस्सा लेने के लिए अमरीका गया है और उसके जाते ही राबिया ने यह कांड कर दिया। उसे इत्तिला तो दे दी गई है, पर आने में दो-एक दिन तो लगेंगे ही। आंटी-अंकल के और करीबी रिश्तेदार भी इस शहर में नहीं रहते। तुमने वकील से बात की था न आज, क्या कहा उन्होंने।''

''हाँ, गया था वकील मुस्तफा हुसैन के पास दोपहर में। पर अभी जमानत भी नहीं हो सकती। दहेज ऐक्ट में 'धारा ४९८ ए' लगाई है राबिया ने, जिसमें बिना किसी जाँच-पड़ताल के सीधे धर-पकड़ है। इसमें न उम्र का लिहाज है, न बीमारी की रियायत। और तो और जमानत भी नहीं होती। कम-से-कम छह महीने तो जेल में रहना ही पड़ेगा अंकल-आंटी को। राबिया ही केस वापस ले तो शायद कुछ हो सके, पर वह तो मानेगी नहीं। अब मोमिन को आने दो। वैसे तुमने आंटी से पूछा, आखिर माजरा क्या है?'' रियाज ने कहा।

''हाँ, पाँच लाख रुपए माँग रही थी राबिया, किसी फिल्म प्रोड्यूसर को देने के लिए। उसे हिरोइन बनने का शौक चढ़ा है। अंकल ने देने से मना कर दिया तो रिपोर्ट लिखवा दी।'' आसिफा ने जैसे बम फोड़ा।

''क्या कह रही हो, तुम! इतने दीनदार घराने की बेटी है। सिद्दीकी अंकल भी कितने दीनदार, परहेजगार इनसान हैं। ताहज्जुद गुजार हैं, हाजी हैं और उनकी बहू फिल्मों में जाना चाहती है, वह भी दोनो घरों की मरजी के खिलाफ, तौबा-तौबा!'' रियाज ने कानों पर उँगली रखते हुए कहा।

''हाँ आसिफा, अब मुझे याद आ रहा है, पिछले साल जब मोमिन और राबिया यहाँ आए थे, तब भी बड़ा हंगामा किया था उसने। अंकल के पड़ोसी सिंह साहब, वही एक दिन बता रहे थे कि सिद्दीकी साहब की बहू तो बड़ी लड़ाका है। हर वक्त बस लड़ती रहती है। घरवाले उसकी लल्लो-चप्पो में लगे रहते हैं, पर वह सीधे मुँह बात ही नहीं करती। मैंने उसे पड़ोसी की हसद समझकर अनसुना कर दिया था, पर अब लग रहा है कि वे सच ही बोल रहे होंगे और शायद वह भी सच ही होगा।''

''क्या सच ही होगा?'' आसिफा ने पूछा।

''अरे, सिंह साहब ही बता रहे थे कि एक दिन वह हजरतगंज में घूम रहे थे, तभी अचानक एक औरत की जोर-जोर से चिल्लाने की आवाज आने लगी। हिंदुस्तानियों की तो आदत ही होती है, मुफ्त का तमाशा देखने की। चुटकियों में भारी भीड़ जमा हो गई। मैं भी तो हिंदुस्तानी ही हूँ, पहुँच गया। देखा तो राबिया चीख रही थी और मोमिन हाथ जोड़-जोड़कर चुप हो जाने और वहाँ से चलने के लिए मिन्नतें कर रहा था। उसका चेहरा उस वक्त जिल्लत और नदामत से झुका हुआ था, आँखों में शर्म के आँसू झिलमिला रहे थे, पर राबिया उसके गमजदा चेहरे से बेपरवाह चिल्लाए जा रही थी—'मेरा शौहर मुझे मारता है, दहेज लाने को कहता है, भूखा रखता है, जुल्म करता है।' राह चलते लोग मोमिन पर थू-थू कर रहे थे और राबिया के साथ हमदर्दी दिखा रहे थे। थोड़ी देर

में राबिया चुप हो गई और मोमिन के साथ ही बाइक पर बैठकर चली गई।'' मुझे यकीन नहीं हुआ, इसलिए मैंने तुम्हें भी नहीं बताया और फिर दिमाग से निकल गया।

''पर अब ऐसा लगता है कि राबिया ने ऐसा किया होगा। उस वक्त भी उसकी कोई नाजायज माँग रही होगी, जो पूरी करवाने के लिए उसने यह बेहूदगी की होगी। जब मोमिन ने उसकी बात मान ली होगी तो वह चुपचाप चली गई होगी।'' रियाज ने मानो याद करते हुए कहा।

चार दिन हो गए थे। अपना सेमिनार छोड़कर मोमिन अमरीका से वापस आ गया था। आते ही उसने कितने ही वकीलों के चक्कर लगा लिये थे, पर सबका जवाब एक ही था, इतनी जल्दी जमानत नहीं मिल सकती। राबिया केस वापस लेने को तैयार नहीं थी। काफी दौड़-धूप और जद्दोजहद के बाद आखिरकार चार महीने के बाद दोनों जेल से रिहा हो पाए, वह भी राबिया की मदद से। मुकदमा अभी भी चल रहा था।

राबिया मोमिन के गले की हड्डी बन चुकी थी। न निगलते बनता था, न उगलते। राबिया ने उसकी जिंदगी कितनी अजियतनाक बना दी थी, यह सिर्फ वही जानता था। माँ-बाप का दिल न टूटे, वे परेशान न हों, इसलिए राबिया का साथ निभाए जा रहा था, उनसे भी कुछ न कहता था, सबकुछ अंदर-ही-अंदर बरदाश्त कर रहा था। राबिया रोज-ब-रोज उसे नए-नए इम्तिहान में डालती रहती, कभी उसे महँगे कपड़े, जेवर चाहिए होते, जो कई बार मोमिन के बजट से भी बाहर होते। अकसर वह देर रात तक घर से बाहर पार्टियों में रहती। उसने डिस्को जाना भी शुरू कर दिया था। कभी-कभी ड्रिंक भी करने लगी थी। अब उसे नया भूत चढ़ा था, फिल्मो में काम करने का। अजीब-अजीब से मर्द घर पर आते रहते, कोई कहने को प्रोड्यूसर होता तो कोई डायरेक्टर। प्रोफाइल बनाने पर भी वह काफी पैसा बरबाद कर चुकी थी।

मोमिन सब सहता, क्योंकि राबिया के पास कानून की बड़ी जानकारी थी, आखिर लॉ ग्रैजुएट थी। औरतों के हक, कानून, दहेज ऐक्ट, घरेलू हिंसा ऐक्ट वगैरह उसने घोल के पी रखे थे। कभी अगर मोमिन उसे समझाने या टोकने की कोशिश करता तो राबिया किसी-न-किसी कानून के तहत उसे हवालात की हवा खिला देने की धमकी देकर उसकी बोलती बंद कर देती थी। तलाक की बात तो मोमिन सोच भी नहीं पाता था। एक तो इतना सब होने के बाद भी वह राबिया से बहुत मोहब्बत करता था, दूसरे माँ-बाप को भी राबिया नुकसान पहुँचा सकती थी; यह डर भी उसपर हावी रहता। पर हुआ क्या, इतनी अजियतें बरदाश्त करने का अंजाम? वही हुआ, जिसका डर था। आखिर बकरे की अम्माँ कब तक खैर मनाती। इस उम्र में, जईफी में माँ-बाप रुसवा हुए। जेल में रहे। अब भी कोर्ट-कचहरी के चक्कर लगा रहे हैं। बेगुनाह होते हुए भी दुनिया की नजरों में जलील हुए। उनकी इमेज कितनी भी अच्छी क्यों न रही हो, पर लोगों की सोच तो यही है कि जालिम तो मर्द ही होता है, औरत तो मजलूम होती है। सिद्दीकी साहब से बावस्ता लोगों की आँखों में भी कुछ सवाल तो तैरते ही दिखते। आखिर पहाड़ बनने के लिए भी तो राई की जरूरत होती ही है।

सिद्दीकी साहब शॉक्ड थे। वे समझ ही नहीं पा रहे थे कि उन्हें उस गुनाह की सजा क्यों मिली, जो उन्होंने किया ही नहीं? यह जिल्लत उन्हें क्यों उठानी पड़ी? उनकी खता क्या थी? उन्होंने घर से बाहर निकलना छोड़ दिया। किसी से भी मिलना-जुलना बंद कर दिया। दोनों मियाँ-बीवी ने मानो अपने आपको खुद ही कैद की सजा सुना दी थी। मोमिन की परेशानियाँ अभी खत्म नहीं हुई थीं। माँ-बाप की जमानत में मदद करके राबिया फिर से उसपर सवार हो चुकी थी। हर बात पर धमकी देती—''अभी तो सिर्फ ट्रेलर दिखाया है, पूरी फिल्म देखनी है क्या?'' और मोमिन उसकी हर जायज एवं नाजायज बात मानने को मजबूर हो जाता।

लेकिन खुदा ने उसकी और सिद्दीकी साहब की सुन ली थी। राबिया एक आम से घर की लड़की थी। बस मजे से दाल-रोटी चल जाती थी। घर में बड़ा मजहबी माहौल था। हर तरह के गैर शरई कामों पर सख्त पाबंदी थी। पर राबिया के सपने और उड़ान बहुत ऊँचे थे। सिद्दीकी साहब के जैसे रुतबे और पैसेवाले घर में शादी हो जाने के बाद तो उसके ख्वाबों को पंख लग गए। राबिया वह सबकुछ करना चाहती थी, जो मायके में करना तो चाहती थी, पर खयालों में भी नहीं कर सकती थी। सोने पर सुहागा यह हुआ कि मोमिन की पोस्टिंग दिल्ली में थी। अकेला घर-पैसा और दिल्ली की चकाचौंध में राबिया अंधी हो गई थी। खूबसूरती का गुरूर तो पहले ही से था, अब फिल्मों में काम करने का शौक और चर्राने लगा था। उसके इस शौक को हवा दी मोमिन के ड्राइवर ने, जो कि मुंबई से ही था और राबिया को अपने फिल्मी कलेक्शन के किस्से सुनाता रहता था। बाँका-सजीला नौजवान था, चिकनी-चुपड़ी बातें बनाना भी जानता था। राबिया धीरे-धीरे उसके जाल में फँसती जा रही थी। आखिरकार एक दिन वह सारे जेवर-पैसे लेकर ड्राइवर के साथ हिरोइन बनने मुंबई चली गई। दो-एक बी ग्रेड फिल्मों में उसे चुट-पुट रोल भी मिल गए थे, इसलिए थोड़े दिनों बाद उसने खुला का नोटिस भी भेज दिया।

मोमिन को तो मन की मुराद मिल गई, उसने फौरन ही तलाक दे दिया और राबिया से उसका पीछा छूट गया। सिद्दीकी साहब और बेगम अब भी दर्द की पिछली परछाइयों से उबर नहीं पाए थे। हाइपरटेंसिव और डायबिटिक तो पहले से ही थे; अब दिल के मर्ज में भी मुब्तिला हो गए थे। जेल में बिताए दिन डरावने ख्वाब की तरह उनके हवासों पर सवार रहते थे, पर बेटे के लिए अब उन्हें इत्मिनान था। खानदान की ही एक लड़की के साथ मोमिन की दूसरी शादी भी हो गई और वह एक सुकून भरी जिंदगी बसर करने लगा। नई दुलहन सास-ससुर का बहुत खयाल रखती, हालाँकि सिद्दीकी साहब और बेगम सिद्दीकी अब भी लखनऊ में ही रहते हैं और मोमिन दिल्ली में; पर नई बहू के लिए लखनऊ न तो छोटा शहर है, न दूर। आसिफा और रियाज अब भी दोनों बुजुर्गों से बहुत रकबत रखते हैं और आसिफा हर हफ्ते उनके यहाँ इस्तमा में तो जाती ही है।

सा अ

सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग
अलीगढ़ मुसलिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़
दूरभाष : ८४३९०५८१२७

नोमिनी

मूल : **केशुभाई देसाई**

अनुवाद : **शिवचरण मंत्री**

रोहित भट्ट मीठे-गहन विचारों में डूब गए।

उन्हें प्रधानमंत्री सुरक्षा योजना का फार्म लेकर खड़े देखकर गार्ड ने रोकते हुए कहा, ''काका! इस तरह रास्ता रोककर खड़े रहने की बजाय आपको जिस काउंटर पर काम है, वहाँ लाइन में खड़े हो जाएँ तो ठीक या फिर वहाँ बैठ जाएँ।''

वे किसी समय सुपर क्लास वन ऑफिसर थे। समय की बलिहारी। 'साहब' संबोधन सुनने के आदी कान 'काका' सा ग्रामीण शब्द सुनकर दु:खी हुए। पर बड़ी या अधिक आयुवाले लोगों के लिए यह शब्द प्रचलन में आ गया है, तब भला उस गार्ड का क्या दोष, सिवाय उसके जो सामनेवाले व्यक्ति के पद-प्रभाव से सुपरिचित न हो। ऐसे अवसरों पर वह 'सर' सा सम्मानजनक शब्द प्रयुक्त करेगा, पर रोहित भट्ट को 'सर' संबोधन सुनना पसंद है। यह शब्द कान में पड़ते ही उनके कान कुम्हला गए अस्तित्व में मीठी सुगबुगाहट जाग उठती है। सौभाग्य का एहसास होता है। परंतु अब बहुत ही कम व्यक्ति ऐसा विवेक प्रदर्शित करते हैं। मानो 'सर' कहने में कोई बहुमूल्य आभूषण दे रहे हों, इस प्रकार सोचकर गुजराती 'सर' कहने में बहुत संकोच करते हैं। कतिपय व्यक्ति जान-बूझकर अंकल शब्द प्रयुक्त करते हैं, इन्हें वे अर्वाचीन-पुराने आइटम मानने का एहसास कराते हैं।

रोहित भट्ट चौंके। फार्म में कोई विशेष विवरण नहीं भरना था, मात्र बैंक का खाता नंबर लिखकर हस्ताक्षर करके ही लौटाना था। बैंक में उनका विगत तीस सालों से बचत खाता है। अब तो वरिष्ठ नागरिक की श्रेणी में आने से आधा प्रतिशत ब्याज भी ज्यादा मिलता है। वर्ष में सामान्यत: जमा करवाई रकम को साल में एक-दो बार रिन्यू करवाने आना पड़ता था। आयकर नहीं देने पर भी आयकर रिटर्न भरने तो आना ही पड़ता है। इसका कारण है, परदेश का वीजा लेने के लिए इनकम टैक्स रिटर्न की प्रति दिखाना आवश्यक है। बाकी के वर्षों में दुनिया की सैर करना चाहते हैं। बैंक में रुपयों का ढेर खड़ा करके एक दिन मर जाना है, यह करते हुए भी जीवन सफल बनाना क्या बुरा है? वे साहब से काका हो गए। इतना ही नहीं, अपितु सफेद बाल देखकर युवकों ने दादा कहना शुरू कर दिया।

रोहित भट्ट शाम को 'पुनीतवन' में भ्रमण करने जाते हैं तो हर बेंच पर युवकों को बैठे देखकर आश्चर्यचकित रह जाते हैं। युवकों की प्रणय-चेष्टाएँ देख-देखकर उन्हें अपना अतीत याद आ जाता है। किसी समय इसी प्रकार सुरभि के साथ···उनकी दृष्टि में रंगीन स्मृतियाँ ताजा हो गईं। जमाने के साथ दुश्मनी करके उन्होंने सुरभि से प्रेम किया था। संभवत: इतना स्नेह विजाणंदे शेरी, राँझा-हीर ने नहीं किया। तदपि थोड़ी गंभीरता से सोचने पर उन्हें अपने प्रेम के बारे में अतिशयोक्ति होने का आभास होता था। सुरभि के लिए इतना गहरा स्नेह था तो उसे क्योंकर छोड़ दिया? उसकी एक-दो भूलों को क्षमा नहीं कर सके तो स्वयं को संसार के अमर प्रेमीजनों की पंक्ति में इतनी प्रशंसा का क्या अधिकार?

कई बार उनका मन सुरभि से क्षमा माँगने का होता। पर क्षमा माँगने की हिम्मत ही नहीं होती थी। अत: वैसे देखा जाए तो वह बेवफाई सामने के पक्ष की थी। स्वयं ने बड़े अफसरों का बुरे कार्यों में साथ नहीं दिया, इसकी सजा भुगतते रहे। कोमल प्राणी, तदुपरांत बैसाख की जलती तेज धूप का तीव्र बैरभाव, अत: कच्छ क्या, लेह-लद्दाख या मिजोरम में नहीं फेंकते। बॉस हैं, अत: इनका आदेश तो मानना ही पड़ता है। पर रिश्वत उघाकर हफ्ता पहुँचानेवाले दूसरे! रोहित भट्ट ऐसे खोटे काम नहीं कर सकता। वह शेर का बच्चा है। मर जाए, पर ऐसे बुरे काम नहीं करे, घास नहीं खाए। सुरभि ने बॉस के साथ संधि कर लेने की सलाह दी, पर रोहित भट्ट ने उसकी सलाह पर ध्यान नहीं दिया। उसने स्पष्ट कहा कि दो साल की कृति को लेकर मैं कच्छ में बस जाऊँगा। ऐसा ठान लिया। दोनों के बीच बहुत बातचीत भी हुई थी। सुरभि ने कहा, ''इस छोटी सी बच्ची पर तो दया करो! तुम्हें अपने सिद्धांत अपनी बेटी से ज्यादा प्यारे हैं? तुम रोहित भट्ट हो, गांधीजी नहीं, इतना तो स्वीकार करो।''

परंतु रोहित भट्ट माँ-बेटी को रोते-बिलखते छोड़कर स्थानांतरण स्थल पर चले गए थे। महीने-पंद्रह दिन में एक-दो बाद आ जाते। और एक-दो रात को रुककर वापस लौट जाते थे। मानो अपने ही घर में स्वयं ही मेहमान हों।

रोहित भट्ट ने खुद ही अपने हाथों से अपनी एकदम हरी-भरी बगिया को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया था, इसका उन्हें अपार कष्ट था। उस रात उन्होंने फ्लैट की घंटी बजाई तो दरवाजा खोलने आई आया को देखकर वे गहन विचारों में खो गए, घना आघात लगा। अचानक ही बिना बुलाए आ गए, अत: सुरभि तो मानो निश्चिंत थी। आगंतुक व्यक्ति से बहस करके कोई बड़ा अपराध नहीं कर दिया था, परंतु भट्टजी के परंपरागत संस्कारवाला मन यह मानने को तैयार नहीं था। मेरे तो धर्म के भाई हैं। लड़खड़ाती जुबान से बचाव करती परेशान सुरभि रोहित भट्ट की शंका का समाधान नहीं कर सकी। इसके बाद भट्टजी ने इस घर में पाँव नहीं रखा।

''मैडम, फार्म में क्या विवरण भरना है?''

वे सामने खड़ी लड़की को टुकुर-टुकुर देखते ही रहे। न जाने उसे देखकर उन्हें सुरभि की पहचान कैसे याद आ गई। ठीक ऐसा ही गोरा रंग, ऐसा ही नाक व ऐसी ही आँखें···शायद नई-नई भरती हुई हो।

''अंकल, आपको मात्र अपना नाम और खाता नंबर ही लिखना है। देशवासियों के लिए प्रधानमंत्रीजी ने दो योजनाएँ शुरू की हैं। प्रधानमंत्री की सुरक्षा योजना में तो मात्र बारह रुपए का वार्षिक प्रीमियम—महीने का एक रुपया, वह भी वापस तुम्हारे खाते से स्वत: ही कट जाए, अत: एक बार फार्म भर दिया तो फिर चिंता करने की कोई बात नहीं।''

रोहित भट्ट को हँसी आ गई। प्रधानमंत्री बहुत नेक व्यक्ति हैं। प्रत्येक खातेदार से प्रति माह रुपया ले लेना तो उन जैसे विलक्षण नेता को ही सूझा। बूँद-बूँद से सागर भरता है। कहावतानुसार एक साल में अरबों रुपयों का खजाना इकट्ठा हो जाए। चाणक्य नीति में लिखा है, यथा मधुमक्खी फूल को नुकसान पहुँचाए बिना शहद इकट्ठा कर लेती है, इसी तरह राजा प्रजा को इसका एहसास कराए बिना कर वसूल किया जाए।

काउंटर पर बैठी युवती ने मुँह बिचकाते हुए कहा, ''लगता है, अंकल बहुत पढ़ते हैं।'' पास ही बैठी लड़की ने कटाक्ष किया, ''अंकल, यदि आप ट्यूशन कक्षाएँ लगाएँ तो चलेगा, ओ.के., बुढ़ापे में अतिरिक्त कमाई नफे में···''

दोनों युवतियों द्वारा अपनी ढलती उम्र का मजाक होता देख रोहित भट्ट को मधुर रोमांच की अनुभूति हुई। वे बोले, मुझे आपको कॉफी पिलानी है, क्या यहाँ कैंटीन है?''

''अरे अंकल, आप हमारे माननीय कस्टमर हैं। कॉफी तो हम आपको पिलाते हैं। पहली रूपाली बालिका ने बिना किसी प्रतिभाव के कहा और उसने चपरासी को आवाज दी, ''करसनजी, अंकल के लिए बढ़िया सी कॉफी तो लाओ।''

''तुम्हें छोड़कर मैं अकेला कॉफी कैसे पीने लगूँ?'' उसने प्योन को सौ रुपए देकर कहा, ''करसन भाई! प्यारे दोस्त, आप चार कप कॉफी ले आओ। तुम भी हमारे ही साथ पीना भले आदमी, नीचे उतरकर रोड पर वाहन की टक्कर में आ जाऊँ तो सीधे ही दो लाख का चैक देना है। बारह रुपए में दो लाख। क्या ऐसी कल्याणकारी योजना आज तक किसी नेता के दिमाग में आई?''

दोनों लड़कियाँ उसकी दलील पर बड़ी प्रसन्न हुईं।

''अंकल, बहुत उदार हो।'' पास की टेबलवाली लड़की ने चुटकी ली, ''ईश्वर ऐसा न करे, पर ऐसी घटना घट जाए तो यह सारी दुनिया···'' अभी वह वाक्य पूरा करती कि इससे पहले ही फार्म पर सही सील लगानेवाली लड़की बोली, ''अरे अंकल! आपने नोमिनी का नाम तो लिखा ही नहीं।''

रोहित भट्ट की आँखों के सामने वर्षों पूर्व त्याग दी गई माँ-बेटी तैर उठीं। उन्होंने कहा, ''मैं, आई नो यूअर गुड नेम मैडम?''

''कृतका भट्ट···''

यह शब्द सुनकर रोहित भट्ट ने काँपते हाथों से गड़बड़ाए अक्षरों से नोमिनी के कॉलम में लिखा—कृतका रोहित कुमार भट्ट···

''सर!'' वह लड़की तो स्तब्ध होकर उसके सामने टकटकी लगाए देखती ही रही।

ग्राम—श्रीनगर, जिला—अजमेर-३०५०२५ (राजस्थान)
दूरभाष : ९४१४९८१९४४

दादी का चश्मा

बाल-कविता

● अब्दुल रशीद पठान

पता नहीं कैसे हो गया
आज अजीब करिश्मा,
खो गया आज सुबह से
बूढ़ी दादी का चश्मा।

चश्मा क्या खोया दादी का
सबकी आफत आई,
मम्मी ने छाना कोना-कोना
कर डाली घर की सफाई।

छोटू, मोटू, पतलू, गोलू
ढूँढ़-ढूँढ़ चश्मे को हारे,
कहीं नहीं जब चश्मा पाया
दु:खी हो गए सब बेचारे।

शाम ढले जब पापा आकर
लगे खोलने जूते का तस्मा,
बोले मैं बाजार ले गया
दादीजी का चश्मा।

दादी ने खुद मुझे दिया
उसमें नया काँच डलवाया,
याद आ गया दादी को भी
जब पापा ने बतलाया।

ठीक हुआ जब टूटा चश्मा
दादी फूली नहीं समाई,
तब जाकर घरवालों को
साँस चैन की आई।

गांधीपुरा, लाखेरी जिला, बूँदी (राज.)
दूरभाष : ०९४१४३३७५१३

बसंती दादी

• मनमोहन गुप्ता

गौरवर्ण मुखारविंद, नासिका शुक, उसपर थोड़ा गोल बड़ा सा नाक का काँटा। पैरों में लच्छे चाँदी के, वह भी केवल दो-दो। श्वेत केशयुक्त हमारी बसंती दादी थी। ग्राम अवार निवासी हमारी दादी सबकी लोकप्रिय थी गाँव में।

गाँव का हर बालक, युवा, प्रौढ़ 'दादी, राम-राम! दादी, राम-राम!' कहकर अभिवादन करते थे उनका। युवावस्था में विधुर हो जाने पर जो दर्द उन्हें हुआ था, वह गाँववालों द्वारा दिए गए सम्मान से धीरे-धीरे विलुप्त हो गया था।

बसंती दादी दुकान चलाकर अपनी उदरपूर्ति करती थीं। उनके दो बेटे और एक बेटी के बारे में गाँव में जरूर चर्चा होती थी। बसंती दादी के इस प्रकार तीन संतानें थीं। बड़ा बेटा बहुत ही परिश्रमी था। आजीविका के लिए किसी दूसरी जगह जाकर हलवाई का काम करता था। कोई कहता है कि वह गोविंदा के साथ सट्टा लगाता था। गोविंदा लड़कियों का व्यापार भी करता था। बसंती दादी के बड़े बेटे छीतर ने उसी के माध्यम से अपना घर भी बसा लिया था। लेकिन उसकी पत्नी वाचाल थी, इसीलिए वह अपनी देहरी लाँघ जाती थी।

उसी का परिणाम हुआ कि एक दिन बसंती दादी का यह बड़ा लड़का आग लगाकर आत्महत्या करने को विवश हो गया था। बसंती दादी आज भी कहती हैं, ''नौ महीने तक पेट में रखकर मैंने जो दु:ख उठाए, वह मैं ही जानती हूँ। उसे मैंने कितने लाड़-प्यार से पाला था, यह मेरा हृदय ही जानता है। पहले पति परलोक गमन कर मेरा सिंदूर मिटाकर चले गए। अब दु:ख के अपार सागर में यह जवान बेटा छीतर मेरी कमर तोड़कर चला गया है।''

''आपका दूसरा बेटा क्या करता है?'' भुल्ली ने सहज भाव से जब दादी से पूछा तो उसकी आँखों से अविरल अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी थी।

''छोटा बेटा जगदीश, गोरा-चिट्टा! बिल्कुल मेरे जैसा ही। बुद्धि में अपने पिता हरिश्चंद्र से भी अधिक कुशाग्र। पिता की छत्रच्छाया जब पुत्र के ऊपर से हट जाती है तो उसका बचपन सूना हो जाता है। उसे संरक्षण और प्यार की आवश्यकता होती है। इसी कारण मैंने उसे लालन-पालन और शिक्षा के लिए भँवरस्वरूप बेटे के पास भेज दिया है।''

''यह भँवरस्वरूप कौन है तुम्हारा? जिसे तुम बेटा भी कह रही हो।'' भुल्ली ने बसंती दादी से तपाक से पूछ लिया।

''अरे, वह मेरा अपना बड़ा बेटा ही है। छीतर से भी बड़ा।'' बसंती दादी ने गर्व से कहा।

''वह कैसे?''

सुपरिचित कवि-लेखक। अब तक दो कहानी-संग्रह, दो कविता-संग्रह तथा राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में अनेक रचनाएँ निरंतर प्रकाशित एवं दूरदर्शन तथा आकाशवाणी जयपुर से रचनाओं का सजीव प्रसारण। नाथद्वारा में हिंदी की अग्रणी संस्था साहित्य मंडल तथा राजस्थानी ब्रजभाषा अकादमी, जयपुर द्वारा सम्मानित।

''अरे, तुम क्या जानो, भुल्ली? अपने पिताजी से पूछना, वह तुम्हें सब बता देंगे। वह मेरा बड़ा बेटा, जो सबसे प्रिय है मुझे, उसके बारे में...।'' भुल्ली से बसंती दादी ने कहा।

''दादी, मैं अपने पिताजी से क्यों पूछूँ भँवरस्वरूप के बारे में? वह तुम्हारा बेटा कहाँ से आया? गाँव में तो हम सब यही जानते हैं कि तुम्हारे दो बेटे और एक बेटी, जिसका नाम मेरी अम्माँ अँगूरी बता रही थीं, यही थे तुम्हारे।'' भुल्ली ने कहा।

''मैं तुम्हें तुम्हारे पिताजी से पूछने के लिए इसलिए कह रही हूँ भुल्ली, कि वे इस बेटे के बारे में अच्छी तरह जानते हैं। तुम अभी बालक हो। मैं तुम्हें यह सब कैसे बताऊँ? यह मुझे कैसे प्राप्त हुआ था, क्योंकि जब मैं यह सब बताने का प्रयास करती हूँ तो मुझे तुम्हारे बाबा की याद आने लगती है, जिसकी वह पहली निशानी छोड़कर गए थे मेरे लिए।'' बसंती दादी ने धाराप्रवाह बोलते हुए सिसकियों के साथ रोना शुरू कर दिया था।

एक दिन भन्नेवाले कुएँ पर बात हो रही थी। बाबा हरिश्चंद्र की तीन शादियाँ हुई थीं। पहली पत्नी की निशानी भँवरस्वरूप बाल्यावस्था में था, तब ही उसकी माँ उसे छोड़कर चिरनिद्रा में सो गई थी। दूसरी पत्नी हरिश्चंद्र को बिना कोई उपहार दिए ही इस लोक से विदा हो गई थी। इस प्रकार दो-दो पत्नियों का युवावस्था में बिछोह हो जाने पर हरिश्चंद्र बिल्कुल टूट गया था। निराश रहने लगा था। तुलसी बाबा, जो उनके पिता थे, वे इस अपार दु:ख को सँभाल नहीं पा रहे थे। तभी बसंती दादी, जो उस समय पूर्ण यौवन पर संस्कार वाली वयस्क लड़की थी, उसका रिश्ता हरिश्चंद्र के लिए आ गया था। भन्नेवाले कुएँ पर भुल्ली के साथ और भी किशोर वहाँ खड़े थे। जब उन्होंने हरिश्चंद्र बाबा की दो-दो शादी और फिर उसके पश्चात् तीसरी शादी की कहानी सुनी तो सभी दाँतों तले उँगली दबाकर रह गए।

बसंती दादी का बेटा जगदीश अपने बड़े भाई को पिता के बराबर सम्मान देकर उसके पास रहता था। कहा जाता है कि भँवरस्वरूप के दो लड़के जगदीश से बड़े थे, लेकिन दोनों जगदीश को चाचाजी कहकर

ही संबोधित करते थे।

कालक्रम के अनुसार समय गुजरता गया। भँवरस्वरूप सरकारी नौकरी में लग गया था। जगदीश पढ़ाई में अव्वल था। विद्यालय में दसवीं कक्षा प्रथम स्थान पाकर उत्तीर्ण हुआ था। उसके भाई ने जब और आगे पढ़ाने के लिए हाथ खड़े कर दिए तो वह अपने स्तर पर किसी बड़े शहर में चला गया, जो किसी प्रदेश की राजधानी भी था। उसने ट्यूशन पढ़ाकर अपनी पढ़ाई जारी रखी।

बसंती दादी की लड़की अँगूरी रामजीलाल के साथ परिणय-सूत्र में बँध गई थी। वह दिल्ली में रहने लगी थी। जगदीश महालेखाकार कार्यालय में उच्च अधिकारी नियुक्त हो गया था। इस प्रकार सब तरह से बसंती दादी की संतानें साधन-संपन्न थीं। गाँव में सबकी प्रिय और सांप्रदायिक सद्भावना की साक्षात् मूर्ति थी वह। जाति-पाँति से कोसों दूर। सभी के दु:ख-दर्द में सहभागिता उसके रक्त में थी।

बसंती दादी अपने पति हरिश्चंद्र के गाँव को नहीं छोड़ना चाहती थी। उनका कहना था कि ''मैं अपने पति के गाँव में ही अपनी अंतिम साँस लेना चाहती हूँ और उसी राख में मिल जाना चाहती हूँ, जहाँ मेरे पति का पार्थिव शरीर राख हो गया था।''

बसंती दादी सिला बीनने भी जाती थी। (सिला बीनने का मतलब खेतों में पड़े अन्न के एक-एक दाने को चुगकर अपनी झोली में एकत्र करके लाना)। बसंती दादी ने सिला बीनकर अपना पेट भरा था।

दूसरे सच्चाई तो यह है कि बसंती दादी के वृद्धावस्था के बोझ को उठाने के लिए उनका कोई भी लड़का तैयार नहीं था। जब तक हाथ-पैर चले, बसंती दादी परिश्रम करके अपना पेट भरती रहीं। लेकिन जब उम्र बढ़ने लगती है तो अपने शरीर के अंग भी मनुष्य का कहना मानने को तैयार नहीं होते। हाथ को ऊपर उठाने का प्रयास करो तो वृद्धावस्था में वह भी मुँह मोड़कर दूर खड़ा हो जाता है। शिथिल अवस्था में शरीर के समस्त अंग मनुष्य को बिल्कुल पराश्रयी और पंगु बना देते हैं।

बसंती दादी को असाध्य रोग हो गया था। सभी ने उसके लिए अपने दरवाजे बंद कर दिए थे। जब बड़े बेटे भँवरस्वरूप के घर बसंती दादी आई तो वहाँ भी कोई उन्हें रखने को राजी नहीं था। एक तो बढ़ती उम्र से ग्रसित वृद्धावस्था ने असहाय कर दिया था, दूसरी तरफ इस उम्र में गर्भाशय का कैंसर हो गया था। उससे रक्तस्राव निरंतर जारी था। रक्त में जब दुर्गंध आती देखी गई तो बड़े बेटे की किराएदार गायत्री ने नाक-मुँह सिकोड़ते हुए परामर्श दिया कि इन्हें इनके गाँव ही भेज दिया जाए। यहाँ चारों तरफ रक्त-ही-रक्त और उसमें भी दुर्गंध आती है।

इस तरह बसंती दादी को उनके गाँव में अकेले जीवन व्यतीत करने को छोड़ दिया गया था। बसंती दादी साफ-सुथरी रहकर गाँव में ही अपना शेष जीवन व्यतीत करती रही। अपना अतीत याद आने पर वह फूट-फूटकर रोने को विवश थी। कँपकँपाती सर्दी में रजाई में लिपटी बसंती दादी एक अभागिन याचक बन गई थी। बिस्तर की मैली चद्दर से दुर्गंध आती थी। रजाई भी बहुत गंदी थी। जगह-जगह रक्त के धब्बे नजर आते थे।

बड़े बेटे की बहू गुलकंदी ने जब आलू के पराँठे और हलुआ बनाकर अपनी सास के पास भेजे तो उसने कहा था, ''मैं किसना जाट के यहाँ से आई लापसी खाऊँगी। हलुआ और आलू के पराँठे तो अब अगले जन्म में खाऊँगी। जब खाने के दिन थे तो किसी ने भी कुछ न भिजवाया।''

पंडित रेवती रमन ने बताया कि हम रोज दादी को देखने जाते थे। अभी उसकी गाड़ी चल रही है या नहीं? मैले-कुचैले वस्त्र और बिछोना, सभी से दुर्गंध आने के कारण कोई बसंती दादी के पास जाता नहीं था, लेकिन मैं राधा, रमन और लच्छी को रोज उनके पास भेजता था। मुझे बसंती दादी के यौवन का वह बंसत खूब याद आ रहा है, जब वह फागुन में थोक भाँड़न में से किसी को बिना रंग-बिरंगा करे जाने नहीं देती थी।

''अरे भुल्ली, जुगला···दाताराम बाबा, बसंती दादी नहीं रहीं, चलो, जल्दी चलो।'' ग्रामीण जनों के बीच यह संवाद चल रहा था।

''ऐसा करो, एक ढकेल मँगाओ या फिर बैलगाड़ी, बसंती दादी के शव में से बहुत बदबू आ रही है। इसे कौन स्पर्श करेगा? कौन संस्कार से पूर्व होनेवाली प्रकिया अपनाएगा? चलो-चलो, जल्दी चलो, श्मशान में कंडे भिजवाओ, मैं बैलगाड़ी ले आता हूँ। उसमें रखकर बसंती दादी श्मशान चली जाएँगी।'' अनेक सवादों के मध्य एक संवाद सुनाई पड़ा था। लेकिन पं. रेवती रमन ने अरथी सजाकर गाजे-बाजे के साथ गाँव के प्रमुख रास्तों से उसकी शवयात्रा निकाली थी।

बसंती दादी की याद में आज पूरी ग्रामीण जनता रो रही है, जो सबको अपना प्यार बाँटती थी, उसे बुढ़ापे में अपनी ही संतान का प्यार न मिला। अंतिम संस्कार के समय उसका अपना वह पुत्र तक नहीं था, जिसे गर्भ में नौ महीने रखकर कैसे-कैसे दु:ख उठाए थे। असह्य प्रसव-पीड़ा सहकर जो जाये थे। खुद गीले में सोकर उन्हें सूखे में सुलाया था, पर उसने बसंती दादी को जीवन भर रुलाया था।

आज बसंती दादी का पार्थिव शरीर पंचतत्त्व में विलीन हो गया। ग्रामीण-जनों की प्रिय बसंती दादी अब हमेशा के लिए अदृश्य हो गईं। सभी ग्रामवासी श्मशान में बसंती दादी के मृदुल-वात्सल्य की चर्चा कर रहे थे। ऐसा लग रहा था कि चिता के बीच से बसंती दादी की छवि बनकर कह रही हो—'मैं हमेशा तुम्हारे ही साथ रहूँगी, मेरा आशीर्वाद तुम्हारे साथ रहेगा।'

गुप्ता सदन
एस.बी.के. गर्ल्स हा. सेकेंडरी स्कूल के पास
मंडी अटलबंद, भरतपुर-३२१००१ (राज.)
दूरभाष : ९९८३४०९४५४

प्रेत

मूल : **अंतोन चेखव**

अनुवाद : **वल्लभ सिद्धार्थ**

''हे... कौन है?'' संतरी ने आवाज दी।

लेकिन धुंध, हवा और पेड़ों की सरसराहट के बीच वह साफ सुन सकता था कि कोई सामने से जा रहा है। मार्च की रात हमेशा की तरह बदरीली और कोहरीली थी।

''कौन है?'' उसने फिर आवाज दी और लगा जैसे उसने कानाफूसिया या दबी हुई हँसी सुनी हो।

''यह मैं हूँ।'' एक काँपती और बूढ़ी आवाज ने जवाब दिया।

''मैं कौन?''

''एक राहगीर···''

''राहगीर से तुम्हारा मतलब?'' अपना भय दिखाने के लिए संतरी ने चिल्लाकर कहा, ''रात में कब्रगाह में किसलिए घूम रहे हो?''

''ओह! नहीं प्यारे भाई, मुझे कुछ नहीं दिखता, ईश्वर मेरी आत्मा को शांति दे।'' बूढ़े ने गहरी साँस ली, ''अँधेरा इतना गहरा है, क्या यह कब्रगाह है?''

''कब्रगाह नहीं तो और क्या है?''

''··· ?''

''तुम कौन हो?''

''एक घुमंतू तीर्थयात्री।''

''बहुत अच्छे! दिन को पीते हो, रात को कब्रगाह में घूमते हो, बुरा हो तुम्हारा।''

बूढ़े के खाँसने और आवाज से संतरी का भय दूर हो गया।

''तुम अकेले नहीं, तुम्हारे साथ दो-तीन लोग और हैं।''

''एकदम अकेला, ईश्वर हम पर दया करे।''

संतरी उछलकर उसके पास पहुँचा—''तुम अंदर कैसे आए? क्या बाड़ फाँदकर?''

''मैं रास्ता भूल गया, मुझे मित्री की चक्की पर जाना है।''

''क्या यह मित्री की चक्की पर जाने का रास्ता है? बेवकूफ, उसका रास्ता बाईं ओर से है, जो तुम्हें कस्बे से ही पकड़ लेना था। फिजूल तीन मील का चक्कर लगाया। लगता है, अब भी पिये हो।''

''बिल्कुल पी थी, अब किस रास्ते से जाना चाहिए?''

''दीवार के साथ नाक की सीध में चले जाओ। दीवार खत्म होने पर बाएँ मुड़ना। कब्रगाह पार करो, फाटक खोलो और हाई रोड पर

जाने-माने कहानीकार-उपन्यासकार एवं अनुवादक। प्रमुख रचनाओं में 'शेष प्रसंग', 'नित्य प्रलय', 'दुसारे पर', 'कठघरे' तथा अनेक शिक्षाप्रद जीवनियाँ। अनुवाद कार्य में दक्षता तथा अनेक पुस्तकों का अनुवाद।

पहुँचो, वहाँ से सीधे मित्री की चक्की पर। और हाँ, किसी गड्ढे में मत गिर पड़ना।''

''ईश्वर तुम्हारी सेहत सलामत रखे। माँ मरियम तुम्हें आशीष दे। क्या मेरे साथ गेट तक चल सकते हो? मुझ पर दया करो।''

''तुम्हें लगता है, मेरे पास फालतू समय है। अकेले जाओ।''

''मेहरबानी करो, मुझे कुछ नहीं सूझता। मैं हर रात तुम्हारे लिए प्रार्थना करूँगा।''

''मेरे पास समय नहीं। अगर सबके साथ यह करने लगूँ तो नौकरी से निकाल दिया जाऊँगा।''

''ईसू से प्रेम की खातिर। सच, मुझे दिखाई नहीं देता। इसके अलावा कब्रगाह में अकेले डर लगता है।''

''मेरे लिए एक सिरदर्द··· ! अच्छा चलो।''

□

दोनों साथ-साथ चलने लगे, दोनों कंधे-से-कंधा मिलाकर बिना कुछ बोले चल रहे थे। बर्फानी हवा का एक झोंका, अदृश्य पेड़ों की सरसराहट···वे बड़ी-बड़ी बूँदों में भीगने लगे। पूरा रास्ता पानी से भर गया।

''एक बात मुझे हैरान करती है, तुम अंदर कैसे आए! गेट पर ताला पड़ा है। दीवार फाँदकर क्या?''

''ऐसा हो सकता है? मैं खुद नहीं जानता कैसे? मुझ पर शैतान सवार था। ईश्वर ने मुझे सजा दी। तुम यहाँ के दयालु संतरी हो?''

''हाँ।''

''पूरी कब्रगाह की चौकसी के लिए?''

''नहीं, हम तीन लोग हैं। एक बीमार है, दूसरा सो रहा है। हम बारी-बारी से ड्यूटी देते हैं।''

''समझा, हे ईश्वर! अंधड़ कैसा जंगली जानवर की तरह चिंघाड़

रहा है।''

''और तुम कहाँ से आए हो?''

''बहुत दूर···बोलोग्ना से तीर्थस्थानों के दर्शन करता और नेक लोगों के लिए प्रार्थना करता हूँ। हे ईश्वर! हम पर दया कर।''

संतरी अपना पाइप जलाने के लिए रुका। पल भर के लिए तीली की हिलती हुई रोशनी में एक कब्र का सफेद पत्थर और उसपर उकेरा हुआ देवदूत एवं काला क्रॉस दिखा।

''हमारे प्रियजन गहरी नींद में सो रहे हैं।'' अजनबी ने गहरी साँस लेते हुए कहा, ''अमीर और गरीब, बुद्धिमान और मूर्ख सब चैन से सो रहे हैं, तुरही बजने तक सोते रहेंगे और सभी स्वर्ग जाएँगे।''

''अभी हम यहाँ चल रहे हैं। पर समय आने पर हम भी अपनी कब्र में लेटे होंगे।''

''बहुत सही! ऐसा कोई नहीं, जो मरे नहीं। हम सभी पापी हैं, हमारे कर्म बुरे हैं। मैं पाप में डूबा हुआ हूँ, धरती पर बोझ हूँ।''

''तो भी तुम्हें एक दिन मरना पड़ेगा।''

''मैं नहीं जानता।''

''तीथयात्रियों के लिए मरना हम जैसों से आसान है।''

''तीर्थयात्री दो तरह के होते हैं, पहले ईश्वर से डरनेवाले; जो अपनी आत्मा की फिक्र करते हैं। तुम्हारी भेंट ऐसे किसी तीर्थयात्री से भी हो सकती है, जो तुम्हारे सिर पर कुल्हाड़ी चला सकता है।''

''मुझे ऐसी डरावनी बातें क्यों सुनाते हो?''

''सिर्फ बतियाने के लिए, गेट आ गया है, ताला खोलो।''

संतरी ने ताला खोला और अजनबी को बाँह पकड़कर बाहर निकाला।

''कब्रगाह खत्म। अब सीधे मुख्य सड़क पर पहुँचो और चलते रहो, जब तक मित्री की चक्की न आ जाए।''

''प्यारे भाई, अब मित्री की चक्की पर जाने की जरूरत नहीं। वहाँ किसलिए जाना?''

''मैं तुम्हारे साथ यहीं कुछ देर रुकूँगा।''

''किसलिए?''

''तुम्हारे साथ आनंद आ रहा है।''

''मैं कोई मसखरा हूँ? तुम ऐसे तीर्थयात्री हो, जो मजाक पसंद करता है।''

''बिल्कुल करता हूँ।'' अजनबी ने कहा।

''और तुम, प्यारे भाई, मुझे लंबे अरसे तक याद रखोगे।''

''भला किसलिए याद रखूँगा?''

''क्योंकि मैंने तुम्हें बड़ी चालाकी से बंदर बनाया। क्या तुम मुझे तीर्थयात्री नहीं समझते हो? नहीं, बिल्कुल नहीं।''

''तो कौन हो?''

''एक प्रेत। मैं अभी-अभी अपनी कब्र से निकला हूँ। गुलारोव को याद करो, नल जोड़नेवाला मिस्त्री, जिसने फाँसी लगा ली थी। मैं उसी गुलारोव का प्रेत हूँ।''

''कोई और किस्सा कहो।''

संतरी ने उसका विश्वास नहीं किया, पर डर गया। एक कदम पीछे हटा और गेट की ओर भागने की कोशिश की।

''कहाँ भाग रहे हो? रुको।'' अजनबी ने उसका हाथ पकड़ते हुए कहा, ''तुम अकेले हो, तुम मुझे अकेला नहीं छोड़ सकते।''

''मुझे जाने दो।'' हाथ छुड़ाते हुए संतरी चीखा।

''जब मैं कहूँ कि खड़े रहो तो खड़े रहो। अगर जिंदा रहना चाहता है तो चुपचाप खड़ा रह कुत्ते! मैं इस समय खून नहीं बहाना चाहता, वरना कभी का काम तमाम कर देता। चुपचाप खड़ा रह।''

संतरी के घुटने काँप रहे थे, उसने पूरी ताकत से फेंस को पकड़ लिया और चिल्लाने की कोशिश की। लेकिन जानता था, उसकी आवाज किसी के मकान में नहीं पहुँचेगी। कुछ मिनट सन्नाटे में गुजरे। एक बीमार पड़ा है, दूसरा सो रहा है और तीसरा एक तीर्थयात्री को गेट पर पहुँचा रहा है। अजनबी ने बड़बड़ाकर कहा, ''बढ़िया! और इसके लिए तुम्हें वेतन मिला है। ओह नहीं, प्यारे भाई! चोर संतरियों से हमेशा ज्यादा चालाक होते हैं। चुपचाप खड़े रहो, हिलो मत।''

पाँच या दस मिनट यों ही गुजरे, एकाएक हवा को चीरती हुई एक तेज जफील की आवाज आई।

''अब जा सकते हो।'' अजनबी ने संतरी का हाथ छोड़ते हुए कहा, ''ईश्वर को धन्यवाद दो कि तुम जिंदा हो।''

अजनबी ने भी एक तेज जफील बजाई और संतरी को छोड़कर गेट की ओर भागा। भय से थरथराते हुए संतरी ने गेट खोला और आँखें मूँदकर बाहर भागा। तभी उसे तेज कदमों की आहटें और फुसफुसाहट सुनाई पड़ी।

''क्या तुम हो त्रिकोन? मिटका कहाँ है?''

□

जब संतरी मुख्य सड़क से काफी दूर निकल गया तो उसने अँधेरे में टिमटिमाती हुई एक मद्धिम रोशनी देखी। वह रोशनी के जितने करीब पहुँच रहा था, उसका भय उतना ही बढ़ता जा रहा था। और किसी वारदात के होने की आशंका बढ़ती जा रही थी।

''लगता है, रोशनी चर्च के अंदर है। ईसूमाता मरियम मुझे माफ करें, मैं इसी से डर रहा था।''

एक मिनट बाद वह चर्च की टूटी खिड़की के पास खड़ा चर्च के दालान को देख रहा था। एक पतली मोमबत्ती, जिसे चोर बुझाना भूल गए थे, हवा के झोंकों में टिमटिमा रही थी। पूजागृह में एक टूटा हुआ बक्सा औंधा पड़ा था, इधर-उधर सामान बिखरा पड़ा था। कम्युनियन टेबल के पास अनगिन पैरों के निशान छूटे हुए थे।

कुछ मिनट गुजरे, फिर चर्च में खतरे की घंटी बज उठी, जिसे हहराती हुई हवा कब्रगाह के पार ले गई।

मऊरानीपुर, झाँसी (उ.प्र.)
दूरभाष : ०७६०७०३८५६२

ललित निबंध

वसंत फिर आ गया

● हेमराज मीणा दिवाकर

हर वर्ष की तरह वसंत फिर आनेवाला है। वसंत के आगमन का आभास खेतों में खिले सरसों के पीले फूलों से होता है। वसंत ऋतु-महोत्सव के अवसर पर हम बच्चे अपनी सफेद कमीज को हलदी से रँगकर पहनकर स्कूल जाते थे। पूरे विद्यालय का वातावरण वसंतमय बना प्रफुल्लित नजर आता था। वाग्देवी माँ सरस्वती के चित्र पर हम बच्चे हजारे के पीले फूलों की माला चढ़ाया करते थे। ज्ञानी और विद्वान् बनने की प्रार्थना करते थे। धन से अधिक ज्ञान को सम्मान देते थे। धनवान् से ज्यादा विद्वान् व्यक्ति के प्रति सम्मान का भाव अपने मन में रखते थे। हमारे संस्कृत पढ़ानेवाले गुरुदेव ने सिखाया था कि धनी व्यक्ति का सम्मान केवल अपने गाँव, नगर या क्षेत्र में ही होता है, किंतु विद्वान् व्यक्ति की पूजा सारे संसार में होती है। धन को चोर चुरा सकता है, डाकू लूट सकता है, किंतु ज्ञान को चोर चुरा नहीं सकता, डाकू लूट नहीं सकता है। अत: धन से बड़ी विद्या है। हम स्कूली बच्चे प्रतिदिन ज्ञान की देवी सरस्वती की प्रार्थना ही गाया करते थे—'जयती-जय जय माँ सरस्वती। जयती वीणा धारिणी॥'

या महाकवि पं. सूर्यकांत त्रिपाठी निराला द्वारा रचित 'वर दे वीणा वादिनी!' गाया करते थे। देखते-देखते समय कितना बदल गया है। अब हम ज्ञान की नहीं, धन की उपासना में जुट गए हैं। धन की शक्ति के आगे ज्ञान की शक्ति कमजोर हो गई है। धन का संबंध सत्ता और शक्ति से है। किंतु ज्ञान का संबंध गहन साधना, चिंतन, मनन और मंथन से है। ज्ञान का पथ अत्यंत कठिन तथा दुर्गम है, जबकि धन का पथ कुछ सहज है। छल और छद्म से धन पाया जा सकता है, किंतु ज्ञान निर्मल मन, विनम्रता और जिज्ञासा से ही प्राप्त किया जा सकता है। आजकल मान्यता, मत, धर्म, संप्रदाय की दीवारों के बीच वसंत भी सकुचा गया है। अब हमारा ज्ञान तमाम प्रकार के संप्रदायों से घिर चुका है। हम जरूरत से ज्यादा जातिवादी, क्षेत्रवादी बन गए हैं। बाल की खाल निकालने में माहिर हो गए हैं। हमारे पर्व, त्योहार, महोत्सव राजनीति और जातिवाद के रंग में रँग दिए गए हैं। असल में हमें बड़ा बनना था, पर हम छोटे हो गए हैं। हम और हमारा मन बौना बन गया है। हमारी सीमाएँ भी संकुचित हो गई हैं।

विस्तार और व्यापकता विलुप्त हो गई है। हमारा आकाश अब टुकड़ों में बँट चुका है। अपार विस्तार का गीत गानेवाले डॉ. भूपेन हजारिका भी अब हमारे बीच नहीं हैं। प्रतीक रूप में ही सही, पर ज्ञान की देवी की परिकल्पना मात्र से हमारे सोए हुए आत्मविश्वास को मारा जा रहा है। रंगों की दुनिया भी धार्मिक बन गई है। वैराग्य का प्रतीक, भारतीय ऋषि-परंपरा का द्योतक भगवा रंग आज कितना अर्थहीन और संकुचित बन गया है। रंग के ठेकेदारों ने रंगों की आभा को छीन लिया है। इन दिनों अर्थात् पाँच दशक बाद हम वाग्देवी सरस्वती को इतना भूल जाएँगे, सोचा भी न था। ज्ञान का महोत्सव भी कट्टरपंथी सोच के सामने अर्थहीन बना दिया गया है।

वसंत का आगमन प्रकृति का धर्म है, प्रकृति ने अभी अपना धर्म नहीं त्यागा है। वसंत आता रहा है। वसंत आता रहेगा। जब तक धरती पर एक भी बीज और फूल जिंदा है, तब तक वसंत अपने आगमन का बोध कराता रहेगा। आम के पेड़ों पर बौर आता रहेगा, भ्रमर मधुसंचय करते रहेंगे। सरसों के सहस्रों खेतों में मधुमक्खियाँ मधुसंचय कर हमें मिठास देती रहेंगी। सरसों के खेतों में छाया पीलापन हमारी आँखों में सौंदर्यबोध जगाता रहेगा। प्रकृति के इस सौंदर्य-जागरण के मध्य हर वसंत में मुझे ललित निबंध लिखने का अवसर मिलता रहेगा। मैं वसंत पर लिखे ललित गद्य की आनंदानुभूति से अपने को समृद्ध करता रहूँगा और आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, कुबेरनाथ राय तथा गुरुवर्य ललित निबंधकार डॉ. विद्यानिवास मिश्र का पुण्य स्मरण करता रहूँगा।

वसंत है तो कोयल भी है। वसंत है तो फूलों के नन्हे पौधे हैं और नन्हे पौधे हैं तो नन्हे बच्चे हैं। फूलों का हँसना अर्थात् खिलना ईश्वरत्व से साक्षात्कार है। वसंत हमें अपने से, अपने मन से, अपनी आत्मा से भी मिलाता है। अपने खोए मन से हमारा साक्षात्कार कराता है। वसंत जीने की, आगे बढ़ने की, खिलते रहने की प्रेरणा देता है। वसंत कबीर के ढाई आखर की भी याद दिलाता है। वसंत भीतर छुपी हुई कविता को जगाता है और जब कविता पैदा होती है, तब वसंत राग अमर हो जाता है। वसंत का स्मरण मात्र आत्मा की जीवन-ज्योति को जगा देता है। इसीलिए वसंत को ऋतुराज कहा जाता है।

वसंत के आगमन के साथ ही रसराज आम्र का बीजारोपण आम्र वृक्ष पर बौर के आने से हो जाता है। ऋतुराज वसंत ही रसराज आम्र फल देने की क्षमता रखता है। जो प्रकृति सँवारने की सामर्थ्य रखता है, वही फलों में मीठापन भर सकता है। हम प्रकृति एवं प्रकृति के परिवर्तन को भूलते जा रहे हैं, क्योंकि हम हर दिन प्रकृति से दूर होते जा रहे हैं। जो प्रकृति को जानता है, वही वसंत को जानता है। वसंत मौन रहकर भी हमें स्फूर्ति देता है। हमारी वाणी का वसंत भी हमारे भीतर हिलोर नहीं भरता, क्योंकि कृत्रिम और अर्थहीन जीवन से वाणी की मधुरता गायब हो गई है। फिर भी वसंत हर बार आता रहेगा और गुलाब भेंट कर काँटों को धन्यवाद देता रहेगा।

साअ

क्षेत्रीय निदेशक, केंद्रीय हिंदी संस्थान
गुवाहाटी केंद्र (असम)

पत्थर

● लवलेश दत्त

''अभी और कितना चलना है?''

''अभी तो चढ़ाई शुरू हुई है। अभी बहुत दूर है। पूरे चौदह किलोमीटर है। अभी तो केवल आधा किलोमीटर ही चढ़े हैं। क्या थक गईं?''

''हाँ, चलो, कोई बात नहीं, तुम साथ हो तो सारी जिंदगी ऐसे ही चल सकती हूँ।'' कहकर हाँफते हुए नेहा ने सुशील का हाथ थाम लिया। सुशील भी उसे अपने पास खींचकर उसकी कमर में हाथ डालकर आगे बढ़ने लगा।

सुशील और नेहा के विवाह को आठ साल हो चुके थे, लेकिन उनके कोई संतान नहीं हुई। बहुत इलाज करवाया। तंत्र-मंत्र-यंत्र सभी आजमाकर देख लिये, लेकिन कुछ फायदा नहीं हुआ। उस दिन रमा मौसी ने बातों-बातों में बताया कि उनके जेठ के बेटे चंदन की बहू को शादी के दस साल बाद पिछले महीने लड़का हुआ है। यह सुनकर नेहा ने उत्सुकता से पूछा, ''अच्छा मौसी! किसका इलाज करवाया?'' मौसी ने हँसते हुए कहा, ''इलाज तो बहुतेरा करवाया था, लेकिन सब बेकार। बेचारे दोनों मियाँ-बीवी मायूस हो चुके थे और एक बच्चा गोद लेने की तैयारी कर रहे थे कि तभी हमारे पारिवारिक गुरु स्वामी सत्यानंद सरस्वती का घर आना हुआ। जेठजी ने उनके सामने बच्चा गोद लेने की बात कह दी। स्वामीजी ने उसे नेक काम बताया; लेकिन साथ-ही-साथ यह भी कहा, ऐसी मान्यता है कि जो कोई मन में जिस किसी भी कार्य का संकल्प लेकर बाबा केदारनाथ के तीन साल लगातार दर्शन करता है, बाबा उसकी मनोकामना अवश्य पूरी करते हैं। अगर चंदन चाहे तो यह भी करके देख ले। बस चंदन और उसकी बहू तीसरी बार दर्शन करके घर आए थे कि दो ही महीने में उसने खुशखबरी दे दी और पिछले महीने लड़का हो गया। अब तो जेठजी खुशी के मारे फूले नहीं समा रहे हैं।''

रात में नेहा ने सुशील को रमा मौसी की कही हुई सारी बातें बताईं। पहले तो सुशील ने मना किया, लेकिन नेहा का मन और विश्वास देखते हुए उसने 'हाँ' कर दी और कहा, ''मन छोटा मत करो। इस बार कपाट खुलते ही हम चलेंगे।''

''कब खुलते हैं कपाट?'' नेहा ने झट पूछा।

''अक्षय तृतीया पर, इस साल २६ अप्रैल को है, तभी चलेंगे।'' सुशील ने नेहा को आश्वस्त करते हुए अपनी बाँहों में भर लिया।

यह सुशील और नेहा की केदारनाथ की तीसरी यात्रा थी। नेहा के बीमार होने के कारण इस बार कपाट खुलने के अवसर पर नहीं जा पाए थे। अत: इस वर्ष दोनों ने जून माह में केदारनाथ की यात्रा की योजना बनाई। शाम का समय था। अस्तगामी सूर्य की किरणों से लाल-लाल लगते बर्फ का आवरण ओढ़े तटस्थ और शांत पहाड़ किसी तपस्वी की भाँति शिवाराधना में लीन हर आने-जानेवाले का मन मोह रहे थे। 'बम-बम भोले' का उद्घोष करते श्रद्धालु एक-एक कदम बढ़ते जा रहे थे। ठंडी हवा से शरीर में सिहरन पैदा हो रही थी। सुशील ने नेहा को अपनी जैकेट पहना दी। ''अरे, ठंड बहुत है।'' ''और आप···'' कहते हुए नेहा ने जैकेट सुशील को वापस कर दी। ''चलते रहने से शरीर में गरमी पैदा हो रही है और ठंड का एहसास नहीं हो रहा,'' कहते हुए सुशील ने पूछा, ''कुछ चाय-वाय लोगी?'' ''हम्म···'' कहकर नेहा पास ही पड़े एक पत्थर पर बैठ गई। उसकी साँसें तेज चल रही थीं। ''क्या हुआ, बहुत थक गईं? अच्छा थोड़ा सुस्ता लो, मैं चाय लाता हूँ।'' कहकर सुशील सामने की दुकान पर चाय का ऑर्डर देने चला गया। सामने बैठी नेहा के पार्श्व में सुंदर झरना देख सुशील उसके फोटो लेने लगा। नेहा भी उसे अलग-अलग पोज दे रही थी, तभी चायवाले ने दो चाय लाकर उसे दीं। वहीं पत्थर पर बैठकर दोनों चाय पीने लगे।

''एक बात कहूँ?'' नेहा ने सुशील से कहा, ''हमारी शादी को आठ साल से भी ज्यादा हो गए हैं, लेकिन आज भी तुम पहले की तरह कोई भी बात कहने से पहले यह जरूर कहती हो, 'एक बात कहूँ' अरे! कह दिया करो, जो मन में आए। अच्छा बताओ, क्या है?'' सुशील ने हँसते हुए कहा।

''यह हमारी तीसरी यात्रा है न?'' नेहा ने पूछा।

''हाँ, तो···'' चाय का घूँट निगलते हुए सुशील ने कहा।

''इस यात्रा के बाद तो'' शरमाते हुए नेहा ने सुशील से नजरें हटा लीं।

सुपरिचित कवि-कहानीकार। अब तक 'भावत्रयी', 'तमन्ना', 'सपना', 'श्यामा' (कहानी-संग्रह) तथा विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। आकाशवाणी रामपुर से कहानी वाचन एवं प्रसारण। लखनऊ में 'बोल्ट अवार्ड', 'विद्यासागर सम्मान', वाराणसी के साहित्यिक संघ द्वारा 'साहित्यश्री सम्मान'। संप्रति अध्यापन एवं स्वतंत्र लेखन।

''ओफ्फो···तो मैडमजी यह सोच रही हैं कि तीसरी यात्रा होने के बाद आपकी गोद में शिवजी का प्रसाद आ जाएगा। हा-हा-हा···'' सुशील ने जोरदार ठहाका लगाया।

नेहा का चेहरा शर्म से लाल हो गया, ''जी नहीं!''

''तो फिर क्या है, यही संकल्प करके तो हमने अब तक की दोनों यात्राएँ की हैं। क्या इसके अलावा भी कुछ है?'' सुशील अभी तक हँस रहा था।

नेहा ने हलके से सुशील की पीठ पर कोहनी मारते हुए कहा, ''जी नहीं! प्रसाद आ नहीं जाएगा, बल्कि आ गया है।'' कहकर नेहा उठकर आगे बढ़ गई। सुशील खुशी और आश्चर्य से भर गया, ''क्या··· ? अरे, सुनो तो स्वीटहार्ट! तुमने तो खुश कर दिया, सच कहो···''

नेहा तेज-तेज कदम बढ़ाते हुए आगे बढ़ रही थी और सुशील ने उसे पीछे से पकड़ लिया, ''ओह स्वीटी! तुमने तो···''

''क्या है, छोड़िए न! सब देख रहे हैं।'' नेहा ने उसे पीछे ठेलते हुए कहा।

आने-जानेवाले लोग उन्हें देखकर हँसते हुए चल रहे थे।

''कब से, बताओ तो?'' सुशील ने नेहा का हाथ थामते हुए कहा।

''तीसरा महीना है।'' नीची नजर से कहते हुए नेहा ने सुशील के कंधे पर सिर रख लिया। सचमुच बाबा केदारनाथ की महिमा अपार है। अभी तो तीसरी यात्रा पूरी भी नहीं हुई और सुशील भावुक हो उठा, ''बोलो, बाबा केदारनाथ की'' ''जय···'' उनके साथ चलनेवाले सभी यात्रियों ने जयकारा लगा दिया। दुगुने उत्साह से दोनों आगे बढ़ने लगे।

सूर्यास्त हो चुका था और मार्ग धीरे-धीरे अँधेरे में विलीन होने लगा था। बिजली की चमक से रास्ता दिखाई दे रहा था। मौसम बिगड़ने लगा और बादल लगातार गरज रहे थे। हलकी-हलकी बूँदाबाँदी भी रुक-रुककर हो रही थी। दोनों चलते-चलते निढाल हो चुके थे, लेकिन मंदिर अभी भी चार किलोमीटर दूर था। ''अब नहीं चला जा रहा।'' नेहा ने एक बड़े से पत्थर को काटकर बनी बेंच पर बैठते हुए कहा और अपनी शॉल को अपने से अलग करते हुए हाँफने लगी, ''थोड़ा···पा··· नी···दीजिए।'' सुशील भी उसी बेंच पर बैठ चुका था। नेहा की बात सुनकर पीठ से पिट्ठू उतारते हुए पानी की बोतल निकालने लगा, ''सच में यार, इस बार तो बहुत थकावट हो रही है, मौसम भी खराब हो रहा है। देखो, बिजली चमक रही है।''

नेहा ने पानी पीते हुए आसमान की ओर देखा, ''हाँ, मौसम तो बहुत खराब हो रहा है। अभी तो चार किलोमीटर और जाना है, हम पहुँच तो जाएँगे न?''

''हाँ, भगवान् चाहेंगे तो जरूर पहुँचेंगे। आओ, धीरे-धीरे आगे बढ़ते रहें।'' कहकर सुशील ने नेहा का हाथ पकड़कर उसे उठाया तथा दोनों भारी कदमों से आगे बढ़ने लगे कि आसमान में बहुत जोर की बिजली चमकी और एक भयानक शोर हुआ, मानो कहीं कोई पहाड़ टूटा हो। दोनों एकदम चौंक गए और डर के मारे किनारे पड़ी एक बड़ी सी चट्टान के सहारे खड़े हो गए।

नेहा ने घबराकर सुशील को कसकर पकड़ लिया, ''हे भगवान्! क्या हो रहा है यह?'' अब तो सुशील भी घबराने लगा था। नेहा को कसकर पकड़ते हुए उसने कहा, ''लगता है, प्रलय आएगी। अब आगे बढ़ना ठीक नहीं होगा। चलो, यहीं बैठ जाते हैं।'' दोनों वहीं चट्टान के किनारे बैठ गए। उनको बैठे हुए अभी दस मिनट ही हुए होंगे कि एकदम बारिश शुरू हो गई। बहुत तेज पानी की धारा ऊपर से आने लगी। उधर मंदाकिनी नदी का जल-स्तर भी एकाएक बढ़ने लगा। सुशील ने घबराकर कहा, ''नेहा, लगता है, कोई बड़ी मुसीबत आनेवाली है। अब तो बिल्कुल भी आगे नहीं जाना चाहिए। बस जैसे-तैसे रात कट जाए, सुबह पता चलेगा कि हालात क्या हैं? तभी सोचेंगे···''

सुशील अपनी बात पूरी नहीं कर पाया था कि 'भागो-भागो, बचाओ-बचाओ' का बहुत भयानक शोर सुनाई दिया। अँधेरे की वजह से कुछ दिखाई नहीं दे रहा था, लेकिन भयानक शोर से किसी अनहोनी का अँदेशा लग रहा था। नेहा और सुशील तुरंत खड़े हो गए। इधर-उधर देखने की कोशिश की, लेकिन अँधेरे की वजह से कुछ पता नहीं चल रहा था। सुशील ने अपने बैग से टॉर्च निकाली और दृश्य को देखते हुए उनके रोंगटे खड़े हो गए। देखा कि बहुत से लोग तेजी से बहते हुए पानी के साथ फिसलते-गिरते और बहते हुए ऊपर की तरफ से लुढ़कर नीचे आ रहे हैं। सुशील ने तुरंत नेहा को चट्टान को कसकर पकड़ने के लिए कहा और खुद भी नेहा के ऊपर से चट्टान से चिपक गया। दो ही मिनट में ऊपर से बहकर आते मलबे ने उनके पैरों को जकड़ लिया। मलबे के चिकनेपन की वजह से दोनों के पैर बार-बार फिसल रहे थे। सुशील जैसे-तैसे खुद को और नेहा को सँभाले हुए था। लोगों के बहकर आने और मलबे में दबने के कारण दोनों बहुत बुरी तरह डरे हुए थे।

अभी तीन घंटे पहले जिस सुंदर प्रकृति का आकर्षण लोगों को अपनी ओर खींच रहा था, वही अब विकराल रूप धारण कर मौत का भयानक खेल उनके सामने शुरू कर चुकी थी। सुशील और नेहा के घुटनों तक मलबा आ चुका था। सुशील और नेहा कई बार फिसलने से बचे। दोनों के पैर बुरी तरह मलबे में जकड़ चुके थे। सुशील लगातार नेहा से कसकर पकड़े रहने के लिए कह रहा था, ''नेहा, छोड़ना मत, कसककर पकड़े रहना, जरा सा भी हाथ छूटा नहीं कि हम दोनों···'' नेहा ने झट से सुशील को कसकर पकड़ लिया और बुदबुदाई, ''हे भोलेनाथ! हम पर कृपा करो।'' उसकी आँखों में आँसू आ गए। सुशील की आँखें भी नम हो रही थीं। भयानक चीखें रोम-रोम में भय पैदा कर रही थीं।

उधर मंदाकिनी भी उफान पर थी। सैकड़ों फीट गहरी खाई में पानी इतना भर चुका था कि आस-पास के विशालकाय पत्थर उसमें डूबने लगे थे। मंदाकिनी की गर्जना और उसमें ऊपर से बहकर आते पत्थरों के टकराने से होनेवाली धड़ाम-धड़ाम की आवाज दिल को बैठाए दे रही थी। इधर लगातार कीचड़-मिट्टी और पत्थरों से बना मलबा बह रहा था, जो अपने साथ लोगों को भी बहाकर लिये जा रहा था। उस भयानक अँधेरी रात में कुछ भी नहीं दिख रहा था, बस कभी 'मम्मी बचाओ', कभी 'बेटा बचाओ' तो कभी 'हे भगवान्! बचाओ' की आवाज ने नेहा

और सुशील को रोने पर मजबूर कर दिया। दोनों एक-दूसरे को कसकर पकड़े हुए थे।

सुशील ने नेहा से कहा, ''लगता है, हमारी मृत्यु आ गई है। अब तो भगवान् से यही प्रार्थना है कि अगर हम मरें भी तो साथ-साथ ही रहें। कहीं ऐसा न हो कि···।''

''बस करिए, प्लीज, ऐसा मत कहिए, भगवान् से प्रार्थना करिए कि हम'' कहकर नेहा जोर-जोर से रोने लगी। उन्हें हर अगला पल काल के मुख में प्रवेश करता हुआ लग रहा था। जिस चट्टान से वे चिपके खड़े थे, अचानक उससे किसी बड़े पत्थर के टकराने की आवाज आई और दोनों झटके से चट्टान से अलग हो गए; उनके पैर फिसल गए और वे दोनों भी मलबे के साथ बहने लगे। ''हे भगवान्! बचाओ'' उन के मुँह से निकला और दोनों की चीख निकल पड़ी। एक-दूसरे को कसकर पकड़े हुए दोनों बुरी तरह मलबे से लिथड़ चुके थे।

एक-दूसरे को पकड़ पाना मुश्किल हो रहा था और बार-बार हाथ फिसल रहा था। फिर भी दोनों एक-दूसरे को पकड़ने और बचाने की पूरी कोशिश कर रहे थे। उनके साथ और भी लोग थे, जो पीछे से बहकर आ रहे थे। उनमें से अधिकांश या तो बेहोश थे या मर चुके थे। क्योंकि उनके शरीर लगातार नेहा और सुशील से टकरा रहे थे, लेकिन उनसे किसी भी प्रकार की प्रतिक्रिया नहीं हो रही थी। सुशील ने खुद को नियंत्रित किया। अपने विवेक का प्रयोग करके अपना सिर ऊपर उठा लिया और नेहा से भी सिर उठाए रखने को कहा, ''नेहा, मलबे से सिर ऊपर उठाए रखना, नहीं तो यह मलबा हमारे आँख, नाक, मुँह व कान में चला जाएगा और हमारा दम घुट जाएगा। जब तक हम कोशिश कर सकते हैं; खुद को जिंदा रखेंगे। आगे भगवान्···'' इतना कहा ही था कि मलबे में फिसलते हुए सुशील का पैर एक पत्थर पर टिक गया। सुशील ने तुरंत पत्थर पर पैर टिकाकर नेहा को अपने पास खींचा और जैसे-तैसे उस पत्थर से टिककर बैठ गया।

नेहा उसकी गोद में अर्धमूर्च्छित अवस्था में पड़ी थी। सुशील ने उसके गाल को थपथपाया, ''नेहा···नेहा···देखो डार्लिंग! हम अभी तक जिंदा हैं, हम। हम-बच गए···'' सुशील बुरी तरह हाँफ रहा था।

''अँ···ऊँ···अँ···'' बेसुध नेहा सिर्फ इतना ही बोल पा रही थी। सुशील ने उसे गले से लगा लिया और पत्थर पर पीछे सिर करके अपनी साँसों को नियंत्रित करने की कोशिश करने लगा। धीरे-धीरे पूरे वातावरण में शिथिलता आने लगी और सुशील की आँख भी लग गई। सुबह का दृश्य देखते ही मानो दिल के दो टुकड़े हो गए। दृश्य अत्यंत भयावह था। जहाँ-तहाँ लोगों के शव मलबे में दबे हुए थे। किसी का हाथ मलबे से बाहर था तो किसी का सिर। किसी की टाँगें तो किसी की पीठ। इनसान के वेश में कुछ जानवर भी उस मलबे में दबे लोगों की जेबें टटोल रहे थे। कोई बचाव-कार्य का बहाना बनाकर मरे हुए या बेहोश यात्रियों के बैग खोल रहा था तो कोई महिला के हाथों-कानों में पड़े आभूषण नोच रहा था। लूटने-खसोटने के क्रम में अचानक किसी का हाथ नेहा के कुंडल पर पड़ा तो वह एकदम होश में आकर चीख पड़ी। उसके चीखते ही सुशील की आँख खुल गई, लुटेरा नेहा का कुंडल वहीं फेंककर भाग गया और आगे जाकर गिर पड़ा। बचाव दल और सेना के लोग राहत-कार्य में जुटे थे। उन्होंने तुरंत उस लुटेरे को अपनी गिरफ्त में ले लिया। इतने में सुशील पूरी ताकत से उठ खड़ा हुआ और सेना के जवान को अपनी ओर बुलाया। जवान ने उसे और नेहा को वहाँ से सुरक्षित निकाल लिया। और ऊपर की ओर ले जाकर बैठाते हुए कहा कि अभी हैलीकॉप्टर के आते ही आपको नीचे पहुँचा दिया जाएगा।

सुबह का दृश्य देखते ही मानो दिल के दो टुकड़े हो गए। दृश्य अत्यंत भयावह था। जहाँ-तहाँ लोगों के शव मलबे में दबे हुए थे। किसी का हाथ मलबे से बाहर था तो किसी का सिर। किसी की टाँगें तो किसी की पीठ। इनसान के वेश में कुछ जानवर भी उस मलबे में दबे लोगों की जेबें टटोल रहे थे। कोई बचाव-कार्य का बहाना बनाकर मरे हुए या बेहोश यात्रियों के बैग खोल रहा था तो कोई महिला के हाथों-कानों में पड़े आभूषण नोच रहा था। लूटने-खसोटने के क्रम में अचानक किसी का हाथ नेहा के कुंडल पर पड़ा तो वह एकदम होश में आकर चीख पड़ी। उसके चीखते ही सुशील की आँख खुल गई, लुटेरा नेहा का कुंडल वहीं फेंककर भाग गया और आगे जाकर गिर पड़ा।

सुशील और नेहा ने राहत की साँस ली। वहाँ पहले से ही मौजूद लोग रात की घटना के बारे में आपस में बात कर रहे थे। कोई कह रहा था कि 'केदारनाथ मंदिर से तीन किलोमीटर ऊपर तालाब में ग्लेशियर टूटकर गिरने से यह आपदा आई। यह तो अच्छा हुआ कि एक बहुत बड़ा पत्थर मंदिर के ठीक पीछे आकर रुक गया, जिससे मलबे और पत्थरों से भरी बाढ़ से मंदिर को कोई नुकसान नहीं हुआ। सुना है कि वह पत्थर भगवान् शिव के डमरू के आकार का है, जिसने उस मंदिर की रक्षा की। धन्य है, भगवान् की माया! कौन कहता है, पत्थर में भगवान् नहीं होता?'

सुशील और नेहा ने एक-दूसरे की ओर देखा कि तभी हैलीकॉप्टर की आवाज आने लगी। हैलीकॉप्टर में चढ़ते समय नेहा और सुशील ने नीचे पड़े उस पत्थर की ओर मुड़कर देखा, जिसने रात भर उनको अपने ऊपर टिकाए रखा था। उनके मन में तरह-तरह के विचार उठ रहे थे, जिसमें एक विचार यह भी था कि अब जीवन में कभी इस ओर पलटकर नहीं आएँगे और न ही किसी को आने देंगे। लेकिन न जाने क्यों, उस अजनबी की बातें उन्हें सही लग रही थीं कि 'पत्थर में भी भगवान् होते हैं।' बारी-बारी से सुशील और नेहा ने हैलीकॉप्टर से नीचे झाँककर एक बार फिर उस पत्थर को देखना चाहा, लेकिन इस बार उसे देखकर दोनों की आँखें न जाने क्यों नम हो आई थीं!

'शिवछाँह', १६५-ब, बुखारपुरा
पुराना शहर, बरेली (उ.प्र.)
दूरभाष : ९४१२३४५६७९

कन्नड़ देवरगुड्डों के काव्य

• बी.वाई. ललितांबा

मैं जब 'देवरगुड्डों' का काव्य कहती हूँ, विश्वास के साथ कह सकती हूँ, हिंदी के किसी व्यक्ति की समझ में यह शब्द नहीं आता। विश्वास मानिए, कन्नड़ के कई विशेषज्ञों के लिए यह शब्द अपरिचित है। जिस तरह सिर्फ शब्दों को जोड़कर वाक्य बनाने से अर्थाभिव्यक्ति नहीं होती, उसी तरह सामान्य शहराती के लिए भी यह शब्द अपरिचित ही है। 'देव' शब्द तो सामान्य रूप से कई भारतीय भाषाओं में सीधे समझ में आता है, मगर यह 'र' कन्नड़ भाषा का प्रत्यय है। 'गुड्डा' भी इसी तरह एक छोटी सी पहाड़ी या टेकरी का अर्थ देता है, मगर यह तक नामवाची संज्ञा शब्द है। इस संदर्भ में वह वाच्यार्थ नहीं देता। यह शब्द कर्नाटक के विशेष प्रांत और समुदाय में प्रचलित शब्द है। कर्नाटक के केल्लेगाल नामक प्रांत में महादेव पहाड़ी पर मले महादेव के आगे अपने आप को समर्पित करनेवाले भक्तों को दिया गया नाम है। इस कारण उन्हें देवगुड्डा ही कहा जाता है।

कर्नाटक के पेशेवर धार्मिक गायकों में कंसाले गायक अथवा देवरगुड्डों का प्रमुख स्थान है। मैसूर जिले के दक्षिण भाग में ये लोग विशेष रूप से दिखाई देते हैं। बंगलुरु, चामराज नगर और मंड्या जिले के कुछ भागों में भी हैं। कभी-कभी तमिलनाडु के चैन्नई में भी दिख जाते हैं। मले महदेश्वर के इन परमभक्तों को 'कंसाले' कहते हैं, इन्हें 'कैसाले' भी कहा जाता है।

कांस्यजाल नामक संस्कृत शब्द का कन्नड़ रूप कंसाले है। देवरगुड्डा अपने को कंसाले भी कहते हैं। कंसाले ताल को पकड़ने के लिए उस व्यक्ति का गुड्डा बनाना जरूरी होता है। कहते हैं कि मले मादेश्वर कंसाले को हाथ में लिये कारण्य भिक्षा माँगने जाया करता था। इस कारण कंसाले लोगों का यह विरुद पवित्र तथा पूजनीय है। इसी वजह से कंसाले लोग काँसे की थाली में खाना नहीं खाते और भिक्षा माँगने जाते समय या कथा वाचन करते समय वे पदत्राण नहीं पहनते। जूते पहनकर वे दुलहन को नहीं छूते। जूते पहनकर छूने को वे भयंकर अपराध मानते हैं। उनके कुल दैव या आराध्य देव महदेश्वर ही हैं।

गुड्डा का मतलब महदेश्वर का बेटा है। हो सकता है, किसी शब्दकोश में ढूँढ़ने पर आपको यह अर्थ मिले। उनकी अपनी सीमित परिधि में वह अर्थ गृहीत है। गुड्डा बनाने की परंपरा कंसाले लोगों की अपनी विशिष्टता रही है। सिक्खों में जिस तरह परिवार के एक पुरुष को सरदार की दीक्षा अनिवार्य रूप से दी जाती है, उसी तरह मले महदेश्वर के भक्तों के परिवार के एक पुरुष सदस्य को गुड्डा बना दिया जाता है, इसके अलावा भी कुछ विशेष संदर्भों में अन्य को भी गुड्डा बनाते हैं। जीवन में बुरे दिन आने पर या संतानहीनता की हालत में पहली संतान/लड़के को गुड्डा बनाने की मनौती मानते हैं। देवरगुड्डों के काव्यों के कुछ उदाहरण हैं—

ख्यातिलब्ध लेखिका। 'हिंदी भाषा, साहित्य एवं संस्कृति', 'तुलनात्मक साहित्य', 'तुलनात्मक भाषा', 'अनुवाद एवं अनुवाद कला', 'अनुप्रयुक्त भाषा एवं समाज भाषा विज्ञान' समेत लगभग पचास ग्रंथ प्रकाशित। कन्नड़ से हिंदी में अनुवाद। दो सौ से ज्यादा शोध। 'गणेशशंकर विद्यार्थी पुरस्कार' समेत लगभग दो दर्जन पुरस्कार प्राप्त।

आदिशक्ति मादप्पा की पंक्ति
आदि शक्ति कवट्ल
मलेय मादेव बरुव चंदवा
नोडे नम्म शिउना॥ सोल्लु॥

आदि पराशक्ति
भूमि सोर्ग पाताळ हुट्टुवक्मुंचे
इष्णु ब्रम्म मादेश्वर हुट्टुवक्मुंचे
मूरु जीवक्के मुंचे
आदिशक्ति हुट्टिद्दाले
बेळीता बेळीता
आकास वेणि अक्क नागिद्दाळे
अउळु पादऊरिद स्थळवे तंगियागिद्दाले।

नीलेवेणि
अत्ते इद्दरे ननगे नोडय्य
नन्न दोरेये
विद्या बुद्दि हेलुतिकु
अत्ते इक्कदे अडकविल्लड

नन्न मतिये
अत्ते इल्लद मेले फलवेनु
अत्ते मावर पाद पूजेय
नानु माडिदरे
स्वर्ण बेन्न हिंदे इरुडदु
अत्ते मानंदिरनु निंदिसि
बाकुतिद्दरे
तप्पदय्य यमर नरकउ

उस तरह पैदा होनेवाले बच्चे को गुड्डा बनाते समय एक विशेष समारोह का आयोजन करते हैं। गुड्डा पर उन्हें सिवाय उनकी शादी के और कुछ खर्च करना नहीं पड़ता। गुड्डा लोगों के भी मुखिया होते हैं। उसे 'पुरुसकारी' कहते हैं। उसके नेतृत्व में गुड्डा बनाने (छोड़ने) का कार्यक्रम संपन्न होता है। यह दीक्षाकार्य साधारणतया सोमवार के दिन मात्र संपन्न होता है। अगर संभव नहीं हुआ तो शुक्रवार के दिन भी चला लेते हैं। मादेश्वर के पहाड़ पर ही संपन्न होने पर किसी भी दिन कर लेते हैं।

सोमवार के दिन संपन्न करते समय घर-दरवाजे झाड़ू-बुहारकर साफ-सुथरा बना लेते हैं। गुड्डा बनानेवाले का कमर-पट्टी निकालकर आगे से उसके बाल काटते हैं। पूर्व दिशा की तरफ लड़के का चेहरा कर उसे बिठा-बिठाकर एक गुड़ का टुकड़ा रखकर छह केले, पान-सुपारी, पाँच पाव भर चावल, एक सिक्का, एक दुकूल रखकर पूजा कर उसे चौकोर बनाकर पूरी तरह बाल काटा जाता है, फिर सारी वस्तुएँ उसकी झोली में डालते हैं, फिर उसे नहलाते हैं।

नहाने के लिए दी जानेवाली हाँड़ी को खूब माँजकर, उसकी पूजा कर हलदी का पानी गरम कर रिश्तेदार एक-एक कर लोटा भर पानी उसे लड़के के सिर पर डालते हैं, उस तरह पानी डालते समय 'मादेव, तुम्हारे इस बच्चे की रक्षा करते रहो, उसका उद्धार करो' कहते हैं।

लड़के के नहाने के बाद उसे नए कपड़े पहनाकर भगवान् को बुला लाने निकलते हैं। मिट्टी के पाँच घड़े उठाकर कंसाले लोगों के साथ पाँच विवाहित महिलाएँ तालाब-कुआँ जाकर भगवान् की मूर्ति को उठा लाती हैं। एक जवान बकरी और झोली में ये पाथेय बाँधकर कंसाले पैसे, छोटाताल रखे रहता है या नहीं, उसके हाथ लाग बेंट होती है। अरणी, घड़े माँजकर पानी भरकर सुपारी के फूल रखकर पाथेय लेकर पूर्व दिशा में सब्जीवाले पाथेय के तीन गाँठ बाँधकर झोली में कंसाले पैसे छोटा ताल रखे रहता है। इसके अलावा सुपारी के फूल रख पाथेय लगाकर पूर्व दिशा में मुड़कर पूजा करते हैं। अब बाजा बजाते हुए कंसाले झनझनाकर भगवान् की मूर्ति को लाकर आवरण में रखते हैं।

अब गुड्डा बननेवाले लड़के को माता-पिता यह कहते हुए कि 'यह हमार बेटा नहीं, मादेव का बेटा है' पुरुसकारी के हाथ सौंपते हैं। उसे काले पीढ़े पर बिठाकर काली कंबल, बिस्तर ओढ़ाकर उसके ऊपर पूर्वाभिमुख में बिठाकर उसके आगे जोर से इस तरह मानो सिर पर पिटाई कर रहे हों, चावल भरकर सेर से (माप) उसके सिर पर रखकर उसका दायाँ हाथ नीचे रखवाकर उसके ऊपर दूध-मक्खन फैलाकर, फूलों से सजाकर कपूर, लोवानावाले काड़ी से पूजा करते हैं (धूपबत्ती से पूजा करते हैं)। जमीन पर रखवाए उसका हाथ उठाकर उसमें लगे चावल के दाने निकालकर उसके माथे पर पाँच बार लगाते हैं। यह विश्वास बना है कि यह अक्षत अगर माथे पर रह गया तो वह मादप्पा का प्रिय बेटा है। उसके बाद पाँच सिरेवाले हलदी की जड़ को सोना-चाँदी के टुकड़ों के साथ हलदी पुते एक कपड़े पर लपेटकर उसे काले धागे से बाँधकर पूजा कर सभी लोगों से उसकी पूजा करवाते हैं। सभी के छूकर पुनः कंसाने के बाद उसे वहाँ के पैरदार को दिया जाता है। तब वह यह कहते हैं कि 'बेटे, अब तक तुम अपने माता-पिता के बेटे रहे। आगे से तुम मादप्पा के बेटे रहोगे।' इस बालक के गले में रुद्राक्ष की माला पहनाई जाती है। वहाँ पर जमे रिश्तेदार, निकटवर्ती लोग उस बालक के सिर पर अक्षत डालकर 'अक्षय बनो' कहकर आशीर्वाद देते हैं। उसके बाद पुरुषकारी उससे कुछ प्रश्न कर उत्तर पाता है, जैसे—

'तुम किसके बेटे हो?'—'मैं' मादेश्वर का बेटा हूँ, जी। 'ऐसा है तो यह ले मादेश्वर की झोली', कहते हुए उस बालक के गले में झोली डालकर हाथ नागबेंट देता है। नए गुड्डे अपने साथ लेकर कंसाले लोग भिक्षा माँगने निकलते हैं। घर के दरवाजे पर माता-पिता दरवाजा खोलकर गुड्डा के चरण धोकर पूजा करते हैं, नमस्कार करते हैं, फिर पाँच सेर (माप) चावल, एक गुड़ का बड़ा टुकड़ा उसकी झोली में डालते हैं। आगे भी चार-छह घरों में उपादान करवाते हैं। उपादन के समय यदि झोली भर उपादान नहीं मिल सकता तो अथवा लड़का लौटकर झोली को खूँटे से लटकाता है तो झोली नीचे सरकती है। यह विश्वास बना है कि उसी तरह उसका घर भी नीचे उतर जाएगा।

भिक्षा माँगकर लौटनेवाले बेटे को दरवाजे पर ही खड़ा कर, चरण धोकर, पूजा कर, लाल पानी डालकर सांति (शांति) करने के लिए एक मुरगी लाकर, धोकर पूजाकर, उसका खून लड़के के माथे पर लगाते हैं। उस रक्त को विरुदों के साथ पीढ़े पर रखते हैं।

पुरुषकारी पहले जैसे ही पूजा कर कंकण खोलता है। कंकण को खाना बनानेवाले घड़े में रखे सुपारी के फूलों के साथ घर के कंगूर से कटवाकर धूप जलाते हैं। इसके बाद गुड्डों के बीच वह खाना खाने बैठता है। पीढ़े की पूजा के बाद घर में बना 'कडुमूल पंचामृत' (गुजिया,

कज्जाय, घी) को सभी के पत्तल पर परोसते हैं। भोजन करने बैठे सभी गुड्डा लोग अपने-अपने झोले से थोड़ा-थोड़ा कज्जाय-घी निकालकर नए गुड्डा के पत्तल पर परोसते हैं। इसे 'पंति सेवा' कहते हैं। खाना खाने के बाद सारी भिक्षा को गुड्डा की झोली में पाँच हाथ भर चावल डालकर, पाँच पच्चीस पैसे डालकर उसे 'अक्षय बनने' का आशीर्वाद देकर निकलते हैं।

महिलाओं को 'गुड्डम्मा' अथवा 'गुड्डिम' बनाने की परंपरा बहुत कम, मगर अस्तित्व में है। कुछ लोगों का यह मत भी है कि माहवारी होनेवाली महिलाओं को गुडिम बनना नहीं चाहिए। गुडिम मादेव की शिशु पुत्री होने के बाद उसका विवाह नहीं होता, यदि कोई गुडडा उसे पसंद कर जाए तो उसकी सेवा करते इसको समय गुजारना पड़ता है। तीज-त्योहार के समय उसका सम्मान बढ़ जाता है। आजकल गुडिम बनने की परंपरा बहुत घट गई है। मगर रोज ही पुरुषों का, बालकों के गुड्डा बनने का क्रम निरंतर चला आ रहा है।

इस प्रकार गुड्डा बनने के बाद उसे मादेश्वर की कथा सीखनी पड़ती है और उसके आगे से कथावाचन करना उसकी जीवन शैली का एक अंग बन जाता है। सोमवार के दिन उसे कथा सिखाना शुरू किया जाता है। तब उस लड़के को 'तिम्गड दुडि बडब्राहमण्या' शब्दों का उच्चारण एक साथ करने को कहा जाता है। जब यह गुड्डा बिना रुके सहज रूप से उच्चारण कर देता है तो यह निर्णय लिया जाता है कि इसकी जीभ सहज कथावाचन के अनुकूल है। गुड्डा की आवाज के लिए जहाँ ट्रेनिंग की आवश्यकता महसूस करते हैं, तब एक नया मिट्टी का घड़ा मँगा लेते हैं, उसका सिर उसके मुँह के अंदर डालकर कुछ भी गाना गाने को कहा जाता है। इस तरह एक महीने की ट्रेनिंग देने के बाद जब यह बात समझ में आती है कि लड़के का गला कथावाचन के अनुकूल बना है, तब उसे कथा सिखाना शुरू करते हैं। यदि वह अयोग्य साबित हुआ तो उसे बीच में पुनरावृत्ति करने के लिए या ढोल बजाने के लिए रख लेते हैं।

इसके बाद से हर सोमवार-शुक्रवार के दिन शुद्ध होकर भक्ति से पूजा कर कारण्य (भिक्षा माँगने) के लिए निकल पड़ता है और तभी कथावाचन करने के लिए यदि वह अपरिपक्व हो तो 'बिडोलग' या 'कट्टोलग' करता है। कथावाचन की प्रक्रिया में परिणत हो गया हो तो भक्त जहाँ भी पसंद करें, वहाँ वह वाचन करता है। मनौती कर जनमे इस लड़के को माद्प्पा, मादु, चिक्कमाद्र, द्रोड्ड माद, पुट्ट माद, मद्दु माद, दुंडु मादेव, मादेव, महादेव, मरु देउरु, मादेव स्वामी आदि नाम रखते हैं।

गुड्डा लोगों को गाना सिखाने के लिए तैयार होनेवाले गुरु को सालाना एक बार 'गुरु मनेहण' (गुरुजी के घर धन) कहते हुए पाँच धन देने पड़ते हैं। कहीं यह नियम नहीं है कि गुड्डा को शादी-शुदा नहीं होना चाहिए। घर-बार बनाकर ही अपने व्यवसाय को वह आगे बढ़ा सकता है। मगर यह नियम जरूर है कि गुड्डा के घर कम-से-कम एक लड़के का गुड्डा होना जरूरी है। उनका शाकाहारी होना भी जरूरी नहीं। उनका अंत्य संस्कार भी गुड्डा लोग ही करते हैं, उनके शव को अन्य कोई नहीं छू सकता।

गुड्डा लोग सोमवार और शुक्रवार मात्र उपादान के लिए जाते हैं। बाकी दिन जो भी बुलाए, वहाँ चले जाते हैं। गुड्डों के तीज-त्योहारों में से दीवाली और महाशिवरात्रि का विशेष महत्त्व है। तब वे लोग बड़ी भक्ति के साथ भगवान् का कीर्तन कर तृप्त होते हैं। उस समय वे मांसाहार नहीं करते। स्वयं मादेश्वर की पूजा नहीं करते। दूसरों के हाथ करवाते हैं। कंसाले कथावाचन के लिए कम-से-कम तीन गुड्डों का होना जरूरी है। बड़े 'राण्या' के लिए चार गुड्डों का होना जरूरी है, जिनमें से दो गुड्डा 'जम्मदृगि सट्लु' होय्तारे कहते गाते हैं, दो गुड्डा उनकी पृष्ठभूमि के गायक बनते हैं। एक चिटगि ताली बजाता है तो दूसरा दम्मडि वादन करता है। गुड्डा 'मले मादेश्वर' से संबंधित महाकाव्य और धार्मिक, लौकिक, ऐतिहासिक विषयों से संबंधित तीस से अधिक काव्य गाते हैं। मंटेस्वामी की संतान नीलगार भी मादेश्वर महाकाव्य को छोड़कर अन्य सभी काव्यों का गायन करते हैं। इन दोनों पेशेवर गायकों के बीच अंतर यह कि पहलेवाले नीलगार मादेश्वर काव्य के सिवा बाकी सभी काव्यों का वाचन करते हैं। वे मंटेस्वामी का कथावाचन बड़ी श्रद्धा के साथ करते हैं। नीलगार तानपूरे का इस्तेमाल करते हैं, कंसाले कंसाले ताल का इस्तेमाल करते हैं। गायन के तराने उनके अपने वाद्यों के अनुकूल हुआ करता है। नीलगार कंसाले में और कंसाले नीलागार में भी परिवर्तित हो सकते हैं।

देवरगुड्डों ने अपनी प्रतिभा के बल पर कई लोककाव्यों की रचना की है, जिनमें उनके धर्मगुरु मादेश्वर को लेकर रचा गया काव्य ही प्रधान है। इसे 'मले मादेश्वर' महाकाव्य कहा जाता है। १९७३ में पहली बार १५ कथा भागोंवाला मले मादेश्वर महाकाव्य प्रकाशित हुआ। इसके बाद से लोक महाकाव्यों की तलाश विद्वत् समाज द्वारा विशेष रुचि के साथ शुरू हुई तो कई आश्चर्यजनक विवरण सामने आए।

देवरगुड्डों का धार्मिक महाकाव्य 'मले मादेश्वर काव्य' है तो नीलगारों का महाकाव्य 'मंटेस्वामी काव्य' रहा।

देवरगुड्डोंवाले मले मादेश्वर महाकाव्य में यद्यपि पंद्रह कथा भाग हैं, कोई भी कथावाचक इस पूरे महाकाव्य का पूरी तरह अकेले वाचन नहीं करता। साधारणतया मादप्पा के जन्म-पालनवाली पंक्तियाँ, मंदिर बनवाकर सिवय्यावाली (शिवजी-दलितों की भाषा में सिवय्या) पंक्ति, संकम्मा की पंक्ति, श्रवण राजा की पंक्ति, नीमवाली कालम्मा की पंक्ति

को लेकर गाते हैं। कुछ गायकों को जन्म-पालनवाली पंक्ति में कुंडूर मठ का कथाभाग और संकम्मा काव्य के कथाभागों को छोड़कर बाकी कथा भागों का गायन नहीं आता।

'मले मादेश्वर महाकाव्य' में 'ब्रह्मांड सृष्टि' वाला भाग अद्‌भुत ढंग से वर्णित है। मादेश्वर काव्य का आदिशक्ति कउट्‌लु माँ और संतान की संबंध आदिम संस्कृति के अवशेष सा है। दायाँ-बायाँ हाथवालों के जन्म का कवट्‌लु जाति पुराण है। श्रवणय्या को वर दिए जाने का कवट्‌लु में भगवानों से अपने साथ अन्याय बरता गया है। इस अन्याय के प्रतिरोध में देवताओं को बंधन में लेने की पुकार है। ये तीन कथाभाग महाकाव्य के सतही भाग के हैं। 'मादेव भूमि बंद कनट्‌लु' में मादप्पा बनकर सात पहाड़ों पर बसने के कवट्‌लु हैं।

'लव कुशर काकग' शेष रामायण जैसा ही है। इसमें लोक काव्य के सॉनेट भरे पड़े हैं। कनकपुर के आस-पास रहनेवाले देवरगुड्‌डों के बीच मान उपलब्ध होनेवाला 'नीलवेणी' काव्य के अंदर एक रमानेवाली कथा है। अध्यापक के कुंतल का शिकार बनकर नीलवेणी जंगल में फँस जाती है। उसका भाग्य अच्छा होता है, जिससे वह एक राजकुमार की पत्नी बनती है। वहाँ पर भी एक मंत्री कुमार की दुष्टता के कारण उसे कई तरह की मुसीबतों का सामना करना पड़ता है। एक आश्रयदाता के मिलने के बावजूद वह एक चोर के हाथ फँस जाती है। बहुत कुशलता से वहाँ से छूटकर एक राजकुमार से शादी कर लेती है।

'गिराजम्मन कथे' और 'पिरियापवृणद् काकग' (लड़ाई) भी देवरगुड्‌डों द्वारा रचित काव्य हैं। उन्हीं लोगों द्वारा रचित 'मैदु रामण्णा' भी इस लोगों के बीच प्रचलित है। देवरगुड्‌डों द्वारा रचित सभी काव्य प्रकाशित नहीं हैं।

नं. २, एन.एच.सी.एस. लेआउट
८वाँ माला, विजयनगर
बंगलुरु-५६००४०
दूरभाष : ९४४८८५६१७४

अमृतपान

लघुकथा

• लता कादंबरी

गाँव में बाढ़ आई हुई थी, गंगा का पानी रेती को पार करता हुआ बड़े भीषण तरीके से आस-पास के गाँवों को अपनी लहरों में समेटता हुआ आगे बढ़ता जा रहा था। सात साल के पुतवा को कमर पर उठाए दूसरे हाथ से गृहस्थी का सामान बटोरे सुखई अपनी बीस दिनों की जच्चा पत्नी तथा नन्हे बच्चे को किसी तरह सँभालते हुए गाँववालों से खचाखच भरी नाव में जैसे-तैसे जा बैठा। परली पार जाते-जाते फिर से काली बदरी घिर आई, आज तो आकाशी बिजली तांडव करने के लिए बड़ी जोर से मचलती दिखाई दे रही थी, पार होते-होते अँधेरा भी छाने लगा था, अब तक तो सुखना भी थकने लगी थी, दोनों बच्चों का भूख से हाल बेहाल था, ऐसे कठिन समय में सुखई अपने बारे में तो क्या कहता? वह तो किसी खाली कुटिया की तलाश में तेज कदमों से आगे बढ़ा जा रहा था, उसे देखकर ऐसा लग रहा था कि किसी राजा के समान उसे किसी दूसरे राजा का किला फतेह करना है।

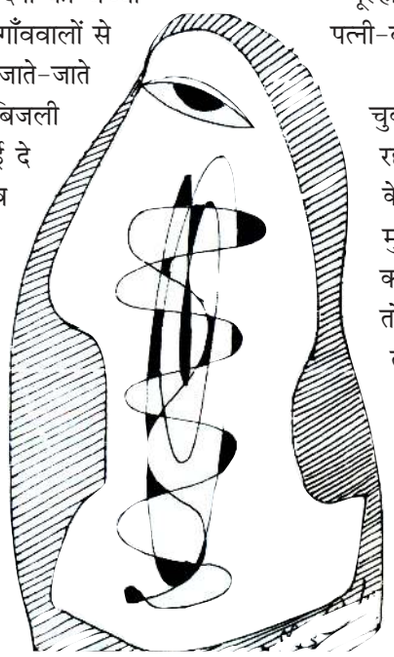

सामने दिखाई दे रही एक टूटी-फूटी कुटिया को देखकर उसकी जान-में-जान आई, बड़ी आस से उसने दरवाजा खटखटाया, बहुत देर तक कोई जवाब न पाकर माचिस की तीली जलाकर उसने जब दरवाजा ठेला; अंदर का दृश्य देख उसके पाँव डयोढ़ी पर ही ठिठक गए। एक आदमी सूखा रोग से ग्रसित बीमारी की हालत में भूखा-प्यासा अंदर अकेला पड़ा लंबी-लंबी साँसें ले रहा था, पर कोई दूसरा ठौर न देख उस रात उन्होंने वही बिताने की ठान ली। अब तक बच्चे बुरी तरह से भूख से बिलबिलाने लगे थे।

चूल्हा जलाने के खातिर लकड़ियाँ बीनने के लिए सुखई पत्नी-बच्चों को वही झोंपड़ी में टिका जल्दी से दौड़ पड़ा।

अब तक सुखना नवशिशु को अपने दूध से लगा चुकी थी, थकावट के मारे पुतवा की भी आँखें रह-रहकर बंद हुए जा रही थीं। तभी उस आदमी के प्यास के मारे कराहने की आवाज सुनकर वह चौंकी, बड़ी मुश्किल से मोमबत्ती की रोशनी में नजर घुमाई तो कहीं भी पानी का घड़ा दिखाई न दिया। प्यास के मारे तो उसका भी गला सूखा जा रहा था। आदमी ने किसी तरह करवट बदली और कुछ तेजी से फिर से कराह उठा। ऐसा लगता था कि उसे बाहरी लोगों के झोंपड़ी में होने का एहसास को गया था, बराबर आती उसके कराहने की अवाज सुन अबकी सुखिया से रहा न गया, उसके मन में गहरी करुणा जाग उठी, उसकी प्राण-रक्षा के लिए अपना अमृतपान करवाने का प्रण ले डाला।

७/२०२, स्वरूप नगर, कानपुर (उ.प्र.)
दूरभाष : ७६०७३४५६७८

उत्तर-पूर्व की यात्रा

● राजेश जैन

सुनता रहा हूँ कि भारत में जो चार धाम की यात्रा कर लेता है, उसका जीवन सफल हो जाता है। धार्मिक महत्त्व के चार धामों की तर्ज पर शुरू में मेरे स्वनिर्णीत लेखकीय चार धाम थे—मुंबई, दिल्ली, चैन्नई और कोलकाता। चालीस की उम्र तक आते मैंने इन महानगरों की यात्रा येन-केन (ऑफिशियल/व्यक्तिगत) कर ली थी और अपनी संवेदनात्मक साहित्यिकता को धन्य मान बैठा था कि अनुभवों के भौगोलिक स्तर पर मैंने पूर्णता का दायित्व पूरा कर लिया है। अब पच्चीस साल बाद महसूस हुआ कि यह अदूरदर्शितापूर्ण भ्रम था। इस बीच अमरीका, यूरोप और एशिया भी हो आया, पर जब पूर्व में कोलकाता से आगे बँगलादेश पार करके पूर्वोत्तर राज्यों में जाना हुआ तो लगा, परंपरागत धाम (जगन्नाथ पुरी जैसे) से आगे चारों ओर ग्रेटर धाम भी हैं। यथा दिल्ली से आगे उत्तर में बदरीनाथ, कश्मीर, हिमाचल; पश्चिम में सोमनाथ, द्वारका, बाघा बॉर्डर; दक्षिण में कन्याकुमारी, कोचीन, त्रिवेंद्रम और पूर्व में पूर्वोत्तर राज्य एक तरह से ग्रेटर धाम कहे जा सकते हैं, जो चहुँ ओर देश की सीमाओं को छूने के बाद अब पूरे हुए से लगते हैं।

१०-१७ जनवरी, २०१६ को नॉर्थ ईस्ट में था। पहली बार जाने का रोमांच निमित्त प्रोफेशनल था। साउथ एशियाई गेम्स के स्टेडियमों का एनर्जी ऑडिट—गोहाटी, शिलांग और अगरतला में। विद्युत्-ऊर्जा (व्यावसायिक) के समांतर, शब्द-ऊर्जा (साहित्यिक रुचिपरक) सदैव मेरे जेहन में जीवंत रहती है, सो अवकाश मिलते ही चेरापूँजी, कामाख्या मंदिर और बँगलादेश बॉर्डर की यात्रा भी कर डाली।

सात बहनों (सेवन सिस्टर्स) कहे जानेवाले पूर्वोत्तर के सात राज्य हैं—असम, मेघालय, त्रिपुरा, मिजोरम, अरुणाचल प्रदेश, नागालैंड और मणिपुर। इनमें से तीन बहनों (असम, मेघालय और त्रिपुरा) से मिलने का अवसर इस यात्रा में मिला।

बहन नंबर-१ (असम)

गुवाहाटी विमान तल से निकलकर सीधे शिलांग (मेघालय) जाना था। यद्यपि मुख्यत: दक्षिण एशियाई खेल ५ फरवरी से गुवाहाटी में ही आयोजित होने हैं, पर हमारा कार्यक्षेत्र शिलांग था, जहाँ तीन स्टेडियमों में गेम्स की ७ प्रतियोगिताएँ होनी थीं। गुवाहाटी शहर में प्रवेश करते ही एक सफेद आकर्षक स्मारक की ओर ध्यान गया। ड्राइवर ने बताया यह भूपेन हजारिका का समाधि स्थल है। सुनते ही चेतना में 'गंगा आए कहाँ से, गंगा जाए कहाँ रे' और 'धूम-धूम···' जैसी धुनें गूँजने लगीं।

इंजीनियर एवं ऊर्जा-अंकेक्षक। व्यंग्य, कविता, कथा, उपन्यास, ललित-निबंध एवं बाल साहित्य पर कई पुस्तकें प्रकाशित। हिंदी अकादमी दिल्ली, म.प्र. साहित्य अकादेमी भोपाल, ऊर्जा मंत्रालय, भारत सरकार, चिल्ड्रन बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, 'आर्य स्मृति सम्मान' किताबघर, 'अनुपम बाल साहित्य पुरस्कार' अजमेर। संप्रति निदेशक, कात्यानी एनर्जी।

गुवाहाटी के कामाख्या मंदिर के बारे में बहुत सुना था। जब हिमाचल में नैना देवी मंदिर देखने गए थे तो एक साथी ने जानकारी दी थी कि पौराणिक कथा के अनुसार जब शोक संतप्त क्रोधित भगवान् शिव पिता यक्ष द्वारा अपमानित होने के कारण सती हुई उमा का शव कंधे पर रखकर ब्रह्मांड में तांडव करते हुए भटक रहे थे, तब शांति हेतु भगवान् विष्णु के चक्र से शव के जो १०८ टुकड़े हुए थे, उनमें से यहाँ सती उमा के नैन गिरे थे। कहा जाता है, नीलांचल पर्वत स्थित गुवाहाटी के कामाख्या मंदिर में योनि और गर्भाशय अंग गिरे थे, इसलिए काम-क्रिया की दृष्टि से यह स्थान स्त्रियों के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण माना जाता है। चूँकि फिलहाल समय नहीं था, सो सोचा कि लौटते हुए इस मंदिर को अवश्य कवर करेंगे।

जैसा सोचा था, आज शिलांग (मेघालय) से गुवाहाटी लौटते हुए कामाख्या मंदिर देखने का संयोग बन ही गया। गुवाहाटी से अगरतला (त्रिपुरा) की फ्लाइट दोपहर दो बजे थी। शिलांग से हम सुबह छह बजे निकल गए, ताकि फ्लाइट पकड़ने से पहले दो-ढाई घंटे मंदिर में भी बिता सकें। ड्राइवर ने पहले ही बता दिया था कि मंदिर में अंदर दर्शन हो पाना मुश्किल है, क्योंकि वहाँ सुबह छह बजे से ही पूजा करनेवाले भक्तों की लाइन लग जाती है और नंबर आने में तीन-चार घंटे लग ही जाते हैं। पूजा की बजाय मात्र दर्शन की इच्छा थी, सो हम पहुँच ही गए दस बजे तक, लगभग डेढ़ घंटे थे हमारे पास। लाइन देखकर अंदर प्रवेश का इरादा छोड़ दिया, पर चारों ओर घूमने में कोई बाधा नहीं थी। एक कोण से अंदर की झलक भी मिल रही थी।

दक्षिण की यात्रा के समय प्रख्यात तिरुपति मंदिर में भी यही स्थिति थी। इसमें कोई शक नहीं कि श्रद्धालुओं की अपार भीड़ ही स्थल को महत्त्वपूर्ण बनाती है, उससे ज्यादा किस धार्मिक स्थान के दर्शन से मनोकामना पूर्ण होगी, यह प्रवृत्ति प्रेरक होती है, यहीं मेरा अपने आप से

मतभेद था। मनोकामना-पूर्ति से ज्यादा उत्सुकता मेरे मन में ऐसे स्थलों से जुड़ी दंतकथाओं को जानने में रहती है, यहाँ भी थी। आस-पास की प्राकृतिक छटा का आकर्षण बेशक अनुपम था ही, उसको महसूस करने के लिए किसी लाइन में लगने की आवश्यकता नहीं थी। मंदिर के कार्यकर्ताओं सहित पूजा-सामग्री लिये हुए कुछ भक्तजनों से भी चर्चा करके जानकारी चाही तो उन्होंने न केवल अरुचि, वरन् अनभिज्ञता भी दरशाई। उनका सारा ध्यान पूजा विधि, सामग्री और मध्यस्थ बने कारोबारी पंडितों के कर्मकांडी निर्देशों का पालन करने पर केंद्रित था। इतना जरूर समझ आया कि हर परिवार अपनी महिलाओं को पूजा में आगे कर रहा था।

एक दिन पहले ही इंटरनेट से मंदिर के बारे में जो जानकारी ली थी, उसकी पुष्टि करना चाहता था, सो मंदिर की व्यवस्था के लिए सूचना केंद्र पर तैनात उद्घोषिका से ही बातचीत शुरू की; पर निराशा ही हुई, क्योंकि उसे सिर्फ अपने काम से सरोकार था। यानी लिखकर दी गई सूचनाओं की घोषणा करना। मंदिर के बारे में अतीत और दंतकथाओं से कोई लेना-देना नहीं था। फिर भी मैंने उसे उकेलने के लिए पूछ ही लिया—''मंदिर के परिसर में कबूतरों के बीच इतने बकरे क्यों घूम रहे हैं?''

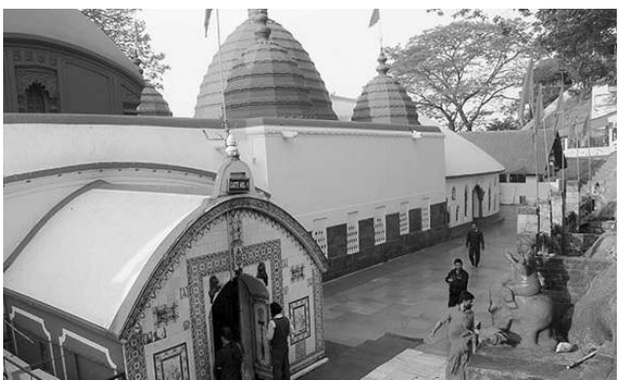

शक्तिपीठ कामाख्या देवी मंदिर

''कई भक्त इन्हें यहाँ दान-स्वरूप छोड़ जाते हैं, जिनकी मनोकामना पूरी हो जाती है, वे...''

''इनकी बलि भी होती है क्या?''

''वह अलग बात है, त्योहार पर बलि तो होती है, पर मनोकामना पूरी होने पर दान दिए गए बकरों का लालन-पोषण यहीं होता है, इन कबूतरों के साथ ही।'' वह बोली, पर प्रकट था कि मेरे अवांछित प्रश्नों से वह खिन्न हो रही थी। इस मंदिर के बारे में मुझे कहीं पढ़ा हुआ याद आ रहा था कि यह मंत्र-तंत्र की देवी का भी मंदिर है। कहते हैं, साधक स्त्रियाँ जिस पुरुष को पसंद करती थीं, उन्हें मंत्र-तंत्र से दिन में बकरा बनाकर अपने पास रख लेतीं और रात्रि में पुरुष बनाकर उनके साथ अभिसार करती थीं। काली देवी के अन्य सात अवतारों (धूमवती, मातंगी, बगोला, तारा, कमला, भैरवी, छिन्नमस्ता, भुवनेश्वरी और त्रिपुरा सुंदरी) का भी यहाँ वास माना जाता है। कहते हैं, शाप के कारण कामदेव जब अपना पुरुषत्व खो चुके थे, तो उससे मुक्ति उन्हें यहीं प्राप्त हुई थी, इसलिए इसे प्रेम की देवी का मंदिर भी कहा जाता है। मान्यता है कि नीलांचल पर्वत के इसी स्थान पर शिव-पार्वती ने काम-क्रीड़ा की थी।

कामाख्या देवी को ब्लीडिंग गॉडेस (रक्तिम देवी) के नाम से भी जाना जाता है। आषाढ़ (जून) माह में तीन दिनों के लिए मंदिर बंद रखा जाता है, क्योंकि वे तीन दिन देवी के मासिक धर्म के रक्तस्राव के दिन माने जाते हैं। कहते हैं, उन दिनों में पास से बहनेवाली ब्रह्मपुत्र नदी का पानी लाल हो जाता है। उस जल को पवित्र मानते हुए भक्तगण उसे प्रसाद के रूप में ग्रहण करते हैं।

बहन नंबर-२ (मेघालय)

शिलांग के स्टेडियमों में साथ आए अपने साथियों (सचिन और अजीत) के साथ प्रकाश के स्तर (लक्स लेवल) का आकलन करते हुए बारंबार मन में अपने पाँचवें प्रौद्योगिक आध्यात्मिकता वाले उपन्यास 'टावर ऑन द टेरेस' का स्मरण आ रहा था।

शिलांग शहर का केंद्र है पुलिस बाजार। जिस होटल में जगह मिली, वहाँ कमरे में हीटिंग नहीं थी और तापमान काफी कम। रह-रहकर सन् १९८५ के इंग्लैंड प्रवास की याद आ रही है। वहाँ भी ऐसी ही सर्दी और ढलानवाली सड़कें थीं। कुछ-कुछ शिमला सा भी लग रहा था। संयोग से मैंने वही जैकेट पहनी हुई थी, जो तब इंग्लैंड में उतरते ही खरीदी थी और जिसने सर्दी के समंदर में डूबने से बचाव हेतु मेरे लिए लाइफ बोट का काम किया था। इतना अंदाज तो था कि हिल स्टेशन और जनवरी का माह होने के कारण शिलांग में ठंड होगी, लेकिन इंग्लैंड की तुलना में भयावह अंतर यह था कि वहाँ कमरे में हीटिंग थी, यहाँ नहीं है। बाहर खुले से अंदर कमरे में आने के बाद भी राहत नहीं मिलती थी, गरम कपड़े पहनकर हुए कंबल लपेटे रहने पर ही थोड़ा सामान्य लग पा रहा था, जो असुविधाजनक था। इसी कारण जब कोई स्थानीय व्यक्ति यह पूछता कि आपको हमारा शिलांग कैसा लगा तो अनायास मेरे मुँह से निकल जाता 'बिल्कुल इंग्लैंड जैसा।' 'सुंदर लोगों का सुंदर देश, तभी तो इसे इंडिया का स्विट्जरलैंड कहते हैं।' उधर से जवाब मिलता।

स्टेडियमों में लाइट जलाकर प्रकाश के स्तर को मापते हुए एकाएक खयाल आया, ऐसा ही होता है जीवन में। जब स्रोतों से आनेवाली आय या सुरक्षा कम हो तो कितना अधूरा-अधूरा लगता है और इसी चिंता में डूबा रहता कि कैसे लाइट्स की संख्या की तरह तमाम स्रोतों की संख्या अथवा क्षमता और भी बढ़ाई जाए? उन छोटी सुंदर बच्चियों ने भी ध्यान खींचा, जो मेघालय की परंपरागत पोशाक और मुसकान धारण किए हुए निर्माणाधीन स्टेडियमों में थैला लिये, न केवल पान और कच्ची सुपारी बेच रही थीं, बल्कि स्वयं खाती हुई, रचे होठों की दीप्त लालिमा (अज्ञात वाटेज की) भी बिखेर रही थीं।

दो दिनों लगातार विद्युत् ऊर्जा के व्यावसायिक कामकाज के पश्चात् आज थोड़ा अवकाश मिला तो निकल पड़े चेरापूँजी की तरफ। पहला पड़ाव था एलिफेंट फॉल, जो सदियों पुराना है। मेघालय के 'खासी' लोग इसे 'फिशोलाई पेटेन खडब्यू' (अर्थात् तीन चरणोंवाला

झरना) कहते थे, पर आधुनिक सभ्यता की जानकारी में आया अंग्रेजों की खोज से। तीन चरणों में ढलता हुआ यह प्रपात प्रकृति की कारीगरी का अद्‌भुत नमूना है। अंग्रेजों ने इसका नामकरण एलिफेंट प्रपात इसलिए किया था, क्योंकि इसके बाईं ओर की चट्‌टान हाथी के आकार की थी। वह चट्‌टान १८९७ में आए भूकंप में ढह गई, पर उसके अवशेष टुकड़े-टुकड़े होकर चट्‌टानों के रूप में बिखरे पड़े हैं, यानी अब वहाँ हाथी तो नहीं दिखता, सिर्फ उसका नाम है। तीसरे चरण तक पहुँचने के लिए काफी गहराई तक नीचे उतरना था, मैं बीच में रुक गया, क्योंकि उतरना आसान था, पर फिर वापस आने के लिए चढ़ पाना मेरी कमर के लिए बेहद दुरूह! तब फाल से जीवन हेतु यह सीख लेकर तसल्ली कर ली की फॉल, यानी गिरना तो आसान है, पर ऊपर चढ़ना उतना ही मुश्किल। आस-पास तथा रास्ते में मिले जंगल में एक संभ्रांत शालीनता का आभास हो रहा था। मानो साफ-सुथरे पेड़ अदब और अनुशासन से जीवन जी रहे थे। पत्तों के बिखरने में भी नजाकत देखी जा सकती थी। कहीं कोई गंदगी या ऊबड़-खाबड़ जमीन नजर नहीं आ रही थी, मानो देश में चल रहे स्वच्छता अभियान का यहाँ जंगल में पूर्ण रूप से अनुकरण हो रहा हो।

मेघालय का लोक नृत्य

सचिन ने टिप्पणी की—''यहाँ जंगल में जो ज्यादातर पेड़ हैं, उनकी पत्तियाँ छोटो-छोटी हैं, इसलिए जल्दी मिटटी में घुल जाती हैं फिर बरसात भी ज्यादा होने से उनके गलने और बहने में आसानी रहती है, जबकि नॉर्थ में पेड़ों की पत्तियाँ बड़ी साइज की होती हैं, उनका ढेर लग जाता है। गलने में समय भी ज्यादा लगता है।''

''मुझे लगता है, यहाँ जंगल में भी मैनेजमेंट का वही आई.एस.ओ. १२००१ सिस्टम फॉलो किया जाता है, जो हमारे प्लांट्स में होता है, तभी सबकुछ कितना नीट और क्लीन है।'' मैंने चुटकी ली।

''वह देखो, टी गार्डन्स!'' अजीत चाय बागान की झाड़ियों को शायद पहली बार देख रहा था।

रास्ते में 'धुवानसिंग पॉइंट' पर रुकना हुआ। दो पहाड़ियों को जोड़ते, घाटी के बीच केबल्स खिंचे हुए थे। पता लगा कि यहाँ एडवेंचर्स स्पोर्ट्स 'जिप लाइनिंग' होता है। केबल्स का स्लोप ऐसा है कि ट्रॉली में लटके लोग ग्रेविटी से झूलते हुए घाटी को इधर-से-उधर और उधर-से-इधर पार कर जाते हैं। वाकई दुस्साहस का काम था। अपनी शारीरिक सीमाओं का आदर करते हुए मैं पीछे हट गया, पर सचिन ने स्पोर्ट्स का आनंद लिया, अजीत ने वीडियोग्राफी की और मैं एक मूक दर्शक की तरह लाइव शो देखकर आनंद लेता रहा।

चिकनी सपाट दीवार जैसी हरी-भरी पहाड़ियाँ देखकर मेरे मन में विचार आ रहे थे कि प्रकृति कितनी उम्दा कलाकार है। इन पहाड़ियों के कैनवास पर बौछारों की कूची/छैनी से उसने साफ-सुथरे लैंडस्केप बनाए हुए हैं। आर्ट गैलरी सा लग रहा था वातावरण, जैसे यहाँ पर्यावरण प्रतिदिन स्नान करके नियमपूर्वक धर्म ध्यान करता है, पहाड़ियों पर रोज बौछारों की फूल बुहारी झाड़ू लगाने के बाद हवा अपने आँचल से पौंछा करती होगी। चेरापूँजी (सोहरा) की तरफ जाते हुए ऐसा लगा कि किसी मल्टी स्टोरी इमारत की उपरी मंजिलों पर क्रमशः चढ़ते हुए टेरेस की ओर बढ़ रहे हैं। सचमुच जैसे बादलों के डेरे (मेघालय) में पहुँच गए हों। यह दुनिया का सर्वाधिक बारिशवाला क्षेत्र है, फिलहाल बारिश नहीं हो रही थी, हलकी धूप थी, स्वच्छ नहाई-धोई और चप्पा-चप्पा गवाही दे रहा था कि यहाँ का कण-कण भरपूर बारिश से संपन्न है।

निस्संदेह बारिश का पानी बेहद कलात्मक ढंग से बहता हुआ ढलान उतरता होगा, तभी तो सर्वत्र उसके चरण-चिह्नों की सुंदर नक्काशी देखी जा सकती है। कालचक्र और कलाचक्र के समन्वय का अद्‌भुत नमूना! और पहुँच ही गए दुनिया की छत पर, यानी चेरापूँजी, जिसे सोहरा भी कहते हैं शायद। इक्का-दुक्का मकान, वह भी अत्यधिक बारिश के कारण मैलापन लिये हुए। लगा, आबादी कम है, सरकारी पोस्टिंगवाले लोग ही रह रहे होंगे। अर्थ-साइंस विभाग का विशाल ग्लोब देखकर जयंत विष्णु नार्लीकर की विज्ञान कथाएँ याद आ गईं। चारों ओर भीगी हुई रहस्यमय चुप्पी फुसफुसा रही थी। एकाएक आस-पास की पहाड़ियों पर कब्रों की कतारें उभरने लगीं। कुछ जर्जर-जीर्ण छोटी-छोटी और कुछ एकदम चमक-दमकवाली विशाल वास्तु की दृष्टि से संभवतः इस स्थान को आदिकाल से महत्त्वपूर्ण माना जाता रहा है, तभी तो यहाँ जीवित व्यक्तियों की तुलना में मुरदों का ज्यादा बोलबाला है। दुनिया की छत पर परम शांति से सो रहे मृतकों की कॉलोनी। सहसा लगा, किसी भूतही जगह पर आ गए हैं—रूहानी सन्नाटे से सराबोर। यह स्थान बादलों का तीर्थ लगा, जहाँ समुद्र से जल लाकर मेघ शिखरों पर चढ़ाते हैं।

'इको पार्क' में थोड़ी देर विश्राम किया और दुनिया की छत पर होने का गौरव महसूस किया। इको पार्क को यहाँ का टेरेस गार्डन कहा जा सकता है। अपनी छत से पड़ोसी का मकान देखने का जो रोमांच होता है, वह अवसर तब आया, जब आगे जाकर नीचे घाटी में बसे पड़ोसी बँगलादेश को भौगोलिक तौर पर देखा। 'मास्मआ गुफा' प्रकृति की एक अनन्य कलाकृति है। १५० मीटर लंबी, नाल के आकार की गुफा। एक छोर से घुसो और लगभग आधे घंटे बाद दूसरे छोर से बाहर निकलो, क्योंकि बीच में एकदम सँकरा रास्ता, जिसमें केवल एक व्यक्ति ही जोड़-तोड़ करके पार हो सके। दर्शनार्थियों की भीड़ के कारण पहली ही बाधा से मैं हिम्मत हारकर लौट आया। रास्ते में नजर उन पहाड़ियों पर भी गई, जहाँ कटाई का छुटपुट काम चल रहा था,

निश्चित ही उपयोगी खनिज का खनन हो रहा होगा। पहाड़ की दीवार पर लगभग हर जगह एक गुफा सी बना ली गई थी, ताकि वीराने में बारिश आने पर मजदूरों को आड़ मिल सके। लगा, यहाँ ग्राउंड स्तर पर ही प्राकृतिक एवं मानवीय तौर पर गुफा संस्कृति का बोलबाला है।

बहन नंबर-३ (त्रिपुरा)

संयोग है कि गुवाहाटी से अगरतला की फ्लाइट में पढ़ने के लिए मैंने अपने बैग से ज्ञनोदय का जो नया अंक निकाला, उसमें राजेंद्र उपाध्याय की कविताएँ थीं—'अगरतला स्टेशन', 'अगरतला में बांग्लादेशी छतरी', 'धूप में चमकती पटरियाँ' और 'धूप को आने दो'। अपने गंतव्य पर केंद्रित साहित्यिक सामग्री अकस्मात् पाकर रोमांचित होना स्वाभाविक था। बड़े चाव से कविताएँ पढ़ गया। अगरतला पहुँचकर उसके बिंबों का मर्म भी साक्षात् महसूस कर पाया।

रेल संपर्क के धरातल पर यह क्षेत्र सचमुच दयनीय स्थिति में है। दिल्ली वाकई दूर है। यहाँ तक कि भारतीय सीमा में चलते-चलते कोलकाता पहुँचने में ही चौबीस घंटे लग जाते हैं, बँगलादेश को सीधे-सीधे लाँघकर कोलकाता जल्दी पहुँचा जा सकता है, लेकिन उस यात्रा की वीजा संबंधी औपचारिकताओं का अलग ही झंझट है। कुल मिलाकर वहाँ रह रहे अन्य क्षेत्रों के लोगों की लाचारी सहानुभूति के योग्य लगी। राजेंद्र ने अपनी कविताओं में इन्हीं संवेदनाओं को सूक्ष्मता से सहेजा है, जिनसे कुछ हद तक मैं रूबरू हो सका। अगरतला से लगभग चालीस किलोमीटर चलकर रोकिया पहुँचे गैस पावर प्लांट के गेस्ट हाउस में सैटल होते ही राजेंद्र उपाध्याय को दिल्ली फोन लगाया और कविताओं के लिए बधाई दी एवं बताया कि मैंने न केवल कविताओं को पढ़ा है, बल्कि उनकी जन्मस्थली पर साक्षात् बिंबों को देख रहा हूँ। राजेंद्र ने बताया, वह पिछले दिनों केंद्रीय विश्वविद्यालय के आमंत्रण पर दो हफ्ते अगरतला में था और ये कविताएँ उसी प्रवास का परिणाम हैं। उसने सलाह दी कि वहाँ विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में जय कौशल हैं, हो सके तो जरूर मिलना। रविंद्रनाथ टैगोर का मकान भी देखना, बँगलादेश का खास बाजार भी है वहाँ बॉर्डर···महल वगैरह-वगैरह। समय-सीमा की विवशता के कारण सभी सुझावों पर अमल न कर सका, बॉर्डर जरूर गए और अगरतला रोकिया के रास्ते में आनेवाले केंद्रीय विश्वविद्यालय परिसर के बाहर से ही दो-तीन बार दर्शन किए।

एक दिन के लिए बारामूला के गैस प्लांट में भी जाना था। जब गए तो इस बार रास्ते में किनारे की उन पहाड़ियों को जरा इतमीनान से देख पाए, जिन पर केले के झाड़ जंगलों की तरह फैले थे। अन्य फलदार वृक्षों और बाँस आदि की भरमार भी स्पष्ट दिखाई दे रही थी। वाह! जमीन के ऊपर इतनी प्राकृतिक संपदा और जमीन के नीचे छिपा उससे भी ज्यादा कीमती गुप्त धन, यानी प्राकृतिक गैस तेल के कुएँ और उनसे निकलती नैचुरल गैस। साथ के स्थानीय इंजीनियर श्री विक्टर ने बताया—''त्रिपुरा तो तेल के ऊपर तैरने वाला प्रदेश है।''

दोपहर में बारामूला से लौटकर हमने सीधे रुख किया बॉक्स नगर की ओर, यानी बँगलादेश सीमा की तरफ। चेरापूँजी में बँगलादेश को दूर से देखा था—मानो पहाड़ की बालकनी से घाटी का स्क्रीन देख रहे हों। यहाँ तारोंवाली फेंस के किनारे-किनारे चलते हुए ऐसा लग रहा था, जैसे एक खेत को बाँटनेवाली मेंड़ पर चल रहे हों। दोनों तरफ की झोंपड़ियों के वासी फेंस के आर-पार खड़े-खड़े आपस में यों बातें कर रहे थे, जैसे एक कॉलोनी के दो पड़ोसी अपनी अपनी छतों पर खड़े हुए वार्त्ता करते हैं। बताया गया—यहाँ दोनों तरफ कई लोग ऐसे हैं, जिनके खेत दूसरी तरफ भी हैं और उनका आना-जाना लगा रहता है। सीमाओं की विडंबना और उसकी कटुता का आभास तब हुआ, जब सीमा के किनारे चलते हुए एक गाँव में हमने देखा कि बी.एस.एफ. के चार जवान बंदूक ताने एक अधनंगे लुँगीधारी आदमी को घेरकर खड़े हैं। बताया गया, यह बँगलादेश से यहाँ घुस आया होगा, जवानों ने दबोच लिया। एक बूढ़ी औरत बार-बार उस दुबके हुए आदमी के पास पहुँचने की कोशिश कर रही थी, पर जवान उसे परे धकेल रहे थे। दृश्य मार्मिक था और संवेदनात्मक सोच को कई आयामों की तरफ प्रेरित कर रहा था। मेरा ध्यान सीमा पर तारों की फेंस के नीचे जगह-जगह बनी पुलियों की ओर भी जा रहा था, जिनमें सीमेंट के मोटे-मोटे ह्यूम पाइप दोनों देशों को आर-पार जोड़ रहे थे। ऊँचाई पर होने के कारण भारतभूमि पर बरसनेवाला बरसात का पानी पाइप से बहकर दूसरी ओर बँगलादेश में जा सकता है, बिना रोकटोक, बगैर किसी वीजा या पासपोर्ट के।

फेंस के किनारे-किनारे ड्राइव करते हुए उस पार के खेतों, घरों और लोगों का हम स्वच्छंदतापूर्वक जायजा ले रहे थे कि एकाएक सामने आकर बी.एस.एफ. के एक जवान ने हमारी गाड़ी रुकवाई और पूछताछ करने लगा। हमने जब बताया कि हम लोग दिल्ली से हैं और बॉर्डर घूमने आए हैं तो उसने मेरे आईकार्ड की माँग की। पहचान-पत्र की कड़ी जाँच के पश्चात् उसने बताया, इस रोड पर निजी वाहनों को चलने की इजाजत नहीं है, आप लोग आगे आनेवाले मोड़ से दाईं ओर गाँव की तरफ चले जाएँ। हमने वैसा ही किया और जिस गाँव में पहुँचे, वह मुसलिम बस्ती थी। बड़ी सी मसजिद भी दिख रही थी। वहीं मिला दसवीं सदी के बौद्ध स्तूपों का एक पुरातन स्थल। एक तरफ मसजिद और दूसरी तरफ बौद्ध पूजास्थलों के भग्नावशेष। विशाल सीढ़ियों एवं कक्षों के खँडहर नालंदा की याद दिला रहे थे। यानी पंद्रह सौ वर्ष पहले उस वक्त अखंड भारत में बौद्ध प्रचारक यहाँ भी आए थे। अब यह क्षेत्र दो देशों और संप्रदायों के बीच बँटकर कितना संवेदनशील हो गया है।

यद्यपि इस यात्रा में पूर्वोत्तर की सात में से सिर्फ तीन बहनों से ही मिल पाया, किंतु जो अनुभव हुए, उनसे उनके परिवार के अंतरंग समीकरणों का संपूर्ण अनुमान लगाया जा सकता है और फिर मेरी यह व्यक्तिगत अन्यतम उपलब्धि तो है ही कि पूर्व में देश की सीमा को छूकर मैंने अपने चार ग्रेटर धाम भी पूरे कर लिये।

४० करिश्मा अपार्टमेंट्स
२६-इंद्रप्रस्थ एक्सटेंशन, दिल्ली-११००९२
दूरभाष : ९७१७७७२०६८

पीले पंखोंवाली तितली

● मोहम्मद साजिद खान

उस दिन मौसम बहुत सुहावना था। नवंबर का यह माह पीले पंखोंवाली तितली के लिए सबसे अच्छा था। उसे तलाश थी किसी ऐसे पेड़ की, जहाँ वह अपने अंडे दे सके।

आखिर उसे नारंगी का एक पेड़ दिख ही गया, ''ओह! मेरे लिए तो यही सबसे अच्छी जगह है। अब मैं आराम से अपने अंडे दे सकती हूँ।''

तितली ने जल्दी से एक अच्छी सी पत्ती की तलाश शुरू कर दी, जहाँ वह अपने अंडों को सुरक्षित रख सके। उसने नारंगी के पेड़ की एक ऐसी पत्ती चुनी, जो पुरानी और दिखने में मजबूत थी। उसने उसपर अंडे दिए और फिर से नील गगन में आ गई।

अचानक उसे चक्कर आने लगा।

''अरे! मुझे यह क्या हो रहा है?'' उसका माथा चकराने लगा।

तभी उसे याद आया, 'ओह! अंडों की खुशी में मैं तो भूल ही गई कि अब दुनिया से मेरे जाने का समय आ गया है। मैंने अपना जीवन-चक्र तो पूरा कर लिया। अफसोस, मैं अपने बच्चों को नहीं देख सकूँगी!' यह सोचते हुए तितली हमेशा-हमेशा के लिए हवा में ही तैर गई।

अब उसके अंडों की सुरक्षा भाग्य-भरोसे थी। कुछ समय बाद अंडों से लार्वे निकल आए। तितली की मेहनत कामयाब हुई। धीरे-धीरे लार्वों का आकार बढ़ने लगा। पर उस दिन ऐसी आँधी आई कि मत पूछो। तेज हवा से वह पत्ती टूट गई, जिस पर माँ ने उन्हें अंडों के रूप में जन्म दिया था। बारिश भी हुई, पर सभी लार्वे सुरक्षित थे, क्योंकि उन्होंने अपना पुराना स्थान बदल जो लिया था।

बीस दिनों के सुरक्षित समय ने उन्हें लार्वे से कैटरपिलर बना दिया। अब वे रस्सी की तरह लहरदार डिजाइनवाले, हरे-हरे सुंदर दिख रहे थे। उन्हें अब मौसम की बेरुखी का भी कोई डर नहीं था। वे पेड़ पर धमाचौकड़ी करने लगे। नारंगी का पेड़ पेरशान हो उठा कि कब वे यहाँ से जाएँ और उसे सुकून मिले, क्योंकि वे उसकी पत्तियों को बुरी तरह से खत्म करते जा रहे थे।

चार-पाँच दिन बीत गए। अब कैटरपिलर अपने को एक विशिष्ट कवच में बंद करके सुरक्षित थे, जिसे चिड़िया भी नहीं खा सकती थी। वे बन गए थे मजबूत कवच से ढके हुए प्यूपा! उन्होंने नारंगी के पेड़ को मजबूती से पकड़ रखा था। उन्हें तो बस इंतजार था, नन्ही-नन्ही, मखमली तितलियों में बदलने का। सप्ताह भर में ही वे प्यूपा से तितलियों में बदलनेवाले थे।

और आखिर वह दिन भी आ गया, जब वे धीरे-धीरे तितलियों में बदलने लगे। यह उनका सबसे सुखद क्षण था। प्यूपा से एक-एक करके तितलियाँ बाहर आतीं और इठलाते हुए खुले आसमान में उड़ जातीं! पीले-पीले रंगों में रँगी हुई वे तितलियाँ बिल्कुल पतंगी कागज सी लहरा रही थीं।

सुपरिचित बाल-साहित्यकार। अब तक बाल-साहित्य की आठ तथा इससे इतर चार (काव्य, उपन्यास, नाटक, लघुकथा आदि) पुस्तकें प्रकाशित। कई शोध स्मारिकाओं का संपादन। छोटे-बड़े दर्जनों सम्मान-पुरस्कार प्राप्त।

पर एक प्यूपा के साथ कुछ ऐसा दुर्भाग्य हुआ कि वह पेड़ से नीचे गिर गया। दरअसल जब माली बाबा बगीचे की सफाई कर रहे थे तो वह गिर गया। अब बेचारा कर भी क्या सकता था, उसके सब साथी तितलियों में बदलकर उड़ चुके थे।

जब माली बाबा ने जमीन की गुड़ाई की तो प्यूपा मिट्टी में दब गया। अब उसे वह नमी और ताप नहीं मिल पा रहा था, जो उसे एक तितली बनने के लिए चाहिए था। वह बहुत लंबी नींद में चला गया। एक ऐसे समय में, जहाँ वह कब सही वातावरण पाएगा और तितली में बदलेगा, इसकी कोई उम्मीद नहीं थी।

फिर तो दिन गुजरे, महीने गुजरे और साल बीत गए, पर वह मिट्टी में ही दबा रहा। यह फिर से सर्दियों की शुरुआत थी। माली बाबा बगीचे की सफाई कर रहे थे। अचानक प्यूपा के भाग्य ने साथ दिया और वह गुड़ाई करते हुए पत्तियों के ढेर पर जा गिरा। वह उसके भाग्य का सबसे सुंदर दिन था। उसे सही परिस्थितियाँ मिलीं और वह एक नन्ही एवं प्यारी सी तितली में बदल गया।

उसने पहली बार उड़ान भरी और उड़ते हुए दुनिया को देखा। दुनिया का हर एक नजारा उसे बहुत अच्छा लगा। वह भूल चुकी थी कि कभी उसके भाई-बहन भी हुआ करते थे। अब तक तो उनकी बहुत सारी पीढ़ियाँ बीत चुकी थीं। अब तितली को तलाश थी किसी ऐसे दोस्त की, जो उससे बातें कर सके।

''कहाँ उड़ी जा रही हो, नन्ही पीलू?'' अचानक किसी की आवाज सुनकर उसने देखा तो एक ड्रैगनफ्लाई उसके साथ-साथ उड़ रहा था। उसे लगा, जैसे वह उसका अच्छा साथी बन सकता है, सो वह बोल उठी, ''अरे! क्या तुम मेरे साथ सैर करोगे?''

''हाँ पीलू, जरूर करूँगा। पर यह तो बताओ, मैंने तुम्हें जो नाम दिया है, वह तुम्हें पसंद है?''

''हाँ, बहुत ही प्यारा नाम है! मैं आपको किस नाम से पुकार सकती हूँ?''

''मुझे ड्रैगू कह सकती हो।''

''ओह ड्रैगू भैया, क्या मुझे अपना दोस्त बनाओगे?''

''हाँ-हाँ, क्यों नहीं!''

''तो चलो, कहीं घूमते हैं।''

''बिल्कुल, मैं तैयार हूँ।'' कहकर ड्रैगू उड़ चला।

पर पीलू के लिए ड्रैगू से होड़ ले पाना मुश्किल था। ड्रैगू के पंख छोटे और मजबूत थे। वह हैलीकॉप्टर की तरह कभी इधर जाता तो कभी जूँऽऽऽ करता उधर चला जाता। पीलू तेज उड़ने की कोशिश करती तो शरारती हवा उसे लहरा देती। बेचारी बड़ी-बड़ी पत्तियों जैसे पंखों को ठीक से सँभाल भी नहीं पाती कि हवा फिर गुदगुदी लगाकर चली जाती।

काफी देर हो गई। ड्रैगू ने कहा, ''मुझे तो भूख लग आई। क्या तुम कुछ नहीं खाओगी?''

''हाँ, भूख तो मुझे भी लगी है।'' पीलू ने कहा, ''पर मेरे खाने लायक यहाँ है ही क्या?'' वह चारों ओर नजरें दौड़ाने लगी।

''तो ठहरो, मैं अभी खाने-पीने का बंदोबस्त करता हूँ।'' कहता हुआ ड्रैगू उड़ चला।

जब थोड़ी देर बाद लौटा तो उसके मुँह में छोटे-छोटे बहुत सारे पतंगे थे। उसने पेड़ की एक पत्ती पर उन्हें रखते हुए कहा, ''आओ पीलू, इन्हें खाते हैं।''

पीलू चौंक उठी, ''अरे ड्रैगू भैया! मैं यह कहाँ खाती हूँ?''

''मेरी दोस्ती के नाम ही सही, कुछ तो खा लो।'' ड्रैगू ने कहा।

''नहीं भैया!'' पीलू को मिचली आने लगी, ''मैं इसे खाऊँगी तो मर जाऊँगी। मेरा भोजन तो फूलों का ताजा रस है।''

''ओह! मैं तो यह भूल ही गया था।'' ड्रैगू शर्मिंदा होता हुआ बोला, ''फिर तुम क्या करोगी?''

''मैं नीचे जाकर खूब सारे फूलों पर इतराऊँगी-मँडराऊँगी और चुपके-चुपके उनका रस पी लूँगी। तब तक तुम अपना भोजन करो।''

पीलू की बात सुनकर ड्रैगू को मजा आ गया। वह भी मीठे रस की कल्पना करने लगा। पर वह रस पी भी तो नहीं सकता था, क्योंकि उसके पास पीलू जैसा सूँड़वाला मुँह जो नहीं था।

थोड़ी ही देर बाद पीलू नीचे उतर आई और अपना पेट भरने लगी। उसे नए-नए फूलों से मिलकर बहुत मजा आ रहा था। धीरे-धीरे रात घिर आई। अब पीलू को नींद आने लगी। वह कोई पेड़ तलाशने लगी, जिस पर आराम कर सके। अचानक उसे एक पेड़ दिख गया। पेड़ बरगद का था। वह उसकी एक पत्ती पर चिपक गई।

''वहाँ कहाँ बैठी हो तितली रानी, नीचे आ जाओ।''

''कौन?'' तभी किसी अनजानी आवाज को सुनकर पीलू ने कान खड़े किए।

''मैं हूँ, बेले का फूल!''

''ओह! मैं तो डर ही गई थी।''

''हाँ, तुम नीचे आकर मुझ पर सो जाओ। यहाँ कोई खतरा नहीं है। उस पेड़ पर तो बंदरों का बसेरा है। सारी रात धमाचौकड़ी करते रहते हैं। कहीं जरा सा धक्का लगा तो जाने क्या हो!''

''ओह!'' पीलू बेले के फूल पर आ गई।

''तुम बहुत अच्छी और भोली हो। तुम्हारा नाम क्या है?''

''मैं पीलू हूँ!'' वह चहक उठी, ''आज का दिन मेरे लिए शुभ है। आज मुझे दो दोस्त मिल गए, एक ड्रैगू भैया और दूसरे आप।''

फिर तो पीलू देर रात तक बेले के फूल से बातें करती रही। बातें करते-करते उसे कब नींद आ गई, पता ही नहीं चला। अगली सुबह वह ड्रैगू के साथ उड़ने का आनंद लेने लगी और दिन भर मस्ती करती रही।

इसके बाद तो पीलू को ड्रैगू के साथ उड़ने का चस्का लग गया। वह उसके साथ दूर-दूर तक उड़ जाती। धीरे-धीरे चार दिन कैसे बीत गए कि पता ही नहीं चला। उसने उदास होकर कहा, ''ड्रैगू भैया, अब आज के बाद मैं तुम्हें कभी नहीं मिलूँगी!''

''क्यों?'' ड्रैगू ने आश्चर्य और दुःख से कहा।

''मेरा समय पूरा हो चुका है। अब मैं इस दुनिया को हमेशा-हमेशा के लिए छोड़नेवाली हूँ!''

''पर अभी तो एक सप्ताह भी नहीं हुआ है।'' ड्रैगू उदास हो गया।

''क्या करूँ, हमारा जीवन ही इतना होता है।'' पीलू ने कहा, ''इसमें हमारा कोई वश नहीं।''

''मुझे बहुत अफसोस होगा तुम्हें खोकर।'' ड्रैगू की आँखें भर आईं। तब पीलू ने कहा, ''समय कम है ड्रैगू भैया, क्या तुम मेरे लिए एक काम कर सकते हो?''

''हाँ, बताओ पीलू, मैं तुम्हारे लिए क्या कर सकता हूँ?'' ड्रैगू ने उदास होकर कहा। ''क्या आस-पास कोई ऐसा पेड़ बता सकते हो, जहाँ मैं अपनी अगली पीढ़ी को जन्म दे सकूँ।''

ड्रैगू भावुक हो गया। भर्राए गले से बोला, ''हाँ, यहाँ से पश्चिम की ओर एक नीबू का बाग है। क्या वह तुम्हारे काम का हो सकता है?''

''हाँ-हाँ, बिल्कुल।'' पीलू ने कहा, ''वही तो चाहिए।'' कहती हुई पीलू उड़ चली। पर जाते-जाते वह उदास नजरों से ड्रैगू को देखती रही। ड्रैगू भी उसे भीगी नजरों से आखिरी क्षण तक देखता रहा, जब तक कि वह नजरों से ओझल नहीं हो गई।

ड्रैगू दो-तीन दिन तक उसका इंतजार करता रहा कि हो सकता है वह लौट आए और कहे, 'ड्रैगू भैया, मैं लौट आई, आपके साथ उड़ने का मजा लेने के लिए! मैंने तो मरने की बात झूठ कही थी।'

पर कई दिन और महीने गुजर गए, लेकिन पीलू वापस न आई। एक दिन ड्रैगू की आँखों से उम्मीद का आखिरी आँसू भी टपक पड़ा, 'सचमुच! अब पीलू कभी वापस नहीं आएगी। वह अपनी नई पीढ़ी को जन्म देकर हमेशा-हमेशा के लिए चली गई शायद!'

जी.एफ. पोस्ट ग्रैजुएट कॉलेज
शाहजहाँपुर-२४२००१(उ.प्र.)
दूरभाष : ०९४५०३०३६९६

राही के तीर

● राजेश जैन 'राही'

सत्ता की सबको गरज, सबको है दरकार।
शायर से अखबार तक, खड़े मिले दरबार॥
बात-बात में हो गई, उनकी भी पहचान।
खादी के नीचे दिखा, रेशम का बनियान॥
दस्तक देंगे द्वार पर, खुशियों के प्रस्ताव।
बाबूजी सीख का, घर में अगर प्रभाव॥
सपनों के प्रस्ताव पर, छोड़ा बेशक गाँव।
मात-पिता दिल में अगर, नहीं थकेंगे पाँव॥
सैनिक सीमा पर लड़े, दे दे अपनी जान।
बल्ला हावी देश पर, पढ़े कौन बलिदान॥
छक्कों पर सट्टा लगे, हार-जीत पर दाँव।
कटे शीश लेकिन नहीं, हलचल होती पाँव॥
छप्पन ने खारिज किया, अस्सी का प्रस्ताव।
राजनीति के बाग में, फलते केवल भाव॥
गले लगाया गैर ने, अपने बेशक मौन।
पथिक तुम्हारा कारवाँ, रोक सकेगा कौन॥
होता रहे चुनाव तक, वादों का अनुलोम।
एक बार कुरसी मिले, केवल याद विलोम॥
शीर्षासन है काम का, उपयोगी हठयोग।
राजनीति की क्लास में, शामिल आखिर योग॥

बादल को मंजूर है, धरती का प्रस्ताव।
रिमझिम बारिस प्रेम का, पहला लगे पड़ाव॥
मौसम सब फीके हुए, सपने सभी उदास।
प्रियतम आओ पास अब, लेकर तुम मधुमास॥
कुरसी काबू में रहे, चमके खुब शरीर।
कौन सुने बंगाल में, बेकाबू कश्मीर॥
सभी वक्त की धार पर, क्या जनता क्या राज।
तख्त बदलकर रो रही, लावारिस अब प्याज॥
पहली बारिस प्रेम की, पहला वह अध्याय।
आज तलक भींगा हुआ, मन मेरा असहाय॥
नजरों से कुंदन करो, बातों से पुखराज।
शाहजहाँ मुझको करो, बनकर तुम मुमताज॥
सावन लेकर आ गया, मस्ती का प्रस्ताव।
आओ तुम भी दौड़कर, मानो प्रिये सुझाव॥
मिले नहीं परदेश में, अपनों का वो प्यार।
सावन के झूले यहाँ, यहीं तीज-त्योहार॥
पुल टूटा दुर्भाग्य से, बची भाग्य से जान।
साहबजी सोए हुए, जाग रहे भगवान्॥
खेतों में बोता रहा, शोनित रोज किसान।
फसल काटकर ले गए, कर्ज और लगान॥

बहुमत से पारित हुआ, धोखे का प्रस्ताव।
पूछे कौन कबीर को, खारिज सभी सुझाव॥

आज्ञाकारी काम के, रहें हमेशा मौन।
निर्वासित जो पूछते, इसके पीछे कौन॥
'बच्चन' ने सबको दिए, प्रेम पगे संदेश।
नहीं 'कबीरा' एक के, पूजे सारा देश॥
अभिनय से ऊपर रहे, राजनीति से दूर।
कविता की खुशबू स्वयं, चंदन और कपूर॥
नेताजी तुलने लगे, अब सब्जी के साथ।
फँसा टमाटर फेर में, रोती प्याज अनाज।।
संसद् में सब छूट है, हास रहे उपहास।
नेताजी को हो गया, अभिनय का अभ्यास॥
हुई मतों की घोषणा, पूरा हुआ चुनाव।
पारित होगा जल्द ही, रोटी का प्रस्ताव॥
महँगाई छज्जे चढ़ी, नीचे खड़ा गरीब।
राजनीति देकर गई, आखिर पुनः सलीब॥
सजा मुकर्रर हो गई, पाप कर्म की आज।
तबादले की घोषणा, लेकर आया राज॥
न्याय सभी को एक सा, अवसर मिले समान।
आरक्षण हो योग्य का, महके हिंदुस्तान॥
कुदरत ने खारिज किया, ख्वाबों का प्रस्ताव।
वायुयान में प्रेयसी, पड़ी कागजी नाव॥
तू ही तू मुझको दिखे, देखूँ मैं जिस ओर।
रात चाँदनी तू प्रिये, तू ही उजली भोर॥
धड़कन की पेशी हुई, धमकी के दरबार।
धक-धक तेरी साथिया, ध्वनि एक बस प्यार॥
सावन की देखो धमक, देखो तुम झंकार।
आओ अपने देश में, प्रिये बरसता प्यार॥
संसद् में चलते नहीं, अनुशासन के पाठ।
पाँच साल का दाखिला, नेताजी के ठाठ॥
आरक्षण हटता नहीं, हटे पुराने नोट।
खतरा है रूठे नहीं, बड़ा लाड़ला वोट॥
जंगल में सूखा पड़ा, आई बाढ़ पठार।
कुदरत के आक्रोश का, मानव जिम्मेवार॥
नदियों की गुनगुन रुकी, दूषित हैं तालाब।
कुदरत की नाराजगी, लाई है सैलाब॥
उत्सव की उद्घोषणा, जनता भी तैयार।
सत्ता फिर घोड़ी चढ़ी, अच्छी जीमणवार॥
विज्ञापन छपते रहे, छपे न रचनाकार।
सुर्खी है अखबार की, हिंसा, भ्रष्टाचार॥

राजतिलक अच्छा लगे, बना रहे उल्लास।
राजनीति के पाठ से, निकल चुका वनवास॥
गंगाजी के घाट पर, चर्चा बेहद खास।
दूषण का मसला नहीं, राजतिलक की आस॥
मोह नदी की बाढ़ का, काफी तेज बहाव।
बेटों के कारण बही, बाबूजी की नाव॥
राज बदला रात में, आई खबर बिहान।
बहुमत लेकर लापता, नालायक संतान॥
राजतिलक पूरा हुआ, मुद्दों को अवकाश।
नेताजी हैं सैर पर, बाँहों में आकाश॥
नैतिकता के नाम पर, बनी नई सरकार।
रोजनामचा बाँचता, अक्खड़ भ्रष्टाचार॥
देश-प्रेम सबसे अहम, नैतिकता शृंगार।
बच्चों में आकर बसे, ईदगाह का प्यार॥

आई-१, राजीव नगर, रायपुर (छ.ग.)
दूरभाष : ९४२५२८६२४१

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' का जनवरी अंक नववर्ष की शुभकामनाओं सहित प्राप्त हुआ। संपादकीय में वैश्विक कूटनीति का बहुत अच्छा विस्तृत से विश्लेषण पढ़ने को मिला। नेताजी और रानी झाँसी रेजीमेंट, इंदिरा गांधी क्षतिवर्ष, एक विस्मृत गांधी आदि विषयों पर चर्चा पढ़ने को मिली। प्रतिस्मृति में बाबू गुलाबराय के जन्मदिवस पर उनका हास्य-व्यंग्य का आलेख 'आलस्य भक्त' दिया, उन्हें स्मरण किया, अच्छा लगा। रमेशचंद्र शाह का आलेख 'अमृतलाल नागर का कथा-कृतित्व : एक दृष्टि' में नागरजी की रचनाओं, कहानियों की समीक्षा पढ़ने को मिली। रामदरश मिश्र की कहानी 'नौकरानी बेटी' में एक वृद्ध माता-पिता ने अपनी सेविका को बेटी जैसा सम्मान दिया, अच्छा लगा; जबकि पुत्र-पुत्रवधु ने इसका विरोध किया। प्रकाश मनु का आलेख 'बाल साहित्य : संभावनाओं का भरा आकाश' पढ़ा। उन्होंने अपने बाल साहित्य लेखन का विस्तार से वर्णन किया है। प्रेमपाल शर्मा का यात्रा-संस्मरण अत्यंत जानकारीपरक एवं रोचक है। श्रीमती मालती शर्मा की लंबी कविता 'ये कैसे प्रेम-प्रकरण' पढ़ी। ऋता शुक्ल की कहानी 'कभी न होगा अंत' पढ़ी। कहानी की भाषा शुद्ध हिंदी है। गोपाल चतुर्वेदीजी का व्यंग्य 'देश का एक और त्योहार : चुनाली' बहुत अच्छा व्यंग्य है। ***—विनोद शंकर गुप्त, हिसार***

'साहित्य अमृत' का जनवरी अंक प्राप्त हुआ। संपादकीय 'वैश्विक कूटनीति में भारत' की उल्लेखनीय उपलब्धियों और राजनीति से तकनीकी, वाणिज्यीय क्षेत्र तक व्यापकता का जो परचम लहराया है, नि:संदेश वह प्रधानमंत्रीजी का सफलतम प्रयास और गहरी दृष्टि, सत्यं-शिवं सुंदरम् की परिणति है। प्रतिस्मृति स्वरूप बाबू गुलाबराय का लेख वैचारिक उत्कर्ष लिये है। आचार्य शुक्ल के पश्चात् हिंदी के महान् निबंधकार थे बाबू गुलाबराय। अमृतलाल नागर के कथा-कृतित्व पर रमेशचंद्र शाह का विचार विशिष्ट लगा, उनके कथा-साहित्य के अनेक आयाम हैं, जिनके भीतर और पैठ करनी होगी। 'नौकरानी बेटी' रामदरश मिश्र की कहानी कई स्तरों पर विश्वसनीयता का आभास कराती है। 'थोड़ी सी नेकी' (वासुदेव) भावुकतापूर्ण ढंग से मुखरित है। ऋता शुक्ल की कहानी में जीवन तीव्र गति से आगे बढ़ रहा है। कोई भी अनुभूति पुरानी नहीं पड़ती का अहसास कराती कहानी है 'कभी न होगा अंत'। अन्य कथात्मक रचनाएँ भी अपने कथ्य-शिल्प में सधी-गठी एवं पठनीय हैं। 'आत्मजयी' के विस्तृत सृजेता कुँवर नारायण के प्रति स्मरण-लेख ने उनसे अनेक मुलाकातों की स्मृतियों को ताजा कर दिया। मालती शर्मा ने प्रेम-प्रकरण को प्रश्नांकित कर नारी विमर्श के कुछ नए गवाक्ष खोल दिया है। 'शब्द पूँजी है हमारी' रेखा लोढ़ा स्मित की कविता किसी बँधे-बँधाए विषय व्यक्त कथ्य की कतई वकालत नहीं करती। यात्रा-संस्मरण 'यह है अपना राजपूताना' (प्रेमपाल शर्मा) में उसके अतीत के गौरवपूर्ण इतिहास का जीवंत चित्रण, अनुभव और अनुभूति को तात्त्विक रूप में दरशाता है। 'हल्दीघाटी' की जिस पावन माटी का जिक्र लेखक ने किया है, हमें भी दर्शन करने और तिलक लगाने का सौभाग्य मिला, वाकई वहाँ का वस्तुपरक इतिहास वृत्त प्रधान है। चेतक का समाधि स्थल व महाराणा प्रताप द्वारा चेतक की स्मृति में बनवाई छतरी का चित्र अथवा राणा प्रताप संग्रहालय का बुलंद प्रवेश द्वार या भीषण युद्ध की तसवीर अनायास ही राजपूताना वीरता और शौर्य की अमरगाथा से परिसिक्त कर देते हैं। संस्मरण में कथ्य-शिल्प और भाषा की इतनी सघनता, रोचकता और सहजता है कि पढ़ते हुए प्रतीत होता है—हम पढ़ नहीं रहे, साक्षात् सभी दृश्य देख रहे हों।

—डॉ. राहुल, नई दिल्ली

'साहित्य अमृत' का जनवरी अंक प्राप्त हुआ। उगते सूरज की लालिमा वाले मुखपृष्ठ के साथ यह अंक पठनीय रहा। सबसे पहले मैं लघुकथाएँ, उसके बाद व्यंग्य, साथ में प्रेमपाल शर्मा जी का यात्रा-वृत्तांत पढ़ने को प्राथमिकता देता हूँ। इस बार 'यह है अपना राजपूताना...' पढ़ते समय सारे दृश्य चलचित्र की भाँति प्रकट होने लगे। बिना खर्चा किए यात्रा करने का आनंद मिला। कोमल वाधवानी (उज्जैन) की लघुकथाओं में रस्य-कथ्य-तथ्य-सत्य की गहराई का सुंदर समावेश लगा। अंत में यही कहना चाहूँगा कि पत्रिका की लघुकथाएँ अद्‌भुत-अनूठी होती हैं। ***—अशोक वाधवाणी, गांधी नगर (गुजरात)***

'साहित्य अमृत' का जनवरी अंक नई ऊर्जा व उजास लिये है। संपादकजी ने संपादकीय में अमेरिकी राष्ट्रपति की चिंता, कार्यशैली और अन्य राष्ट्रों के प्रति दृष्टिकोण पर बड़ी बारीकी से लिखा है। प्रतिस्मृति में बाबू गुलाबराय का निबंध बहुत ही श्रेष्ठ है। रमेशचंद्र शाह ने अमृतलाल नागर की कहानियों, विशेषकर उपन्यासों के कथ्य, शिल्प, भाषा और भाव-संवेदना पर उद्धरण सहित बहुत ही सहज और सुंदर ढंग से लिखा है। रामदरश मिश्र की 'नौकरानी बेटी' बहुत ही संवेदित करनेवाली मर्मस्पर्शी कहानी है। प्रकाश मनु ने 'बाल-साहित्य संभावनाओं भरा आकाश' लेख बहुत ही संजीदगी व तन्मयता से लिखा है। लेख में विषयों का एक क्रम है, एक लय है, जो आद्यंत रहती है। मनुजी को पढ़ते हुए बहुत अच्छा लगा। मालती शर्मा की लंबी कविता 'ये कैसे प्रेम-प्रकरण?' बहुत ही उद्वेलित करती है और हमारी मानसिकता पर प्रश्न-चिह्न भी लगाती है। कृष्ण कुमार यादव का कुँवर नारायण को स्मरण करना बहुत ही सराहनीय है। समग्र रूप में पूरा अंक बहुत ही पठनीय एवं संग्रहणीय है, इसके लिए पूरी संपादकीय टीम को ढेर सारी शुभकामनाएँ।

—अशोक बैरागी, सोनीपत (हरि.)

'साहित्य अमृत' का जनवरी अंक प्राप्त हुआ। हमेशा की भाँति श्रेष्ठ साहित्य पढ़ने को मिला। बहुआयामी संपादकीय (आलेख) में भारत की विश्व में स्थिति के साथ आतंकवाद पर गहरी चिंता वाजिब है। साथ ही कुछ जानी-मानी हस्तियों से संबंधित जानकारी भी मिली। संस्मरण आत्मजयी कुँवर नारायण, तुलसी-रचनावली संवाद, चुनाली, कान्हा ने गऊएँ चराईं, यह अपना राजपूताना, लोकगीतों में...आदि पठनीय रचनाएँ हैं। कहानियों में समाज के यथार्थ दर्शन हुए। ऐसी श्रेष्ठ पत्रिका के प्रकाशन हेतु पूरी टीम को बधाई।

—सुरेश प्रकाश शुक्ल, लखनऊ

'साहित्य अमृत' का नवंबर अंक प्राप्त हुआ। संपादकीय लेख 'ढोंगी बाबाओं को कोई बढ़ावा न दे' हृदयस्पर्शी लगा। यह सच है कि शिक्षित व्यक्ति भी ढोंगी बाबाओं की नाटकीय वार्त्तालाप, रूप, रस, स्पर्श एवं धन-वैभव की संपन्नता से मोहित होकर उनके अनुयायी बन जाते हैं। जो बाद में उनके उस छूमंतर टोना से कभी नहीं निकल पाते हैं। उन्हें उनकी शरण (डेरा) में सभी प्रकार की सुविधाएँ उपलब्ध कराई जाती हैं, जिससे वे माता-पिता, परिवार की बिना परवाह किए बाबाओं के दर्शन और आशीर्वाद के प्रलोभन में उनके ही हो जाते हैं और वचन देकर उसे जीवन भर निर्वाह करने का संकल्प ले लेते हैं। वर्तमान में बढ़ती जा रही ढोंगी महात्माओं की संख्या सच्चे, संयमी संतों को भी घृणा के कठघरे में खड़ा करने लगी है।

—कुलभूषण सोनी, दिल्ली

वर्ग पहेली (१४९)

अगस्त २००५ अंक से हमने '**वर्ग पहेली**' प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान-विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ २८ फरवरी, २०१८ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें दो सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम-पते अप्रैल २०१८ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर '**वर्ग पहेली**', **साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (१४७) का शुद्ध हल

१ मुँ	ह	बो	२ ला	■	३ सि	ह	४ र	५ न
ह	■	■	६ ल	ठि	या	■	७ ज	ग
८ ल	स	ल	सा	■	९ र	१० वि	क	र
गा	■	■	११ ग	त	■	रु	■	■
१२ ना	मं	१३ जू	र	■	१४ सि	द्ध	का	१५ म
■	■	झ	■	१६ सा	र	■	■	टि
१७ स	१८ त्या	ना	१९ श	■	२० के	स	रि	या
२१ न	ग	■	२२ गु	ला	ब	■	■	मे
२३ द	ना	द	न	■	२४ ल	गा	व	ट

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **श्री मोहन उपाध्याय**
२६/११७ किश्चियन गंज
विकासपुरी, अजमेर-३०५००१ (राज.)
दूरभाष : ०१४५-२६२९९५९

२. **श्री डी.एन. त्रिवेदी**
म.सं. ९, सनराइज एन्क्लेव
फेज-II, डोहरा रोड,
बरेली-२४३००६ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९४११९१९७८०

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई।

वर्ग-पहेली १४७ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री पुखराज वार्ष्णेय, दिनकर सहल, सुभाष शर्मा (दिल्ली), रजनीश कुमार त्रिवेदी (बरेली), शोभा दानी (नोएडा), मोहन जगदाले (उज्जैन), सरिता दशोत्तर (रतलाम), शिवशरण दुबे (कटनी), राजेश्वर प्रसाद मिश्र (जबलपुर), अपर्णा गर्ग (ग्वालियर), रुक्मणी संगल (पटियाला), नीरजा शर्मा (अहमदाबाद), विनीता सहल (मुंबई), श्याम नंदन मिश्र (चंबा), जयंत नाहड़िया (महेंद्रगढ़)।

बाएँ से दाएँ—

३. कैलाश (४)
५. सभा (४)
७. भय से कंपित शरीर में एक लहर (४)
९. सरल चित्त का (४)
११. किसी मनुष्य की हत्या (४)
१२. अधपका भोजन (४)
१४. सतर्क होने का भाव (४)
१६. नापने का काम दूसरों से करवाना (४)
१७. तीर रखने का चोंगा (४)
१९. वस्त्र का वह टुकड़ा, जो थान की नाप से बच जाता है (४)

ऊपर से नीचे—

१. साधारण (२)
२. क्रम (४)
३. दही से बना एक पेय पदार्थ (४)
४. घर का मालिक (३-३)
६. आक्रमण (३)
८. मनुष्यों में श्रेष्ठ (४)
९. रसोई की परीक्षा करनेवाला (२,४)
१०. गुरुत्व (४)
१३. झूठी प्रशंसा करनेवाला (४)
१४. जिसकी परंपरा बहुत पुरानी हो (४)
१५. गुड़-तिल आदि से बनी एक चिक्की (३)
१८. सूर्य का एक ग्रह (२)

वर्ग पहेली (१४८) का हल अगले अंक में।

वर्ग पहेली (१४९)

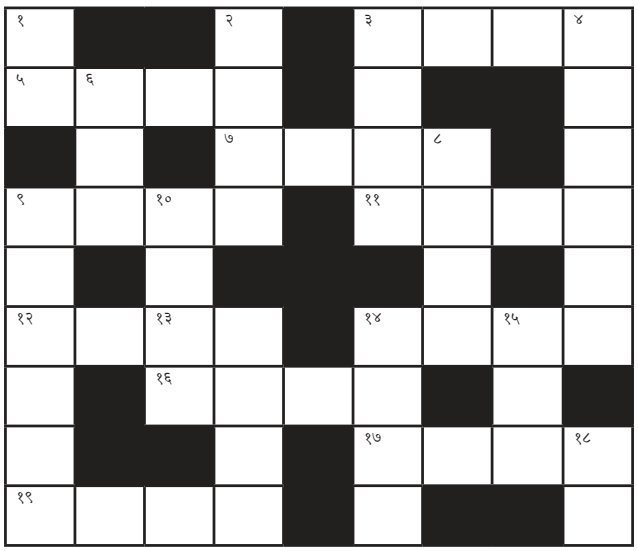

प्रेषक का नाम : .....

पता : .....

.....

.....

दूरभाष : .....

'टर्निंग बैक' कृति लोकार्पित

२७ दिसंबर को फैजाबाद के राममनोहर लोहिया विश्वविद्यालय में आयोजित अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी में डॉ. शालीन कुमार सिंह द्वारा संकलित काव्य-कृति 'टर्निंग बैक' का लोकार्पण प्रो. मनोज दीक्षित एवं स्वामी चिन्मयानंद सरस्वती द्वारा किया गया। □

'गाँव मेरा देस' कृति लोकार्पित

विगत दिनों नई दिल्ली के गांधी शांति प्रतिष्ठान के सभागार में श्रीमती चित्रा मुद्गल की अध्यक्षता में लेखक-चिंतक श्री भगवान सिंह की कृति 'गाँव मेरा देस' का लोकार्पण किया गया। मुख्य अतिथि श्री देवी प्रसाद त्रिपाठी एवं विशिष्ट अतिथि श्री मुकेश भारद्वाज ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री ओम निश्चल ने किया। □

'माँ से प्यारा नाम नहीं' कृति लोकार्पित

विगत दिनों राजसमंद, राजस्थान में अणुव्रत विश्व भारती काँकरोली के सभागार में श्री प्रेमचंद बेरवाल की अध्यक्षता, श्री हरिओम सिंह राठौड़ के मुख्य आतिथ्य एवं सर्वश्री नगेंद्र कुमार मेहता 'भव्य', कमर मेवाड़ी, फतहलाल गुर्जर 'अनोखा', त्रिलोकीमोहन पुरोहित, देवकीनंदन गुर्जर के विशिष्ट आतिथ्य में श्री टीकमचंद बोहरा 'अनजाना' की सद्य:प्रकाशित कृति 'माँ से प्यारा नाम नहीं' का लोकार्पण संपन्न हुआ, जिसमें मंचस्थ अतिथियों सहित अन्य अतिथियों ने भी अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री दिनेश श्रीमाली ने किया तथा आभार श्री मधुप्रकाश लड्ढा ने व्यक्त किया। □

'ये जीवन है' कृति लोकार्पित

विगत दिनों बुरहानपुर में कला, साहित्य एवं संस्कृति को समर्पित संस्थान 'आह्वान' का ठाकुर भगवानसिंह अलंकरण समारोह श्री रामधारी मित्तल के मुख्य आतिथ्य एवं श्री कमलेश शाह के विशिष्ट आतिथ्य में आयोजित किया गया, जिसमें सर्वश्री संतोष परिहार, तेजपाल भट्ट, श्याम ठाकुर ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री अनिल मिश्रा ने किया तथा आभार श्री कैलाश जयवंत ने व्यक्त किया। □

लोकार्पण एवं सम्मान समारोह संपन्न

विगत दिनों राजस्थान में विनायक विद्यापीठ, भक्तिपुरम में डॉ. गौरांगशरण देवाचार्य की अध्यक्षता एवं पद्मश्री डॉ. रमाकांत शुक्ल के मुख्य आतिथ्य में श्री विनोद बब्बर की रचनात्मकता पर केंद्रित कृति 'शिक्षक से लोक शिक्षक तक' का लोकार्पण किया गया। इस अवसर पर डॉ. राहुल को भारतीय संस्कृति, साहित्य, पत्रकारिता, कला, समाजसेवा के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान के लिए 'प्रेरणा-सम्मान' प्रदान किया गया। आभार डॉ. कुमावत ने व्यक्त किया। □

श्री भगवती प्रसाद द्विवेदी सम्मानित

३० दिसंबर को पटना के बिहार इंडस्ट्रीज एसोसिएशन हॉल में हम और आप फाउंडेशन के चौथे स्थापना दिवस के अवसर पर हिंदी-अंग्रेजी-भोजपुरी के लोकसाहित्य मर्मज्ञ पं. गणेश चौबे की स्मृति में कवि श्री आलोक धन्वा द्वारा श्री भगवती प्रसाद द्विवेदी को 'पं. गणेश चौबे साहित्य सम्मान' से सम्मानित किया गया, जिसके अंतर्गत उन्हें प्रशस्ति-पत्र, स्मृति-चिह्न, शॉल, उपहार एवं ग्यारह हजार रुपए की राशि भेंट की गई। □

परिधि सम्मान समारोह संपन्न

७ जनवरी को सागर की साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक संस्था 'हिंदी-उर्दू मजलिस' के तत्त्वावधान में बड़ा बाजार स्थित बी.एस. जैन धर्मशाला में श्रीमंत सेठ नरेश चंद जैन की अध्यक्षता में आयोजित 'परिधि सम्मान समारोह' के मुख्य अतिथि डॉ. अजय तिवारी एवं विशिष्ट अतिथि श्री अनिल कर्मा थे। इस अवसर पर सर्वश्री मीना पिंपलापुरे, एन.पी. शर्मा व जीवन लाल जैन के सान्निध्य में दो सत्र आयोजित किए गए, जिसके प्रथम सत्र में 'परिधि' पत्रिका एवं डॉ. अनिल जैन के गजल-संग्रह 'जज्बा' को 'परिधि-सम्मान' से सम्मानित किया गया एवं द्वितीय सत्र में दर्जन भर कवियों ने रचना पाठ किया। □

सम्मान घोषित

विगत दिनों भोपाल में ललित कलाओं के लिए समर्पित 'स्पंदन' संस्था की ओर से २०१७ के सम्मानों के अंतर्गत सर्वश्री मंजूर एहतेशाम को 'स्पंदन कथा शिखर सम्मान', पवन करण व भगवानदास मोरवाल को 'स्पंदन कृति सम्मान', शिवनारायण को 'स्पंदन आलोचना सम्मान', शैलेंद्र सागर को 'स्पंदन साहित्यिक पत्रिका सम्मान', यतींद्र मिश्र को 'स्पंदन ललित कला सम्मान' तथा सत्येंद्र सिंह सोलंकी को 'युवा स्पंदन पुरस्कार' देने की घोषणा की गई। □

प्रो. सूर्यप्रसाद दीक्षित सम्मानित

२४ दिसंबर को कानपुर में साहित्य सृजन संस्था द्वारा आयोजित कृति विमर्श, सम्मान समारोह व पुरस्कार वितरण कार्यक्रम में 'राजेंद्र राव की प्रतिनिधि कहानियाँ' पर सर्वश्री नीलांबर कौशिक, जयराम सिंह एवं 'निराला की आत्मकथा' पर राजेंद्र राव, सतीश गुप्त व दया दीक्षित ने अपने विचार व्यक्त किए। प्रो. सूर्यप्रसाद दीक्षित को श्री राजेंद्र राव व श्रीमती दया दीक्षित द्वारा 'साहित्य सृजन सम्मान-२०१७' से सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें रजत प्रतीक-चिह्न, अंग वस्त्र व प्रशस्ति-पत्र भेंट किए गए। इस अवसर पर हिंदी भाषा की अंतर महाविद्यालयी व अंतर्विद्यालयी प्रतियोगिता के विजयी प्रतिभागियों को क्रमश: पाँच हजार रुपए का एक, इक्कीस सौ रुपए के दो तथा ग्यारह सौ रुपए धनराशि के चार पुरस्कार प्रदान किए गए। □

सम्मान समारोह संपन्न

२२ दिसंबर को 'टुडे न्यूज चैनल' एवं 'आरोग्य दर्पण' पत्रिका के तत्त्वावधान में नई दिल्ली के कॉन्स्टीट्यूशन क्लब में 'सोशल मीडिया और भारतीय संस्कृति' विषय पर राष्ट्रीय सेमिनार व राष्ट्रीय प्रतिभा सम्मान समारोह आयोजित किया गया, जिसमें श्री राजकुमार जैन राजन

को सर्वश्री शरद यादव, राम प्रकाश वर्मा व अन्य अतिथियों द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर उत्कृष्ट लेखन, प्रकाशन, संपादन, साहित्यकार सम्मान समारोह आयोजन, हिंदी भाषा के विकास व बाल कल्याण और बाल साहित्य के क्षेत्र में विशेष योगदान हेतु 'भारत गौरव सम्मान' से सम्मानित किया गया। श्री महेश मेनारिया को भी कार्यक्रम में सम्मानित किया गया। संचालन सुश्री श्रेया शुक्ला एवं श्री नवीन शुक्ला ने किया तथा आभार श्री रामप्रकाश वर्मा ने व्यक्त किया। ☐

श्री आलोक रंजन परस्कृत

२२ दिसंबर को नई दिल्ली में श्री विष्णु नागर की अध्यक्षता में संपन्न निर्णायक समिति की बैठक में सर्वश्री मधुसूदन आनंद, ओम निश्चल व देवेंद्र चौबे द्वारा वर्ष २०१७ के 'नवलेखन पुरस्कार' से श्री आलोक रंजन के दक्षिण भारत पर केंद्रित यात्रा-वृत्तांत को सम्मानित करने की घोषणा की गई। सम्मानस्वरूप उन्हें पचास हजार रुपए की राशि, प्रशस्ति-पत्र, वाग्देवी की प्रतिमा प्रदान की जाएगी। ☐

श्रीमती दिव्या शुक्ला सम्मानित

विगत दिनों दिल्ली के गांधी शांति प्रतिष्ठान में आयोजित समारोह में श्रीमती दिव्या शुक्ला को श्री विश्वनाथ त्रिपाठी एवं श्री देवेंद्र राज अंकुर के सान्निध्य में श्रीमती चित्रा मुद्गल द्वारा 'उन्नीसवाँ रमाकांत स्मृति कहानी पुरस्कार' प्रदान किया गया। इस अवसर पर स्व. रमाकांत की सद्य:प्रकाशित कृति 'दस प्रतिनिधि कहानियाँ' का लोकार्पण किया गया, जिसमें सर्वश्री विश्वनाथ त्रिपाठी, देवेंद्र राज अंकुर, प्रज्ञा पांडे, चित्रा मुद्गल एवं महेश दर्पण ने अपने विचार व्यक्त किए। ☐

श्री गिरीश पंकज सम्मानित

विगत दिनों नई दिल्ली के हिंदी भवन सभागार में डॉ. गोविंद व्यास द्वारा व्यंग्य लेखन के लिए दिया जानेवाला 'बाईसवाँ व्यंग्यश्री सम्मान' श्री गिरीश पंकज देने की घोषणा की गई है। सम्मानस्वरूप उन्हें एक लाख ग्यारह हजार एक सौ ग्यारह रुपए की राशि, वाग्देवी की प्रतिमा, प्रशस्ति-पत्र, रजत श्रीफल तथा शॉल भेंट किया जाएगा। ☐

श्री कैलाश मंडलेकर सम्मानित

विगत दिनों भोपाल के स्वराज भवन में आयोजित कार्यक्रम में श्री कैलाश मंडलेकर को 'ज्ञान चतुर्वेदी सम्मान' से सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें पंद्रह हजार रुपए की राशि एवं प्रतीक चिह्न भेंट किया गया। इस अवसर पर दो पुस्तकों एवं एक पत्रिका का विमोचन भी किया गया। संचालन श्री सुशील सिद्धार्थ एवं श्री विजी श्रीवास्तव ने किया। ☐

श्रीमती कीर्ति श्रीवास्तव सम्मानित

विगत दिनों भोपाल के हिंदी भवन में श्रीमती कीर्ति श्रीवास्तव को बाल साहित्य सृजन के लिए सर्वश्री रमेशचंद्र शाह, संतोष चौबे, बटुक चतुर्वेदी व प्रभुदयाल मिश्र द्वारा 'डॉ. मालती बसंत बाल साहित्यकार सम्मान-२०१७' से सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें स्मृति-चिह्न, प्रशस्ति-पत्र, नकद राशि, शॉल प्रदान किए। संचालन श्री कैलाश चंद्र जायसवाल एवं डॉ. प्रीति प्रवीण खरे ने किया। ☐

श्री पंकज सुबीर सम्मानित

विगत दिनों भोपाल के हिंदी भवन में आयोजित पंद्रहवीं शरद व्याख्यानमाला में पद्मश्री प्रो. रमेशचंद्र शाह की अध्यक्षता में डॉ. मुरली मनोहर जोशी द्वारा श्री पंकज सुबीर को 'शैलेश मटियानी स्मृति चित्र कुमार कथा सम्मान' से सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें शॉल, स्मृति-चिह्न तथा इक्कीस हजार रुपए की राशि भेंट की गई। ☐

श्रीमती मीरा जैन सम्मानित

विगत दिनों उज्जैन में अभिव्यक्ति विचार मंच, नागदा जं. द्वारा आयोजित समारोह में श्री थावरचंद गहलोत के मुख्य आतिथ्य में श्रीमती मीरा जैन को उनकी अनवरत श्रेष्ठ साहित्य साधना एवं साहित्य के क्षेत्र में अमूल्य योगदान हेतु श्री विश्वास सारंग द्वारा 'राष्ट्रीय अभिव्यक्ति गौरव सम्मान' सर्वश्री बाबू लाल जैन, शेखावत, सुरेंद्र मीणा की उपस्थिति में प्रदान किया गया। ☐

श्रीमती सुषमा मुनींद्र सम्मानित

विगत दिनों सतना में सुप्रसिद्ध लेखिका एवं समीक्षक श्रीमती सुषमा मुनींद्र को साहित्य अकादमी द्वारा घोषित इक्यावन हजार की राशि के 'अखिल भारतीय मुक्ति बोध पुरस्कार' एवं जबलपुर संस्था द्वारा ग्यारह हजार की राशि के 'गायत्री पुरस्कार' दिए जाने के लिए सर्वश्री संतोष खरे, प्रह्लाद अग्रवाल, अनूप अशेष, ए.आर. तिवारी, अजय तिवारी, बाबूलाल दाहिया, रामशैल गर्ग, विष्णुस्वरूप श्रीवास्तव, अरुण नामदेव, सुधाकर जैन, रामयश बागरी, गोरखनाथ अग्रवाल, रामदास गर्ग, आदित्य प्रताप सिंह ने प्रसन्नता व्यक्त करते हुए बधाई दी। ☐

पुरस्कार समारोह संपन्न

१७ जनवरी को मुंबई में महाराष्ट्र राज्य हिंदी साहित्य अकादेमी के तत्त्वावधान में आयोजित पुरस्कार समारोह में विशेष अतिथि केंद्रीय गृहराज्य मंत्री श्री हंसराज अहिर थे। महाराष्ट्र के शिक्षा मंत्री श्री विनोद तावड़े, मुंबई के महापौर श्री विश्वनाथ महादेश्वर, सांसद माजिद मेमन व पूनम महाजन, विधायक सर्वश्री अशोक 'भाई जगताप' व आशिष शेलार की प्रमुख उपस्थिति रही। इस अवसर पर सर्वश्री सूयकांत त्रिपाठी 'निराला', रामधारी सिंह 'दिनकर', हरिवंशराय बच्चन, भारतरत्न अटल बिहारी वाजपेयी, विंदा करंदीकर की कविताओं का पाठ किया गया। ☐

अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी एवं भारतीय लेखक शिविर संपन्न

१३-१४ जनवरी को वाराणसी में उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, साहित्य अकादेमी एवं विद्याश्री न्यास के संयुक्त आयोजन में भारतीय लेखक शिविर एवं 'हिंदी भाषा की परंपराएँ : प्रयोग और संभावनाएँ' विषय पर अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित की गई, जिसमें सर्वश्री सदानंद प्रसाद गुप्त, अच्युतानंद मिश्र, तात्याना, महेश्वर मिश्र, दिलीप सिंह, अरुणेश नीरन, दयानिधि मिश्र, लेखमणि त्रिपाठी, उमापति दीक्षित ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर मंचस्थ अतिथियों द्वारा श्री दिलीप सिंह की पुस्तकें 'उजड़े दयारों का बेबाक अफसान' व 'कहाँ-कहाँ से गुजर गया' तथा विद्याश्री न्यास के वर्ष २०१७ के आयोजन से संबंधित पुस्तक

'हिंदी साहित्य में सांस्कृतिक संवेदना और मूल्यबोध' का लोकार्पण किया गया। द्वितीय सत्र में डॉ. सदानंद प्रसाद की अध्यक्षता एवं श्री अच्युतानंद मिश्र के मुख्य आतिथ्य में 'हिंदी के विविध रूप' विषय पर सर्वश्री अजयेंद्र नाथ त्रिवेदी, अखिलेश दुबे, करुणा पांडेय, उमेश कुमार सिंह, अमरनाथ शर्मा, राजेंद्र प्रसाद पांडेय, तात्याना ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री सत्यदेव त्रिपाठी व श्री वसिष्ठ अनूप ने तथा धन्यवाद श्री महेश्वर मिश्र ने ज्ञापित किया। द्वितीय सत्र में श्री अनंत मिश्र की अध्यक्षता में 'व्याकरण और वर्तनी' विषय पर सर्वश्री सुभद्रा राठौर, विद्या केशव चिटको, रामप्रकाश कुशवाहा, प्रेमशीला शुक्ला, विद्या विंदु सिंह, प्रभाकर मिश्र, अवधेश प्रधान, चितरंजन मिश्र ने अपने विचार व्यक्त किए। अंत में श्री हरीराम द्विवेदी की अध्यक्षता में काव्य-संध्या का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री सिद्धनाथ शर्मा, वशिष्ठ अनूप, अशोक कुमार 'घायल', सुरेंद्र वाजपेयी, विद्या विंदु सिंह, करुण पांडेय, रामौतार पांडेय, सपना सिंह, दीपंकर भट्टाचार्य, अलकबीर, पवन कुमार, दीपक कुमार, शंभूनाथ श्रीवास्तव, कुँवर सिंह, करुण सिंह, नरोत्तम सिंह, सुरेंद्र वाजपेयी, परमानंद आनंद ने काव्य पाठ किया। संचालन श्री जितेंद्र नाथ मिश्र ने किया।

द्वितीय दिवस सर्वश्री श्रीराम परिहार को 'विद्यानिवास मिश्र स्मृति सम्मान', अनिरुद्ध त्रिपाठी 'अशेष' को 'लोक कवि सम्मान', विभा पांडेय को 'राधिका देवी लोककला सम्मान' एवं हिमांशु उपाध्याय को 'श्रीकृष्ण तिवारी स्मृति गीतकार सम्मान' से सम्मानित किया गया। इसके पश्चात् डॉ. सुनील कुमार मानस द्वारा संपादित पत्रिका 'आलोचन दृष्टि' एवं 'नागरी संगम' का लोकार्पण किया गया। तृतीय सत्र में श्री गंगाप्रसाद विमल की अध्यक्षता में 'हिंदी को समृद्ध करने की चुनौती' विषय पर सर्वश्री सुरेंद्र सिंह, आशुतोष सिंह, भारती गोरे, अवधेश शुक्ल, हरिसिंह पाल, सिद्धांत, मिलेना ब्रोतोएवां ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री प्रकाश ने किया। समापन सत्र में प्रो. त्रिभुवन कुमार शुक्ल की अध्यक्षता में 'अहिंदी भाषा-भाषी क्षेत्र में हिंदी और प्रभार की चुनौतियाँ, अन्य भाषाओं से संबंध और विश्व हिंदी' विषय पर सर्वश्री अनीता पंडा, आरती स्मित, बलिराज पांडेय, विष्णु कुमार राय, बृजेंद्र त्रिपाठी, विजयशंकर शुक्ल, आनंदवर्धन शर्मा, कमलेश दत्त त्रिपाठी ने अपने विचार व्यक्त किए। धन्यवाद श्री माहेश्वर मिश्र ने ज्ञापित किया। ☐

डॉ. शंकरदयाल सिंह की जयंती आयोजित

२७ दिसंबर को पटना के शास्त्री नगर में पारिजात साहित्य परिषद् के तत्त्वावधान में डॉ. शंकरदयाल सिंह की जयंती समारोह का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री रामवृक्ष प्रसाद, रूपेश दिग्विजय, संजीव कुमार वियोगी, भार्गवी, अमरनाथ पाराशर, राजीव रंजन, पुष्पा कुमारी, रेणु कुमारी, श्रेयसी स्वराज ने श्रद्धांजलि अर्पित की। ☐

राष्ट्रीय एकता कवि-सम्मेलन संपन्न

२६ दिसंबर को हैदराबाद की 'गीत चाँदनी' संस्था के तत्त्वावधान में श्री अटल बिहारी वाजपेयी के ९३वें जन्मदिवस पर श्री नेहपाल सिंह वर्मा की अध्यक्षता में ३८वाँ राष्ट्रीय एकता कवि सम्मेलन आयोजित किया गया, जिसके मुख्य अतिथि डॉ. भगवंत राव एवं विशिष्ट अतिथि सर्वश्री परमानंद बंसल, गोविंद राठी, गुणवंत राव, एस. राजन कुमार, राजेंद्र साँकला, नटराज, नरसिम्हा थे। इस अवसर पर मंचस्थ अतिथियों सहित आगत कवियों ने काव्य पाठ किया। संचालन श्री गोविंद अक्षय ने किया तथा धन्यवाद सुश्री रत्नकला मिश्र ने ज्ञापित किया। ☐

महामना मालवीय जयंती मनाई गई

विगत दिनों नई दिल्ली में हिंदी भवन एवं दिल्ली हिंदी साहित्य सम्मेलन के संयुक्त तत्त्वावधान में श्री रमाकांत गोस्वामी की अध्यक्षता में महामना मदनमोहन मालवीय की जयंती मनाई गई, जिसमें सर्वश्री हरिशंकर सिंह, महेशचंद्र शर्मा, इंदिरा मोहन, गोविंद व्यास, मंजू गुप्ता ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. रवि शर्मा 'मधुप' ने किया। ☐

वार्षिक महोत्सव संपन्न

२५ दिसंबर को इलाहाबाद में प्रकृति-सरंक्षण-मंच 'साहित्यांजलि प्रज्योदि' द्वारा प्रयाग में प्रो. विमला व्यास की अध्यक्षता एवं प्रो. कृष्णगोपाल श्रीवास्तव के मुख्य आतिथ्य में 'प्रकृति से 'परा-प्रकृति' की ओर' वार्षिक महोत्सव का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री बी.आर. वर्मा, पृथ्वीनाथ पांडेय, दयाराम मौर्य, विंध्याचल सिंह, अमरनाथ झा, रवि मिश्र, सुनील मिश्र, गुड्डु पंडा, अवनेंद्र पांडेय 'रसराज' ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर श्रीमती स्नेह भारती को 'काव्यभारती सम्मान', श्री शिवमूर्ति सिंह को 'साहित्य भारती सम्मान', श्रीमती ज्योतिर्मयी श्रीवास्तव को 'श्रीमती सविता मुखर्जी स्मृति काव्यश्री सम्मान', श्री सतीश चंद्र शास्त्री को 'खुसिहाल बहादुर सिंह शब्दश्री सम्मान' से सम्मानित किया गया। संयोजन श्रीमती ज्योति चित्रांशी ने किया तथा संचालन डॉ. प्रदीप चित्रांशी ने किया। इस अवसर पर 'राष्ट्रीय कवि सम्मेलन' भी संपन्न हुआ। संचालन डॉ. रवि मिश्र ने किया तथा आभार श्री अनिल सिंह 'शलभ' ने व्यक्त किया। ☐

सन्निधि संगोष्ठी संपन्न

२३ दिसंबर को नई दिल्ली में गांधी हिंदुस्तानी साहित्य सभा में डॉ. कमलेश चंद्र पाठक की अध्यक्षता में काकासाहेब कालेलकर एवं विष्णु प्रभाकर की स्मृति में सन्निधि संगोष्ठी आयोजित की गई, जिसके मुख्य अतिथि श्री राजकिशोर एवं विशिष्ट अतिथि सर्वश्री नीरज पाठक, ब्रजेंद्र त्रिपाठी व गुरुचरण बिंदल थे। इस अवसर पर सर्वश्री ओमप्रकाश दुबे को 'काकासाहेब कालेलकर समाज सेवा सम्मान', संतोष दुबे को 'काकासाहेब कालेलकर पत्रकारिता सम्मान', कुमार शुभाशीष को 'काकासाहेब कालेलकर कला-संगीत सम्मान', स्वामी सिंह को 'काकासाहेब कालेलकर समाज सेवा सम्मान', स्वामी शाकंभरी को 'काकासाहेब कालेलकर साहित्य सम्मान' से सम्मानित किया गया। ☐

काव्य गोष्ठी संपन्न

विगत दिनों राजसमंद (राजस्थान) में श्री नगेंद्र कुमार मेहता की अध्यक्षता, श्री राधारमण सनाढ्य के मुख्य आतिथ्य, श्री राजेंद्र सोमानी के विशिष्ट आतिथ्य एवं श्री प्रमोद सनाढ्य के आतिथ्य में साहित्यकार

परिषद् काँकरोली की मासिक काव्य गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री अफजल खाँ अफजल, इलियास मोहम्मद, कमर मेवाड़ी, जवानसिंह सिसोदिया, किशन कबीरा, माधव नागदा, भँवरलाल पालीवाल 'बॉस', मुरलीधर कनेरिया, शेख अब्दुल हमीद ने अपने विचार व्यक्त किए। □

संगोष्ठी संपन्न

१४ जनवरी को नई दिल्ली के प्रगति मैदान में आयोजित विश्व पुस्तक मेले में प्रो. (डॉ.) एम.एस. परमार की अध्यक्षता में कुशाभाऊ ठाकरे पत्रकारिता एवं जनसंचार विश्वविद्यालय द्वारा 'मूल्यानुगत मीडिया : समय की आवश्यकता' विषय पर संगोष्ठी आयोजित की गई, जिसमें सर्वश्री एन.के. सिंह, बल्देव भाई शर्मा, सच्चिदानंद जोशी, के.जी. सुरेश, आशीष जोशी, आनंद पांडेय ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. शाहिद अली ने किया। □

प्रविष्टियाँ आमंत्रित

विगत दिनों रायपुर के नवरंग काव्य मंच पर राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न आयु वर्ग में कविता लेखन को प्रोत्साहित करने हेतु काव्य लेखन प्रतियोगिता का आयोजन किया गया, जिसके अंतर्गत कोई भी नवोदित लेखक हिंदी की स्वलिखित, मौलिक कविता किसी भी रस—हास्य, व्यंग्य, शृंगार, वीर, करुण एवं काव्य की किसी भी विधा—गीत, गजल, छंद, तुकांत में लगभग २५० शब्दों में ३१ मार्च, २०१८ तक काव्यालय, कवि राजेश जैन राही, आई-१, राजीव नगर, पोस्ट-शंकर नगर, रायपुर-४९२००७ (छ.ग.) पते पर भेज सकते हैं। □

जयंती समारोह संपन्न

९ जनवरी को झाँसी के राजकीय संग्रहालय में पद्मभूषण डॉ. वृंदावनलाल वर्मा की १२९वीं जयंती के अवसर पर मुख्य अतिथि श्री पी.के. अग्रवाल, विशिष्ट अतिथि श्री हरगोविंद कुशवाहा एवं सर्वश्री लक्ष्मीकांत वर्मा, रमाकांत वर्मा, मधुर वर्मा, जगदीश खरे, नीति शास्त्री, जानकीशरण वर्मा ने अपने विचार व्यक्त किए।

१० जनवरी को झाँसी के मंडल रेल प्रबंधक कार्यालय में डॉ. वृंदावनलाल वर्मा की जयंती मंडल रेल प्रबंधक के मुख्य आतिथ्य में आयोजित की गई, जिसमें सर्वश्री जगदीश खरे, लक्ष्मीकांत वर्मा, रमाकांत वर्मा ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री एम.एम. भटनागर ने किया। □

विमर्श कार्यक्रम संपन्न

२-३ जनवरी को भोपाल में साहित्य अकादेमी के तत्त्वावधान में राज्य संग्रहालय के सभागार में आयोजित राष्ट्रीय विमर्श कार्यक्रम के उद्घाटन सत्र में 'साहित्यिक पत्रिकाएँ और राष्ट्र धर्म' विषय पर सर्वश्री उमेश कुमार सिंह, मनोज कुमार श्रीवास्तव, हरीश नवल, इंदुशेखर तत्पुरुष ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री अंबिका गुप्त ने किया। डॉ. श्रीराम परिहार की अध्यक्षता में आयोजित द्वितीय सत्र में 'भाषाओं का साहित्य में अंतर्संबंध' विषय पर सर्वश्री आशीष कंधवे, राजुरकर राज, अमिता दुबे, अश्विनी शुक्ल, कमल प्रेमचंदानी ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. राजेश श्रीवास्तव ने किया। श्री के.सी. पंत की अध्यक्षता में आयोजित तृतीय सत्र में 'वैश्विक परिवेश में संपादक की भूमिका' विषय पर सर्वश्री जगदीश किंजल्क, अरुण तिवारी, नुसरत मेंहदी, गिरीश पंकज, राकेश शर्मा वीणा, जवाहर कर्णावत, पद्मकांत शर्मा, सत्यनारायण व्यास ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री महेश सक्सेना ने किया। अंतिम सत्र में श्री श्रीधर पराड़कर की अध्यक्षता में 'भारतीय संस्कृति दृष्टि और साहित्यिक पत्रिकाएँ' विषय में सर्वश्री सुधीर शर्मा, गोरखनाथ तिवारी, अश्विन खरे ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर श्री अनिल श्रीवास्तव की कृति 'ठगे हुए सब गाँव' एवं सुश्री अपर्णा बादल की कृति 'भारतीय नाट्यकला : एक परिचय' का लोकार्पण किया गया। संचालन श्रीमती सुनीता खत्री ने किया। □

श्री भगवती प्रसाद देवपुरा स्मृति समारोह संपन्न

५-६ जनवरी को नाथद्वारा में 'साहित्य मंडल' द्वारा दो दिवसीय श्री भगवती प्रसाद देवपुरा स्मृति समारोह आयोजित किया गया। उद्घाटन सत्र में स्व. भगवती प्रसाद देवपुराजी पर केंद्रित आलेख पढ़े गए। मंचस्थ अतिथियों द्वारा संस्था की त्रैमासिक पत्रिका 'हरसिंगार' का विमोचन किया गया। इसके बाद सर्वश्री भगवती प्रसाद गौतम को 'श्री रणछोड़लाल ठक्कर स्मृति सम्मान-२०१८', नरेंद्र श्रीवास्तव 'नवनीत' को 'श्रीमती लक्ष्मीदेवी ठक्कर स्मृति सम्मान-२०१८', गुलाब मीरचंदानी को 'श्रीमती केसरदेवी जानी स्मृति सम्मान-२०१८', सुखबीर सिंह चौहान को 'श्रीमती शशिकला मेहता स्मृति सम्मान-२०१८', गरिमा श्रीवास्तव को 'श्रीमती गंगादेवी अवस्थी स्मृति सम्मान-२०१७' से सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें शॉल, उत्तरीय, कंठहार, श्रीफल, श्रीनाथजी का प्रसाद, मेवाड़ी पगड़ी, श्रीनाथजी की छवि व अभिनंदन पत्र के साथ दो हजार एक सौ रुपए भेंट किए गए। इस अवसर पर डॉ. उमेश प्रसाद दाश ने 'अनेक पहलू—एक व्यक्तित्व श्री देवपुरा' एवं श्री ओम उपाध्याय ने 'हिंदी यथार्थ के समानांतर श्री देवपुरा' विषय पर अपने विचार व्यक्त किए। सर्वश्री लालजीसहाय श्रीवास्तव, दीनदयाल तिवारी 'बेताल', यशवंत दीक्षित, बिशन सागर, देवीप्रसाद गौड़, विजय राठौड़, मेजर शक्तिराज, प्रह्लाद पारीक को 'काव्य कलाधर' की मानद उपाधि से विभूषित किया गया। डॉ. मनोहरदास अग्रावत व श्री राजेंद्र कुमार सेठिया को उनके साहित्यिक एवं सामाजिक योगदान के लिए सम्मानित किया गया। तृतीय सत्र की अध्यक्षता श्री विट्ठल पारीक ने की। मुख्य अतिथि श्री रामेश्वर शर्मा 'रामू भैया' एवं विशिष्ट अतिथि सर्वश्री गाफिल स्वामी, प्रमिला आर्य, रेखा लोढ़ा 'स्मित', आशा पांडे ओझा, सुनीता शानु, मधु अग्रवाल थे। इस अवसर पर सर्वश्री सुनीता मिश्रा 'सुनीत', नेहा, सुषमा भंडारी, सावित्री रायजादा, चंद्रा सायता, सुधा चौहान को 'काव्य कुसुम' एवं महेश कुमार मधुकर, सत्यप्रकाश भारद्वाज, इसहाक अली 'सुंदर', इंदु पाराशर, सुनीता शानु, प्रमिला आर्य को 'काव्य कौस्तुभ' की मानद उपाधि से विभूषित किया गया। संचालन श्री विट्ठल पारीक व श्री श्याम प्रकाश देवपुरा ने किया। अंत में कवि सम्मेलन भी आयोजित

किया गया, जिसमें लगभग ७० कवियों ने काव्य पाठ किया। संचालन श्री प्रह्लाद पारीक ने किया।

द्वितीय दिवस का कार्यक्रम डॉ. विजय कुलश्रेष्ठ की अध्यक्षता, श्री शिवनारायण शर्मा के मुख्य आतिथ्य एवं सर्वश्री अशोक पंड्या, राधेगोविंद पाठक, ललित शर्मा, भगवती प्रसाद गौतम, काशीलाल शर्मा व रघुनाथ सहाय मिश्र 'सहज' के विशिष्ट आतिथ्य में संपन्न हुआ। इस अवसर पर सर्वश्री यशकुमार ढाका, विजय तन्हा, जगदीशप्रसाद गौड़, प्रह्लाद गोस्वामी 'मानसहंस', रजनी सिंह को 'संपादक श्री' की मानद उपाधि एवं योगेंद्रपाल दत्त, हरमोहनदास नेमा 'हरि', ओम उपाध्याय, नयनकुमार राठी, राजकुमार आर. यादव, शशि पांडेय, उर्मिला शर्मा, अंजुल कंसल 'कनुप्रिया' को 'साहित्य सौरभ' की मानद उपाधि से विभूषित किया गया। श्री रामेश्वर शर्मा 'रामू भैया' द्वारा रचित 'लोकयशी महनीय महापुरुष श्री भगवतीप्रसाद देवपुरा कीर्ति कुसुमावली', राष्ट्रीय हिंदी मासिक पत्रिका 'टू मीडिया' के जनवरी-२०१८ अंक का लोकार्पण किया गया। सर्वश्री उमेश प्रसाद दाश, दिनेश कनौजे, गोपाल सिंह सिसोदिया, बंशीधर बंधु, प्रतिभा रामकृष्ण श्रीवास्तव, सुवर्णा अ. जाधव, मीनाक्षी स्वामी, छाया त्रिवेदी, शशिकला सेन को 'साहित्य कुसुमाकर' की उपाधि दी गई। काव्यार्चन के अंतर्गत सर्वश्री रामेश्वर शर्मा 'रामू भैया', राधागोविंद पाठक, भगवती प्रसाद गौतम, इंद्रप्रकाश श्रीमाली, ललित शर्मा, अंजीव अंजुम ने आलेख वाचन किया। समापन सत्र पंडित मदन मोहन शास्त्री 'अविचल' की अध्यक्षता में हुआ। मुख्य अतिथि श्री सी.पी. अग्रवाल एवं विशिष्ट अतिथि सर्वश्री रामदेव दीक्षित, लक्ष्मीनारायण, दिनेश कोठारी, मंजु चतुर्वेदी, रेखा व्यास थे। इस अवसर पर पाँच हजार एक सौ रुपए की राशि से सर्वश्री सत्यनारायण समदानी को 'ब्रजकांता साहित्य सम्मान-२०१८', राधागोविंद पाठक को 'डॉ. विष्णु चंद्रपाठक सम्मान-२०१८', अनिल वर्मा 'मीत' को 'श्री रामस्वरूप सिंघल स्मृति सम्मान-२०१८', जमनालाल बायती को 'श्री रविंद्र गुर्जर स्मृति सम्मान-२०१८', यासमीन खान को 'श्री कुशल चंद जैन स्मृति सम्मान-२०१८' एवं तीन हजार एक सौ रुपए की राशि से अखिलेश निगम 'अखिल' को 'श्री कन्हैया लाल राठी सम्मान-२०१८', राकेश चक्र को 'श्रीमती कंचन बाई राठी स्मृति सम्मान-२०१८, बसव राजू एम को 'श्री ललित शंकर दीक्षित स्मृति सम्मान-२०१८' से सम्मानित किया गया। इन सभी को सम्मानस्वरूप शॉल, उत्तरीय, कंठहार, श्रीफल, श्रीनाथजी का प्रसाद, मेवाड़ी पगड़ी, श्रीनाथजी की छवि एवं सम्मान-पत्र प्रदान किया गया। सभी सत्रों का संचालन श्री श्याम प्रकाश देवपुरा एवं श्री विट्ठल पारीक ने किया। ☐

'महाभारत संवाद' प्रतिवेदन आयोजित

११-१३ दिंसबर को वर्धा के महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय में आयोजित त्रिदिवसीय 'महाभारत संवाद' कार्यक्रम के प्रथम दिवस प्रो. गिरीश्वर मिश्र की अध्यक्षता में 'महाभारत में जाति' विषय पर सर्वश्री शंभु गुप्त व विजय बहादुर सिंह ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. अमित राय ने किया। द्वितीय दिवस पर प्रो. कृष्ण कुमार सिंह की अध्यक्षता में प्रो. विजय बहादुर सिंह ने 'महाभारत में वर्ग-बोध' पर अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. राकेश मिश्र ने किया। तृतीय दिवस पर डॉ. शोभा पालीवाल की अध्यक्षता में 'महाभारत में जेंडर व स्त्री कथा' विषय पर प्रो. विजय बहादुर सिंह ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. अवंतिका शुक्ला ने किया तथा धन्यवाद प्रो. शंभु गुप्त ने किया। ☐

विचार गोष्ठी संपन्न

१२ जनवरी को रायपुर के कुशाभाऊ ठाकरे पत्रकारिता एवं जनसंचार विश्वविद्यालय में विश्ववंदनीय स्वामी विवेकानंद जयंती एवं राष्ट्रीय युवा दिवस के अवसर पर सर्वश्री एम.एस. परमार, प्रवीण मैसरी, अतुल कुमार ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन सुश्री पूनम तिवारी ने किया। ☐

गीत-गजल एवं काव्य-संध्या आयोजित

विगत दिनों फारबिसगंज बंगाली टोला स्थित साकेत भवन में इंद्रधनुष साहित्य परिषद् द्वारा श्री भोला पंडित 'प्रणयी' की अध्यक्षता में सर्वश्री मांगन मिश्र 'मार्तंड', हेमंत यादव, हर्ष नारायण दास, हशमत सिद्दिकी, बेगाना सारणवी, अनुज प्रभात, सुबुही फातमा, फुलेश्वर प्र. मोदी, राजू विद्यार्थी ने काव्य पाठ किया। संचालन श्री विनोद कुमार तिवारी ने किया। ☐

राष्ट्रीय संगोष्ठी संपन्न

१४ जनवरी को नई दिल्ली के प्रगति मैदान में आयोजित विश्व पुस्तक मेले के साहित्य मंच पर डॉ. एम.एस. परमार की अध्यक्षता में कुशाभाऊ ठाकरे पत्रकारिता एवं जनसंचार विश्वविद्यालय द्वारा राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के सहयोग से 'मूल्यानुगत मीडिया : समय की आवश्यकता' विषय पर राष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित की गई, जिसमें सर्वश्री के.जी. सुरेश, एन.के. सिंह, बल्देव भाई शर्मा, सच्चिदानंद जोशी, आशीष जोशी, आनंद पांडेय ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री शाहिद अली ने किया तथा आभार डॉ. अतुल कुमार तिवारी ने व्यक्त किया। ☐

आचार्य गोरेलाल जयंती संपन्न

विगत दिनों कानपुर के देवनगर में अवधी लोकनाट्य विशेषज्ञ व शिक्षाविद् आचार्य गोरेलाल त्रिपाठी का ९३वाँ जन्मदिवस समारोह आयोजित किया गया, जिसमें सर्वश्री प्रवीन गुगनानी, सुरेंद्र नाथ त्रिपाठी, एम.एल. अग्रवाल, पुरुषोत्तम वाजपेयी ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर सर्वश्री रमाशंकर मिश्र 'जनक', नारायणी शुक्ला, सुखस्वरूप शुक्ल, सुरेश गुप्त 'राजहंस', जयराम सिंह 'जय', सुभाष मिश्र, कन्हैयालाल वाजपेयी, दिग्विजय सिंह, लालजी वाजपेयी, कमल मुसद्दी, गिरिजाशंकर मिश्र को मानपत्र, उत्तरीय, पुष्पहार, प्रतीक-चिह्न से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर काव्य गोष्ठी आयोजित की गई, जिसमें सर्वश्री दयानंद सिंह 'अटल', मधु प्रधान, दिनेश 'नीरज', अखिलेश चंद्र शुक्ल, लालजी वाजपेयी, कुमल मुसद्दी, हरिप्रकाश वाजपेयी 'अकेला', रामलाल शुक्ल व राजेंद्र तिवारी ने भाग लिया। संचालन श्री भारत संजर ने किया। आभार डॉ. विजय प्रकाश श्री वीरेंद्र त्रिपाठी ने ज्ञापित किया। ☐

अंतरराष्ट्रीय शोध संगोष्ठी संपन्न

४-५ नवंबर को पीलीभीत के उपाधि महाविद्यालय में डॉ. रामशरण मिश्र की अध्यक्षता में अंतरराष्ट्रीय शोध संगोष्ठी शुरू हुई, जिसमें सर्वश्री सूर्यप्रसाद दीक्षित, वेदप्रकाश बटुक, आर.पी. सिंह ने अपने विचार व्यक्त किए। डॉ. वीनारानी गुप्ता द्वारा संपादित 'नवपल्लव' पत्रिका का विमोचन किया गया। संचालन डॉ. प्रणव शास्त्री ने किया। द्वितीय सत्र में प्रो. बाबूराम की अध्यक्षता में 'वैश्वीकरण और हिंदी' विषय पर सर्वश्री पवन अग्रवाल, प्रज्ञा तिवारी, ज्योति सिंह, अरुण चतुर्वेदी, राहुल अवस्थी, मनुप्रताप ने अपने शोधपत्रों का वाचन किया। संचालन डॉ. बलजीत श्रीवास्तव ने किया। सायंकाल में सरस कवि-सम्मेलन हुआ। द्वितीय दिवस डॉ. संदीप लोटलीकर की अध्यक्षता में आयोजित प्रथम सत्र में सर्वश्री के. श्रीलता, मनोज पांडेय, मुकेश चंद्र गुप्ता, अनिल कुमार विश्वकर्मा, विजयकुमार वर्मा ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. राजेशचंद्र पांडेय ने किया। समापन सत्र में सर्वश्री मुरलीमनोहर अग्रवाल, लता चौहान, रामशरण मिश्र, विष्णु सरवदे, नीरा गर्ग, शिवकुमार शर्मा ने अपने विचार व्यक्त किए। अंत में संयोजक-संचालक डॉ. प्रणव शास्त्री ने आभार व्यक्त किया। □

रचना-पाठ व संगोष्ठी संपन्न

१४ जनवरी को इंदौर में क्षितिज संस्था द्वारा डॉ. वसुधा गाडगिल के निवास पर श्री नंदकिशोर बर्वे की अध्यक्षता में लघुकथा के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान के लिए सर्वश्री सतीश राठी, अखिलेश शर्मा, अशोक शर्मा ने श्री संतोष सुपेकर को 'क्षितिज लघुकथा समग्र सम्मान-२०१८' से सम्मानित किया। सम्मानस्वरूप उन्हें शॉल, श्रीफल, सम्मान-पत्र भेंट किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री पुरुषोत्तम दुबे, ब्रजेश कानूनगो, पद्मा सिंह, सतीश राठी, अशोक शर्मा भारती, रश्मी वागले, वसुधा गाडगिल, विनीता शर्मा, अखिलेश शर्मा, जितेंद्र गुप्ता, बी.आर. रामटेके, आशा वडनेरे, वैजयंती दाते, रमेशचंद्र, राममूरत राही, आभा निवसरकर, अश्विनी कुमार दुबे, कविता वर्मा ने रचना पाठ किया। संचालन सुश्री वसुधा गाडगिल ने किया तथा आभार श्री विष्णु गाडगिल ने व्यक्त किया। □

सरल जन्मशती समारोह संपन्न

७ जनवरी को उज्जैन में सरल काव्यांजलि साहित्यिक संस्था द्वारा डॉ. हरीश प्रधान की अध्यक्षता एवं डॉ. मोहन गुप्त के मुख्य आतिथ्य में श्रीयुत् श्रीकृष्ण 'सरल' की जन्मशती आयोजित की गई, जिसमें सर्वश्री संजय नागर, उमेश महादोषी, शिव चौरसिया, शैलेंद्र कुमार शर्मा, नितिन पोल, पुष्पा चौरसिया ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर श्री संतोष सुपेकर द्वारा संपादित 'श्रीकृष्ण सरल विशेषांक' का विमोचन एवं श्री श्रीकृष्ण जोशी का सम्मान भी किया गया। संचालन श्री संतोष सुपेकर व श्री राजेंद्र देवधरे दर्पण ने किया तथा आभार श्री संजय जौहरी ने व्यक्त किया। □

'यादों में मनु शर्मा' कार्यक्रम संपन्न

५ जनवरी को इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र में प्रख्यात साहित्यकार स्व. श्री मनु शर्मा को उनके आत्मकथात्मक उपन्यास 'फेरीवाला रचनाकार' के जरिए उनके साहित्यिक योगदान के लिए याद किया गया, जिसमें केंद्रीय संस्कृति मंत्री डॉ. महेश शर्मा, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र के अध्यक्ष श्री रामबहादुर राय, वरिष्ठ पत्रकार सर्वश्री अच्युतानंद मिश्र, हेमंत शर्मा, संदीप देव ने अपने विचार व्यक्त किए। □

कवि गोष्ठी संपन्न

५ जनवरी को हैदराबाद में सिकंदराबाद स्थित श्रीमती विजया स्याल बाला के निवास स्थान पर श्री नेहपाल सिंह वर्मा की अध्यक्षता में गीत चाँदनी की ३५वें वर्ष की तीसरी कवि गोष्ठी सर्वश्री आगा सरोश, सैयद सलीमुल्ला हुसैनी, गुणवंत राव बिरादर, एस. राजन कुमार के विशिष्ट आतिथ्य में आयोजित की गई, जिसमें सर्वश्री कुमुद बाला, कुँजबिहारी गुप्ता, सुषमा बैद, दयाकृष्ण गोयल, दर्शन सिंह, एलिजबेथ कुरियन 'मोना', विकास सतपति, विज्जू शर्मा, तारा मालोदे, मदनलाल मरलेचा, जुगल बंग 'जुगल' नुसरत रेहाना आसिफ ने कविता पाठ किया। संचालन श्री गोविंद अक्षय ने किया तथा धन्यवाद सुश्री रत्नकला मिश्र ने किया। □

साहित्यिक क्षति

डॉ. बलदेव वंशी नहीं रहे

७ जनवरी को भाषा आंदोलन के प्रणेता डॉ. बलदेव वंशी का निधन हो गया। उनका जन्म १ जून, १९३८ को पाकिस्तान के मुल्तान शहर में हुआ था। ६ जनवरी को ही वे दिल्ली में चल रहे विश्व पुस्तक मेले में पर्यावरण संरक्षण के मुद्दे पर आयोजित संगोष्ठी में भाग लेने गए थे। उन्होंने अनेक कहानियाँ, कविताएँ और लेख लिखे; वे संत साहित्य अकादमी के संस्थापक अध्यक्ष के रूप में साहित्यिक चेतना जगाने हेतु देश भर में सक्रिय रहे। वे कबीर शिखर सम्मान, मलूक रत्न सम्मान, दादू शिखर सम्मान, महापंडित राहुल सांकृत्यायन पुरस्कार सहित अनेक प्रतिष्ठित सम्मानों से अलंकृत हुए।

डॉ. नंदकिशोर त्रिखा नहीं रहे

१५ जनवरी को नैशनल यूनियन ऑफ जर्नलिस्ट्स (इंडिया) के पूर्व राष्ट्रीय अध्यक्ष और नवभारत टाइम्स, लखनऊ के पूर्व संपादक डॉ. नंदकिशोर त्रिखा का निधन हो गया। वे ८२ वर्ष के थे। उनके परिवार में पत्नी और दो पुत्र हैं। वे पत्रकारिता अध्ययन और मीडिया कर्मचारी संगठनों में लंबे समय तक सक्रिय रहे। वे माखनलाल चतुर्वेदी पत्रकारिता विश्वविद्यालय के पत्रकारिता विभाग के प्रमुख भी रहे। उन्होंने पत्रकारिता पर कई पुस्तकें भी लिखीं।

साहित्य अमृत परिवार की ओर से दिवंगत आत्माओं को भावभीनी श्रद्धांजलि।